

प्रकाशक :
सम्मति प्रान्तीय,
मोहम्मदी प्रान्त.

प्रथम संस्करण १९
सन् १९५९
मुद्रण ३ (तीन रुपये)

मुद्रक :
भारतीय मुद्रण
प्रान्त.

प्रकाशक की ओर से

श्रद्धेय मुनि श्री लाभचन्द्र जी महाराज के शिक्षाप्रद दृष्टान्तों को पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करते हुए अत्यन्त प्रसन्नता एवं गौरव का अनुभव हो रहा है ।

संस्था से डघर कुछ अन्य प्रकाशन भी हुए हैं, इसी कारण से इस पुस्तक के प्रकाशन में कुछ विलम्ब हुआ है । फिर भी पुस्तक तैयार करने में शीघ्रता का पूर्ण ध्यान रखा गया है ।

आशा है, पाठक मुनि श्री जी के इन महत्त्वपूर्ण दृष्टान्तों से उचित धर्म-लाभ लेंगे और इस दिशा में हमें आगे बढ़ने का अवसर देंगे ।

प्रस्तुत पुस्तक की सहायतार्थ—

हमें १५००) गुप्तदान द्वारा व २७०) पालनपुर निवासी (पाहूवेरी) नानालाल फोनालाल की स्वर्गीय पत्नी मनहर देवी के स्मरणार्थ प्राप्त हुए हैं । अतः सहर्ष धन्यवाद है ।

भवदीय
सोनाराम जैन
मन्त्री
सन्मति ज्ञानपीठ, आगरा

सम्पादकीय

धनुष व कुलियों कापकण्ठ की महाराज हाथ लिये इन लघु हाथों को सम्पादित करके वा कुम्भभट्ट बाहर बायल प्रसन्नता हुई। कुलियों की भी बायल किछी निर्भय व लज्जा की थी। इनका प्रसन्न प्रसार वे दृष्टांत हैं।

अस्तुत दुष्टात्मा मायम् को एक रात की राह पर बसाने में अपना योगदान देवी श्रीगणेश के बिचारों से एक नई आन्ति देव करेगी । हमें कोई संशय नहीं है ।

पुस्तक में 'पुन' भी है और 'पुन' भी । वह पाठक का अपना भाव है कि वह पुनो का अधिकारी है या नहीं । कहिले में ही इस सम्बन्ध में पुन ही कहा करे और स्वयं भी पुनो की सुझाव से प्रभावित होवे और समाज को भी करे ।

हो सकता है कि कुछ व्यवसायिक एवं स्वार्थी लोगों के मन के बिजाए न ऊपर और इनको व्यर्थ हो समझे, तो ऐसे लोगों के विरुद्ध निरपराध ही के 'दूब' है और वे कुल के स्वार्थ पर कुल के ही वर्णन कर सकते हैं।

पुस्तक को इसी वास्तुशास्त्र के प्रारम्भ में पाठकों के हाथों तक पहुँचाने का विचार वा प्रयत्न हो रहा है कि विशेष परिस्थिति में ऐसा करने में बाधा न हो सके।

सम्पूर्ण पुस्तक बहुत ही कीमती है। जो सचता है सम्मान
तथा मुद्रण आदि में कोई कृति रह गई हो। यदि हमारे पास इस
सम्मान में अपने सम्पूर्ण गुणों के का बह करेंगे तो हमारा हार्द
स्वागत किया जायेगा और आशा की जायेगी कि यह संशोधन कर
दिया जायेगा।

मुनि श्री जी ने समाज को एक अमूल्य पुस्तक प्रदान की है। यदि संशोधन और भाषा पर ध्यान न देकर पाठक भाव पर अधिक ध्यान देंगे और पुस्तक लिखने के उद्देश्य को ध्यान में रखकर अधिक से अधिक शिक्षा ग्रहण करेंगे तो पूर्ण विश्वास है कि उनको 'फूल' ही दृष्टिगोचर होंगे। यदि ऐसा हुआ तो मुनि श्री जी का यह शुभ प्रयत्न सफल होगा और मुनि श्री जी भविष्य में भी अपनी सुन्दर कृतियों से समाज को लाभान्वित करते रहेंगे, जैसी कि हमें उनसे पूर्ण आशा है।

विनीत—

आर० डी० शर्मा, 'साहित्य', 'प्रभाकर'

एक आदर्शमय जीवन

जिन्होंने देखी बना, जिन्हां रहे मिलघर तू
कब न हो दुनिया में तू दुनिया को छोड़ै काम तू ।

बाल्य

अर्द्धशतक मुनि श्री माधवराज जी महाराज का जन्म संवत् १६१ में हुआ था । आपके पिता का नाम भाकुपाल व माता का नाम प्यारीबाई था ।

आपके बचपन में बाल्यावस्था से ही धार्मिक विचार प्रभुत्व होने लगे थे और निरंतर प्रतिदिन आपका स्वभाव धार्मिक कृत्यों की ओर बड़ा ही जाता था ।

साढ़े साठ वर्ष की आयु में ही आप स्वाधिरपद विद्वपित शीघ्र ही सम्मान की महाराज की सेवा में पधारे, जब कि वे पञ्चम घण्ट में ही विराजमान थे । पुत्र श्री कृष्णराज जी महाराज की उम्र छह वर्ष की थी । इन वर्षों की आयु में ही गुरुदेव की सेवा में पूर्ण समर्पण का कार्य प्रारम्भ कर दिया ।

दीक्षा

मुनिजी जी का दीक्षा संवत् १६६२ में होकर पं मुनि जी की बाल्यमय की महा त्रय छक्का २७ की अवस्थिति में हुई और आपके नाम एक माई और दो बहने और भी दीक्षित हुए थे । आपने अर्द्धशत की कृष्णराज जी महाराज के सुधिये व मुनि जी हठाधिपति जी महाराज की अपना दीक्षा पुन स्वीकार किया ।

अध्ययन .

आपने हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, उर्दू आदि अनेक भारतीय भाषाओं तथा जैन शास्त्रों का समुचित रूप से अध्ययन किया और अपने इस मचित ज्ञान से समाज को यथाशक्ति लाभान्वित किया ।

प्रदेश विहार

आपने मालवा, मेवाड़, मागवाड़, गुजरात, काठियावाड़, पंजाब, उत्तर-प्रदेश, मध्य-प्रदेश, बंगाल, बिहार, बिन्ध्याचल, आन्ध्र प्रदेश, नेपाल, कर्नाटक और मद्रास आदि विभिन्न प्रदेशों में विस्तृत विहार किया और वहाँ की जनता को अपने सदुपदेशों से समुचित लाभ दिया और उनको सन्मार्ग पर बढ चलने के लिए प्रेरित किया ।

अन्य महत्वपूर्ण कार्य

आप पंडित मुनि श्री प्रतापमल जी महाराज तथा ५० मुनि श्री हीरालाल जी के साथ सन् १९५५ में कलकत्ता चतुर्मास के पश्चात् पधारे । वहाँ दिनांक २६-१२-५५ से मारवाड़ी सम्मेलन प्रारम्भ हो रहा था, जिसमें लगभग ८० हजार मारवाड़ी भाई एकत्रित हुए थे ।

सम्मेलन के अध्यक्ष एवं जनता द्वारा विनती करने पर मुनि श्री जी ने वहाँ पर “गोश्रक्षा एवं जैन-धर्म” विषय पर प्रभावशाली प्रवचन किया । वहाँ उपस्थित जनता पर मुनिश्री जी के प्रवचन का बहुत ही प्रभाव पडा और सब ने मुनिश्री जी की मुक्त कंठ से प्रशंसा की ।

सम्मेलन के अध्यक्ष महोदय ने मुनि श्री जी का आभार प्रदर्शित करते हुए कहा कि उन्हें यह पूर्ण विश्वास हो गया है कि जैन-धर्म में गाय को बहुत महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है, जब कि अन्य व्यक्ति इसके विपरीत समझते हैं ।

आज से लगभग ढाई हजार वर्ष पूर्व बंगाल और बिहार में भगवान् महावीर स्वामी ने यात्रा की थी और जनता में धर्म-प्रचार किया था ।

महावीर स्वामी के उपर्युक्त से एक लाख अनगठ हजार श्रमिकों के सर्व्व
जीन-धर्म स्वीकार किया था ।

समयानु महावीर स्वामी के निर्वाण के परवान् जब उत्तर-भारत
में १२ वर्षोंके पुण्यात् पड़ा तो महावानु स्वामी धामि सभी उत्त बलिष्ठ
की घोर बने बने घोर बहुत समय उत्तर-भारत में तक जीन मुनियों का
आवागमन नहीं हो सका । इसी कारण से वहाँ के आसकमल धर्म धर्म
को कुनते बने बने ।

प्राचीन पुराणी में वैदिक धर्म के प्रचारक श्री यज्ञधर्म ने ब्रह्म
धर्म को कभीरु धर्म पहुँचाई और जीन-धर्म के भी हस्तक्षेप किया ।
जीनधर्मों की विद्या एवं विवेकपूर्ण बुद्धि के कारण सीमास्थ से जीन-धर्म
को कोई क्षति नहीं पहुँची । फिर भी उत्तर-भूमि व सीमान में बहुत से
आसक ईश्वर हो दये और 'आसक' धर्म का प्रचार होकर 'सराक'
धर्म रह गया । समाज विहार और कड़ीका में इन सराक धर्मों की
तत्त्वा एक मात्र में ही धर्मिक है । वे लोग सब भी बलिष्ठ धर्मिक एवं
महानुभ धामि का प्रवेश नहीं करते हैं । मुनि श्री श्री के कनेक बाँवों में
आकर सराक धर्मों को जीन धर्म का सर्व्वधुवाया और उन लोगों
पर महाश्रम श्री श्री के महाश्रम प्रवचनों का लाभप्रद प्रचार पड़ा ।
विहार के राज्यपाल को कल्पेय

सन् १८१६ में अरिवा का अनुमति समाप्त कर मुनि श्री श्री कथा
होने हुए राजापुर पधारे । वहाँ पर महाश्रम श्री श्री श्री ब्रह्मनगराष्ट
निर्धन कुमार (प्राइवेट लिमिटेड) के बोधाय में विरामे से ।

विहार प्रदेश के राज्यपाल श्री मार मार विचारकर मुनि श्री श्री
के आश्रमन की पुनरा आकर बर्षावर्ष पधारे । मुनि श्री श्री से अहिंसा
और संगठन धामि विषयी पर लक्ष्य एक बने तक बर्षावर्ष किया ।
आज ही महाश्रम श्री से महावानु महावीर स्वामी के अन्त-स्थान ईशानी
में पधारने का आह्वान भी किया ।

वैशाली में महावीर जयन्ती :

राज्यपाल एवं वैशाली सभ की अत्यन्त आग्रहपूर्ण विनती को मुनि श्री जी ने स्वीकार किया और वहाँ पधारे। वहाँ पर पिछले १५ वर्षों से बिहार राज्य की ओर से महावीर जयन्ती मनाई जाती है और इस जयन्ती में ही भाग लेने के लिए निकट के स्थानों से लगभग दो लाख व्यक्ति एकत्रित हुए थे। मुनि श्री जी ने “भगवान् महावीर की विश्व को देने” विषय पर प्रवचन किया और राज्यपाल महोदय ने भी अहिंसा के सम्बन्ध में भाषण दिया।

वैशाली के निकट हिंसा को रोकना

वैशाली के निकट लगभग तीन मील की दूरी पर वासुकुण्ड गाँव में, जहाँ कि भगवान् महावीर का जन्म हुआ था, राष्ट्रपति डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने स्मृति चिन्ह के रूप में एक बहुत बड़ी शिला स्थापित कर दी है। उसके निकट ही एक देवी का स्थान है, जहाँ प्रतिवर्ष नवरात्रि के अवसर पर लगभग डेढ़ हजार बकरे कटते हैं। मुनि श्री जी ने इस हिंसा के कार्य को रोकने के लिए गाँव गाँव बिहार किया और जनता को अहिंसा का उद्देश्य समझाया। मुनि श्री जी के उपदेश से प्रभावित होकर वहाँ की जनता ने भविष्य में हिंसा को त्यागने का आश्वासन दिया।

प्राकृत जैन विद्यापीठ में

महाराज श्री जी वैशाली से मुजफ्फरपुर पधारे। वहाँ पर राज्य की ओर से एक प्राकृत जैन-विद्यापीठ चल रही है। विद्यापीठ में एम० ए० के विद्यार्थी प्राकृत भाषा का अध्ययन करते हैं। मुनि श्री जी ने वहाँ पर “महावीर का अनेकान्तवाद” विषय पर सुन्दर प्रवचन किया।

नेपाल की बिहार यात्रा

मुनि श्री मुजफ्फरपुर से सितामढ़ी पधारे और वहाँ से छ मील

रा बबहूर अफ़्ग़ानी रास्ता बार कर बीरपंज पचारे । बहु नीपास का एक बड़ा सहर है । यहाँ से नीपास की राजधानी काठ्याहू पचारे ।

बुद्ध-बयली वर धर्हिता का लोचन :

काठ्याहू से नवबान् बुद्ध की २२ १ की बयली बनाई गई जिनमें महाराज भी भी ने महावीर और बुद्ध की धर्हिता का बनाने कर बुद्ध धर्हिता का विष्कर्षण करवा और वहाँ की बनता को अपने मुन्वर बनचन से बहुत ही प्रभावित किया । १२ वर्ष के अपने समय में स्वानक बाहियों में युनि भी भी ऐसे लोठ हैं जो कि प्रथम बार नीपास पचारे और वहाँ वर्ष लोचन दिया ।

नीपास में धर्हिता सम्मेलन :

महाराज भी भी की प्रेरणा से हि १८९-१९० की धर्हिता सम्मेलन बुझाया गया । जिसमें तीन बीछ और विचारियों की ओर से अनेक प्रतिनिधियों ने भाग लिया । नीपास के हिन्दी व नीपासी पक्षों ने अपने मन की सकलता को बहुत ही प्रदर्शना की । बहु सम्मेलन नीपास के इतिहास में अपने प्रकार का सर्व प्रथम था ।

प्रधान मंत्री के जर्जा

नीपास के प्रधान मंत्री भी एक प्रचार याचार्थ युनि भी भी के वर्तमान यात्रे और विवर्ती करके महाराज भी भी को अपने निवास स्थान पर के बड़े बड़ा वर जर्जा बार्ना हुई ।

नीपास नरेश को उपलक्ष

विवाह २२ १ ११ को नीपास के वर्तमान महाराज महाराज की विराज को तीन-वर्ष की दिन विषय वर प्रबन्धन मुनावा जिससे वे बहुत ही प्रभावित हुए ।

मुजफ्फरपुर में सांस्कृतिक समारोह

मुजफ्फरपुर के सघ का विशेष आग्रह होने पर सन् १९५७ का चातुर्मास वहाँ करना स्वीकार कर लिया। मुनि श्री जी की प्रेरणा से वहाँ पर २५-८-५७ से ३-९ ५७ तक एक सांस्कृतिक समारोह मनाया गया। जिसमें जैन, बौद्ध, ईसाई, मुस्लिम, सिक्ख आदि प्रत्येक धर्म के विद्वानों ने भाग लिया। महाराज श्री जी ने वहाँ पर "अहिंसा एवं विश्व मैत्री" पर प्रवचन किया।

हैदराबाद का चातुर्मास

मुजफ्फरपुर से छपरा, आरा, सीतापुर आदि स्थानों पर भ्रमण करते हुए जबलपुर पधारे। जबलपुर में वापू के निधन दिवस पर नगर निगम के क्षेत्र में चलने वाले कट्टीखाने बन्द कराये।

जबलपुर से नागपुर होते हुए मुनि श्री जी हैदराबाद पधारे और वहाँ पर मुनि श्री हीरालाल श्री महाराज के दर्शन किये।

इस वर्ष आपका चातुर्मास वैगलौर में है। वहाँ पर मुनि श्री जी के प्रवचन से जनता बहुत धर्म-लाभ ले रही है।

मुनि श्री जी तीन वर्ष से वर्षितप कर रहे हैं और आप १८ महीनों से आमन भी नहीं करते हैं।

मुनि श्री जी के जीवन की यह सक्षिप्त भाँकी है। आशा है, पाठक उनके इस आदर्शमय एवं उन्नत जीवन से शिक्षा ग्रहण करेंगे और शिक्षाओं को ग्रहण करके सन्मार्ग पर बढ चलने की प्रेरणा लेंगे।

विषय-सूची



	विषय	पृष्ठ
१	विजयल गीर स्वर्ण-माल	१
२	माल-इ म	४
३	वर्ण-मुद्र	९
४	वर्ण-माला	१०
५	स्वर्ण-माला-पूर्वक प्रार्थना	१
६	वर्ण-माला	१२
७	वर्ण-माला गीर मुद्रा	१३
८	विजयल की उपासना	१४
९	वर्ण-माला का उपासना	१५
१०	पुष्पा-माला-पूर्वक	१६
११	पुष्पा की लम्बी उपासना	२१
१२	महापद्मी की उपासना	२३
१३	कला का अनुपम	२४
१४	पराधीनता	२५
१५	पराधीनता का अर्थ	१
१६	पराधीनता का अर्थ	२९
१	पराधीनता-माला	३४
१	पराधीनता-माला	३५
१८	पराधीनता के प्रति उपासना	३७
२	पराधीनता	३८

विषय	पृष्ठ
२१ आज्ञावागी निष्य	४२
२२ धार्मिक-समता	४४
२३ अतिथि-मन्कार	४६
२४ निष्पाप-भक्त	४८
२५ अगर तीन दिन की आयु बढ़ जाय !	५०
२६ आदेश-मैत्री	५२
२७ भगी की उदारता	५४
२८ मन्त्र की शान्ति	५६
२९ मिथ्याभिमान	५८
३० सन्त इब्राहिम का अस्त्यैय व्रत	६०
३१ पत्थर से भी सीख लो !	६२
३२ क्रोध ही चाटाल है	६४
३३ दयालु-हृदय	६६
३४ क्रोध का इलाज	६८
३५ योगेन्द्रनाथ का आत्म-त्याग	७०
३६ उन्नति की कुँजी	७२
३७ सत्य-निष्ठा	७४
३८ नियमित समय	७६
३९ लिकन की दयावृत्ति	७८
४० आत्म-विश्वास अजेय दुर्ग है	७९
४१ अजेय क्षप्तान की कर्तव्य-परायणता	८१
४२ निष्काम-सेवा	८३
४३ दूसरो की सेवा ही सच्ची साधना	८४
४४ गुरु का सम्मान	८६
४५ असन्तोष की दवा	८८

विषय

पृष्ठ

६३.	धनुकरछोन चरित्र	---	---	१ ५
६४	बाइस का जपानघर	---	---	१६
६७	क क्लीन और समय का भुत्प	---	---	१६२
६८.	बापानी महिला का देश-प्रेम	---	---	१६४
६९.	पद्मा चन्द्रिका की कथाएँ	---	---	१६९
१	पुत्र कथाएँ और संरक्ष	---	---	१६५
१ १	बाल की कथाएँ	---	---	२
१ २	पद्मा और बुद्ध	---	---	२ २
१ ३	दार्शनिक जीवन	---	---	२ ४
१ ४	पद्मा-बुद्ध और ईश्वर-निष्ठा	---	---	२ ६
१ ५.	पद्मा के प्रसंगोंपर	---	---	२ ७
१ ६	पद्मा का चरित्र बाल	---	---	२१
३	पद्मा के लिए लाल	---	---	२१२
१ ८.	ईश्वर के प्रति हृदय विरक्त	---	---	२१४
१ ९	महात्मा गांधी और पद्मा	---	---	२१६
११	जीवन का लक्ष्य विषय-वासन	---	---	२१
१११	पद्मा का मुन्हावन	---	---	२२
११	दुर्लभ-वैद्य बाल विद्या विद्या	---	---	२२४
१ ३	पद्मा मन्त्र और काम	---	---	२२६
११४	पद्मापद्मा पद्मा हृत्त और बापानुसी	---	---	२२
११५	पद्मा चन्द्रिका और बापानु-काम	---	---	२३
११६	पद्मापद्मा का बापानु-वासन	---	---	२३२
१	पद्मापद्मा-काम और बापानु-वासन	---	---	२३४
११	पद्मापद्मा की कथाएँ	---	---	२३६
११२	पद्मापद्मा और बापानु	---	---	२३७

	विषय	पृष्ठ
१२०	कालिदास और रूप	२३६
१२१	ईर्ष्यालु का कष्ट	२४०
१२२	पुत्री को पिता की सीख	२४१
१२३	प्रसन्नराय का स्वातन्त्र्य प्रेम	२४४
१२४	नेपोलियन का पक्ष-प्रेम	२४६
१२५	वस्तु का उचित उपयोग	२४८
१२६	प्रकाश की ओर	२५०
१२७	सच्ची सेवा	२५२
१२८	खुदा की सच्ची वन्दगी	२५४
१२९.	माता के प्रेमाश्रु	२५६
१३०.	परिश्रम और विनोद	२५८
१३१.	रानाडे का भाषा प्रेम	२६०
१३२	नौकरो की स्वामि भक्ति	२६२
१३३	काजी सिराजुद्दीन और बादशाह	२६४
१३४	प्रिंस एलबर्ट का मित्र-प्रेम	२६६
१३५	राजा जनक और विदेह	२६८
१३६	किसान और जन-सेवा	२७०
१३७	महान् बनने की कला	२७२
१३८	महारानी मेरी और ग्रामीण	२७४
१३९	बादशाह का आदर्श	२७६
१४०	पशु के प्रति भी प्रेम	२७७
१४१	भक्ति और रोग	२७९
१४२	सकट में भी धैर्य	२८२
१४३	स्वामी विवेकानन्द की दयालुता	२८४
१४४	नेहरू जी का स्वच्छता-प्रेम	२८६

	विषय	पृष्ठ
१५.	पशुकरकीर्तन चरित	१ ४
१६	ब्राह्मण का लयावरण	१६
१७	छेकनीन और समय का धुल	१६२
१८.	बापानी महिना का बैक-सैम	१६४
१९	पद्मा चन्द्रपिङ्ग की बहारता	१६९
१	सुख उबारस और ईश्वर	१६
१ १	काठ की कचमास	२
१ २	पद्मा और मुषक	१ १
१ ३	सारिषक जीवन	१ ४
१ ४	मालु-भूमि और ईश्वर-निष्ठ	१ ९
१ ५	कभीर के प्रलोत्तर	२ ४
१ ६	घामीन का लल्लुत भाव	२१
१ ७	सावित्रा के विष्ट त्वाध	२१५
१ ८.	ईश्वर के प्रति इष्ट विवसाव	२१४
१ ९	ब्रह्मा पद्मी और अमा	२१६
११	जीवन का लोन्वर्ध जीवन-वासन	२१

	विषय	पृष्ठ
१२०	कानिदास और रूप	२३६
१२१	ईर्ष्यालु का वृष्ट	२४०
१२२	पुत्री को पिता की सीख	२४१
१२३	प्रसन्नराय का स्वातन्त्र्य प्रेम	२४४
१२४	नेपोलियन का पक्ष-प्रेम	२४६
१२५	वस्तु का उचित उपयोग	२४८
१२६	प्रकाश की ओर	२५०
१२७	सच्ची सेवा	२५२
१२८	खुदा की सच्ची वन्दगी	२५४
१२९	माता के प्रेमाश्रु	२५६
१३०	परिश्रम और विनोद	२५८
१३१	रानाडे का भाषा प्रेम	२६०
१३२	नौकरी की स्वामि भक्ति	२६२
१३३	काजी सिंगजुद्दीन और बादशाह	२६४
१३४	प्रिंस एलवर्ट का मित्र-प्रेम	२६६
१३५	राजा जनक और विदेह	२६८
१३६	किसान और जन-सेवा	२७०
१३७	महान् बनने की कला	२७२
१३८	महारानी मेरी और ग्रामीण	२७४
१३९	बादशाह का आदर्श	२७६
१४०	पशु के प्रति भी प्रेम	२७७
१४१	भक्ति और रोग	२७९
१४२	सकट में भी धैर्य	२८२
१४३	स्वामी विवेकानन्द की दयालुता	२८४
१४४	नेहरू जी का स्वच्छता-प्रेम	२८६

	विषय	पृष्ठ
४९	हैव की वसा—सामा	॥
४०	प्रार्थना के सात प्रमाण की आवश्यकता	११
४	विश्वास का फल	११
४६	अमेरिकन इंडियन की ईसायिताई	१६
१	अष्टम शास्त्र का विश्वास	१७
६१	सम-ग्रह का विश्वास	१८
४२	सुल-वासी का प्रमाण	१९
२१	सम्मान नरबी से का अनुप्राण से ?	१९
२४	हासियारी का विशेषकार	१९
२६	सुल-वाद का महान	१
२९	महात्मा मुन्नेमान का जन-सैन	११
३	निर्भक्ता से अस्मिताई अनुप्राण	११२
२	कुली की वस्तु	११४
२	कभी इष्टि	११६
१	काशी का ल्याप	११८
६१	अदिमान का फल	१२
६०	अपमान से प्र म	१२२
६१	अपमान का प्रमा प्र म	१२४
६४	मिहगम की बुद्धिमत्ता	१२६
६५	प्र म से कायन	१२
६६	अपमान और अस्मिताई	१३
६	हवा प्र म	१३२
६	जीवन की आवश्यकता	१३४
६६	अन के वस्तु	१३६
	महान् ग्यामी	१६

	विषय	पृष्ठ
७१	मूखं ईर्ष्यातु	१८०
७२	त्यागी मे लागी रहे	१४२
७३	खुदा के बदा की सेवा	१८४
७४	दृष्टि का भेद	१४६
७५	दुर्जन के साथ भी सज्जनता	१४८
७६	धन के दुस्ती	११०
७७	नादिरशाह का आदर्श	१५२
७८	सुख कहाँ ?	१५४
७९	महात्मा ईसा का आदर्श	१५६
८०	राज्य-वैभव और त्याग	१५८
८१	सद्व्यवहार	१६०
८२.	स्वाभिमानी वीरागता	१६१
८३	दीवान सागरमल का न्याय	१६३
८४	धन बढ़ा या विद्या ?	१६५
८५	खुशामदी भक्ति और खुदा	१६७
८६,	परिश्रम ही सच्चा सन्तोष	१६९
८७	दयालु सेठ	१७१
८८	सन्तोष और निष्काम भक्ति	१७३
८९	प्रभु को प्रेम ही प्रिय है	१७९
९०	सर्वधर्म समन्वय	१७८
९१	धन दोष-मूलक है	१८०
९२	भोग की वृत्ति, भोग मे नहीं	१८२
९३	संकट मे भी धैर्य	१८४
९४	दान और भावना	१८६

	विषय	पृष्ठ
४६	हैव की बरा—कमा	॥
४७.	मार्चवा के साथ प्रवाल भी यावश्यक	१९
४	विस्वाह का फल	१९
४२	अमेरिकन इंडियन की ईमानदारी	१२
५	सर्वोच्च शासक का विस्वास	२७
५१	राज-शास का विस्वाह	२८
५२	सम-शाही का प्रभाव	१ १
५३	बन्नाम : पत्नी से का अनुपपत्ता से ?	१ ३
५४	इतिहास का परीक्षण	१ ५
५५.	सुल-शास का महत्व	१ ७
५६	महत्त्वा सुनिधान का जल-ईम	११
५	निर्भरता से अतिरिक्त अनुपपत्त	११२
५	सुल का परल	११४
५	सुली इति	११६
५	काशी का ल्वाप	११७
५१	सर्विधान का फल	१२
५	सदमानमे इ म	१२९
५३	सगोच का इला ईम	१२४
५	विद्वान की बुद्धिमत्ता	१२६
५७	इ म से कागल	१२
५८	साम्ना और परमान्ना	१३
५	सुल ईम	१३२
५	जीवन की मार्चवता	१३४
५६	मन से कल	१३६
	महान् ल्वापी	१३७

	विषय	पृष्ठ
७१	मूर्ख ईर्ष्यालु	१८०
७२	त्यागी से लागी रहे	१४२
७३	खुदा के वदो की सेवा	१४४
७४	दृष्टि का भेद	१४६
७५	दुजन के साथ भी सज्जनता	१४८
७६	घन के द्रुष्टी	११०
७७	नादिरशाह का आदर्श	१५२
७८	सुख कहाँ ?	१५४
७९	महात्मा ईसा का आदर्श	१५६
८०	राज्य-वैभव और त्याग	१५८
८१	सद्व्यवहार	१६०
८२	स्वाभिमानी वीरागता	१६१
८३	दीवान सागरमल का न्याय	१६३
८४	घन बढ़ा या बिचा ?	१६५
८५	खुशामदी भक्ति और खुदा	१६७
८६,	परिश्रम ही सच्चा सन्तोष	१६९
८७	दयालु सेठ	१७१
८८	सन्तोष और निष्काम भक्ति	१७३
८९	प्रभु को प्रेम ही प्रिय है	१७६
९०	सर्वधर्म समन्वय	१७८
९१	घन दोष-मूलक है	१८०
९२	भोग की वृत्ति, भोग में नहीं	१८२
९३	सकट में भी धैर्य	१८४
९४	दान और भावना	१८६

	विषय		पृष्ठ
१३.	अनुकरणीय चरित्र	—	१५८
१६	बाइबल का लक्ष्यचरण	—	१६
१७	संकीर्ण और समग्र का सूत्र	—	१६२
१८.	जापानी यहूतों का वेद-ग्रन्थ	—	१६४
२६	पुनः जन्मप्राप्त की अपेक्षा	—	१६९
१	पुनः जन्मप्राप्त और संन्यास	—	१६
१ १	बाल की अपेक्षा	—	२
१ २	पिता और पुत्र	—	२ २
१ ३	सात्विक जीवन	—	२ ४
१ ४	मातृ-भूमि और ईश्वर-निष्ठता	—	२ ६
१ ५.	कर्मों के प्रभाव	—	२ ७
१ ६	धार्मिक का परमेश्वर ज्ञान	—	२१
१ ७	सात्विक के लिए त्याग	—	२१२
१ ८.	ईश्वर के प्रति हृदय विनम्रता	—	२१४
१ ९	महात्मा गांधी और अंधा	—	२१६
११	जीवन का सौन्दर्य विमल-वाक्य	—	२१
१११	कुछों का पुनर्जागरण	—	२२
११२	सर्वश्रेष्ठ कर्म : विद्या प्रदान	—	२२४
११३	आत्म प्रदान और ज्ञान	—	२२६
११४	सामान्यतः परम हित और वास्तविकता	—	२२
११५	सत्य जन्मवाक्य और आत्म-ज्ञान	—	२३
११६	जन्मवाक्य का आत्म-ज्ञान	—	२३२
११	अपेक्षित कर्म और स्मरण-शक्ति	—	२३४
११	ज्ञानी का पुनः जीवित	—	२३६
१११	आत्मिक और जीवन	—	२३७

	विषय	पृष्ठ
१२०	कालिदास और रूप	२३६
१२१	ईर्ष्यालु का वण्ट	२४०
१२२	पुत्री को पिता की सीख	२४१
१२३	प्रसन्नराय का स्वातन्त्र्य प्रेम	२४४
१२४	नेपोलियन का पक्ष-प्रेम	२४६
१२५	वस्तु का उचित उपयोग	२४८
१२६	प्रकाश की ओर	२५०
१२७	सच्ची सेवा	२५२
१२८	खुदा की सच्ची वन्दगी	२५४
१२९.	माता के प्रेमाश्रु	२५६
१३०	परिश्रम और विनोद	२५८
१३१	रानाडे का भाषा प्रेम	२६०
१३२	नौकरो की स्वामि भक्ति	२६२
१३३	काजी सिराजुद्दीन और बादशाह	२६४
१३४	प्रिंस एलवर्ट का मित्र-प्रेम	२६६
१३५	राजा जनक और विदेह	२६८
१३६	किसान और जन-सेवा	२७०
१३७	महान् बनने की कला	२७२
१३८	महारानी मेरी और ग्रामीण	२७४
१३९	बादशाह का आदर्श	२७६
१४०	पशु के प्रति भी प्रेम	२७७
१४१	भक्ति और रोग	२७९
१४२	सकट में भी धैर्य	२८२
१४३	स्वामी विवेकानन्द की दयालुता	२८४
१४४	नेहरू जी का स्वच्छता-प्रेम	२८६

	विषय		पृष्ठ
१४६.	भारतीय साम्राज्य जीवन	---	२४४
१४६	ईश्वर की आनन्दसुखता	---	२६
१४७	हमारे मोहम्मद का अन्तिम उपदेश	---	२६९
१४८.	मुल्तान बनने की योजना	---	२६४
१४८.	करीब के व्यवसाय का फल	---	२६९
१५	उत्तु कमाने से लाभ	---	२६४
१५१	आनन्द विद्या	---	१
१५२	मानव-जन का अन्तःकार्य	---	१ २
१५३	अनु की दया पर क्या धीमा ?	---	१ ३
१५४	महात्मा गांधी की अन्तःकार्य अन्तः	---	१५७
१५५.	आत्मोन्मत्त के अन्तः की का उपदेश	---	१ ८
१५६	महात्मा केरी का अन्तः	---	१११

किसान और स्वर्ण-थाल :



एक समय की बात है, विश्वनाथ के मन्दिर में स्वर्ण का एक थाल गिरा, और उसी समय घनि हुई, कि जो वास्तव में सच्चा भक्त होगा, उसको ही यह स्वर्ण-थाल मिलेगा।

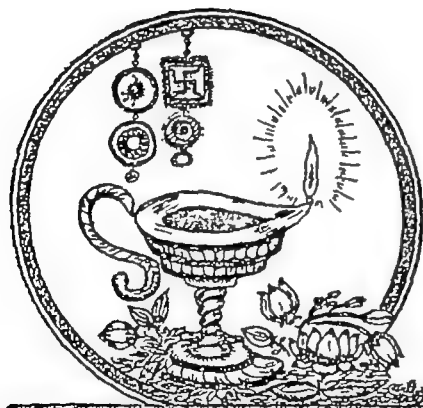
जिस राजा ने वह मन्दिर बनवाया था, वह आया और प्रमत्तता पूर्वक कहने लगा कि—मैंने ही इस मन्दिर का निर्माण कराया है। मेरे से अधिक सच्चा भक्त कौन हो सकता है ? इसलिये यह थाल तो मुझे ही मिलना चाहिये। राजा ने स्वर्ण-थाल को अपने अधिकार में लेने के लिये जेमे ही थाल को स्पर्श किया, उसी क्षण वह स्वर्ण-थाल लोहे का बन गया।

इसके पश्चात् सेठ जी आये और उनका मन भी स्वर्ण-थाल को लेने के लिये ललचा उठा। सेठ जी बोले कि—मैं दिन भर गरीबों को दान देता हूँ, इसलिये मेरे से अधिक सच्चा भक्त कौन होगा ? सच्चा भक्त होने के नाते यह थाल मुझे मिलना चाहिये। जैसे ही सेठ जी ने उस स्वर्ण-थाल को ग्रहण करने के लिये हाथ लगाया, वह स्वर्ण-थाल फिर से लोहे का हो गया।

	विषय		पृष्ठ
१८८.	पारस्य साम्राज्य जीवन	---	२ ४
१८९	ईरान की प्रामाणिकता	---	९६
१९०.	हजरत मोहम्मद का अन्तिम उपदेश	---	२६२
१९१.	मुस्लिम बनने की शीघ्रता	---	२६४
१९२.	मदीना के वादमान का फल	---	२६९
१९३	ईरान का राज्य है जान	---	२७०
१९४	काह विपत्ति	---	३
१९५	मल्लिक-जान का बच पारस्य	---	३ ९
१९६	सबु की क्या पर क्या जीना ?	---	३ ८
१९७	महम्मद बादी की अन्तिम उपदेश	---	३९७
१९८.	मार्छीय शेरों को बादी की का उपदेश	---	३ ८
१९९.	महम्मद बादी का उपदेश	---	३९९

भिखारी के हजार-हजार मूक आशीर्वाद लेकर जब वह भोला किसान मन्दिर पहुँचा और उसने उस थाल को ग्रहण किया, तो वह स्वर्ण का ही बना रहा। देखिये, विद्वानों ने भी कहा है कि सच्चा भक्त या धर्मात्मा तो कोई विरला हो होता है —

परोपदेशो पाण्डित्य, सर्वेषां सुकर नृणाम् ॥
धर्मं स्वोयमनुष्ठान कस्य चित्तु महात्मन ।



कुछ समय पश्चात् एक पंडित जी पूजा के लिये गंगा तट लेकर मन्दिर की तरफ चले आ रहे थे। रास्ते में एक रीन मिचारी व्यापार चला रहा था। उस मिचारी ने पंडित जी से जल पिलाने को कहा ता पंडित जी ने उस व्यापार से तटपते हुए मिचारी की ओर नहीं निगम्या। पंडित जी कहने लगे कि यह जल पूजा के लिये है। इस पर यदि तरो व्यापारी पड़ गई तो यह जल अपवित्र हो जायगा। इस प्रकार यह जल फिर पूजा के योग्य ही नहीं रहा।

पंडित जी मन्दिर में आये तो उनको भी मात्स्य पड़ा कि यह स्वयं-जल सच्चे भक्त को ही मिल सकता है। इसलिये पंडित जी ने जो अपने का मन्त्रा भक्त व्यक्त करते हुए बातें बताई। परन्तु जैसे ही पंडित जी ने बातें सिया वह उसी प्रकार से फिर लोहे में परिवर्तित हो गया।

कुछ क्षणों के पश्चात् एक मोठा किसान जल लेकर मन्दिर में पूजा करने के लिये आ रहा था। उस व्यक्ति मिचारी ने उससे भी पानी मांगा। किसान के हृदय में दया का समर हिसारे होने लगा। किसान उसी क्षण बोला—“इसमें मेरी क्या हानि है। तुम तो सचमुच प्राण-मुक्त भगवान् हो। इससे पक्का मरा क्या सीमाय्य हो सकता है कि पूजा करने के लिये जाता हुआ मार्ग में एक व्यापारी को पानी पिलाऊँ।”

उस व्यापार से तटपते मिचारी ने अपनी व्यापार कुम्हार घोर जैसे ही उस पंडित मिचारी ने समपूर्ण धर्मों से किसान की तरफ देखा तो किसान को उस मिचारी के टपकते पाशुपों से एक दिव्य-सज्जित प्रतीत हुई और वह किसान इतना प्रसन्न हुआ कि जैसे सचमुच उसे भगवान् के ही दर्शन हो गये हों।

भिखारी के हजार-हजार मूक आशीर्वाद लेकर जब वह भोला किसान मन्दिर पहुँचा और उसने उस थाल को ग्रहण किया, तो वह स्वर्ण का ही बना रहा । देखिये, विद्वानो ने भी कहा है कि सच्चा भक्त या धर्मात्मा तो कोई बिरला हो होता है —

परोपदेशे पाण्डित्यं, सर्वेषां सुकरं नृणाम् ॥
धर्मं स्वीयमनुष्ठानं कस्य चित्तु महात्मनः ।



भ्रातृ-प्रेम



कीरवों ने पाँदरों को बनबाध देकर बहुत प्रसन्नता का अनुभव किया। अपनी विजय के उपलक्ष में उत्सव का आयोजन करने इन मयकों के बाध में पड़े। कीरवों ने अपने उत्सव के उपयुक्त उसी बाग की उचित समझ।

कब्रों ने अपने बाग की हानि होने की सम्भावना देखकर बड़ी उत्सव करने से मना किया। कीरवों ने भी हठपूर्वक वहीं उत्सव करने का निश्चय किया। परन्तु जब मयकों को अपने बाध को रखा हुा कटिबद्ध देखा, तो अन्य कीरव तो भाग पड़े परन्तु दुर्योधन को पकड़ लिया।

जब इस सम्बन्ध में सुधिधृतराष्ट्र की सूचना मिली कि दुर्योधन का मयकों ने पकड़ लिया है तो उसके मन में भाई का बाल बिक्रम प्रसन्नता से नया और उत्साह रहा गया। उसने तत्क्षण ही अज्ञान से कहा कि तुम अभी जाओ और तुरन्त दुर्योधन का मुखाधो।

हम भाई-भाई आपस में चाहे जितना लड़े, परन्तु जब कोई अन्य हमारे साथ लड़ता है, तो हम एक-सौ पाँच भाई एक हैं। यदि हम इसी नीति के अनुसार रहेंगे, तो कोई भी शत्रु हमारा बाल बाँका नहीं कर सकता है।

यदि दुर्योधन अन्य किसी के बन्धन में रहता है, तो इसमें हम सब का अपमान है। भाई-भाई से पराजित हो, तो इसमें अपमान जैसी कोई बात नहीं है, परन्तु अन्य किसी का बन्धन हम स्वीकार नहीं कर सकते हैं। हम आपस में लड़कर भी अन्त में दूसरों के सामने एक हैं।

वय पच वय पच वय पच शताधिका ।

परस्पर-विवादे तु यूय यूय वय वय ॥

इस प्रकार युधिष्ठिर के वचन का पालन करने के लिये अर्जुन तुरन्त ही दुर्योधन को छुड़ाने के लिये चल दिया और उसको गधवों के बन्धन से मुक्त कर अपने भाई के प्रति अपूर्व-प्रेम प्रदर्शित कर एक महान् आश्रय उपस्थित किया।

नीति के निम्न श्लोक में स्पष्ट कहा है कि भाई वही है, जो आपत्ति में साथ दे—

आपत्सु मित्र जानीयात्, युद्धे शूर मृगे शुचिम् ।

भार्या क्षीणेषु वित्तेषु व्यसनेषु च बान्धवान् ॥



धर्म युद्ध

एक समय मुहम्मद साहब के निज बहादुर हजरत यानी साहब युद्ध करते समय सैन्य सभ की वृष्णी पर विरा कर उसकी छाती पर सवार हो गये। तिस समय सैन्य वृष्णी पर पड़ा य बह उसका सर काटने ही बासे य कि सैन्य को नीचे पड़े-पड़े एक युक्ति सूझ गई और उमने उसी सण यानी साहब के मुह पर चुक लिया।

इस प्रकार मुह पर चुकने से यानी साहब को सहमा क्षोभ था यथा और सैन्य की मार डालने के लिये बंटे ही उद्दिष्टि दपने हाथ दहाए तो उमी धास उनके धम्पर से एक धमि हुई। यानी साहब ने उसी समय ससवार हो असम डाल दिया और सैन्य का मुक्त करके धमन लड़े हो गये।

यथा साहब के इस कार्य से उनका धन बहुत बलिग हुआ और पूछा कि— धापने ऐसा क्यों किया? यानी साहब बासे—
‘मया धर्म एवं कर्मव्य-परायणता हेतु मैं युद्ध कर रहा था।
राज्य-धर्म एवं कर्मव्य-परायणता करने समय यदि हम दोनों

मे से कोई भी मृत्यु को प्राप्त हो जाता, तो कोई चिन्ता की बात नहीं थी। परन्तु जैसे ही आपने मेरे मुँह पर थूका, तो मेरे क्रोध का ठिकाना न रहा और मेरे अन्दर सहसा अहंकार की लहर दौड़ गई।

उसी क्षण मेरे हृदय से एक आवाज आई, कि अब शत्रु को मारना अधर्म है। जब तक आपने मेरे मुँह पर नहीं थूका था, उस क्षण तक मैं सत्य-धर्म एवं अपने कर्त्तव्य के मार्ग का अनुसरण करता हुआ युद्ध कर रहा था। परन्तु जैसे ही आपने मेरे मुँह पर थूक दिया, वैसे ही मेरे क्रोध का ठिकाना न रहा और मैं कर्त्तव्य से हट कर व्यक्तिगत द्वेष के लिये लड़ने लगा।

उसी समय मेरे मन में एक विचार-क्रान्ति आई और मैं तलवार फेंकने के लिये बाध हो गया। यदि उस समय मैं आपको मार देता, तो व्यक्तिगत द्वेष के लिये बंध किया हुआ गिना जाता और मेरी गिनती अधम पुरुषों में होती।

अली साहब ने अपने शत्रु को फिर से लड़ने के लिये ललकारा, परन्तु अली साहब की आदर्शमय कर्त्तव्य परायणता से उनका शत्रु इतना प्रभावित हो चुका था, कि उसने अली साहब के सामने घुटने टेक दिये और अपनी पराजय स्वीकार कर ली।



धर्मान्धता



धर्म एव द्योतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः ।

तथाहमीति न हन्तव्यो ना नो धर्मो ह्यीश्वरः ॥

घोरपद्मेव बाबरशाह के समय में धर्मान्धता एवं भ्रष्टाचारों का बीम-बाना रहा। इसी कारण है उस काल में हिन्दुधर्म पर बहुत ही भ्रष्टाचार हुआ। यही तक कि सामु एवं सम्बन पुरम भी इन भ्रष्टाचारों की जपेटों से न बच सके।

भ्रष्टाचारों के फलस्वरूप ही उस समय से मुगल शासकों के पतन का इतिहास प्रारम्भ हुआ। यही तक कि बाबरशाह ने दुष्काम या सफट-काल में भी हिन्दुधर्म को समन तक नहीं दिया और लड़ो फसलों को नष्ट करा दिया।

बाबरशाह की घोर से धर्म सम्प्रदाय वालों का धर्म परिवर्तन करने के निवे साहो करमान निकसे। इतना ही नहीं यह भी धात्रा की गई कि जो जो हिन्दू इस्लाम-धर्म का स्वीकार न करे, उमरा मित्र उनकार से उठा हो और जो हिन्दू इस्लाम-धर्म स्वीकार करे उसे मीठपी न धन हो।

यह प्रवृत्ति सर्व प्रथम काश्मीर में प्रारम्भ हुई । तेगवहादुर ने ब्राह्मणों से कहा कि—तुम बादशाह से कहो कि यदि हमारा नेता तेगवहादुर इस्लाम-धर्म स्वीकार कर ले, तो हम भी कर लेंगे ।

इस प्रकार जनता में उत्तेजना भरने एवं फुसलाने के लिये बहुत-सी युक्तियाँ निकाली गई, जिससे अधिक से अधिक जनता इस्लाम-धर्म स्वीकार कर ले । बादशाही फरमान की जिन लोगो ने अवहेलना की, उनको मौत के घाट उतार दिया गया ।

देखिये, उर्दू के मशहूर शायर 'मीर' ने कहा था—

“मीर साहब गर फरिश्ता हो तो हो ।

आदमी होना रुगर दुश्वार है ॥”



एकाग्रता-पूर्वक प्रार्थना



मुल्तानामपुर के बादशाह ने एक बार गुरु नानक से कहा कि—तुम इस्लाम-धर्म सम्बन्धी बहुत बड़ी-बड़ी बातें करते हो इसलिये याद में? साब नवाब पढ़ो।

गुरु नानक ने अहर्ष नवाब पढ़ना स्वीकार कर लिया। परन्तु जब बादशाह नवाब पढ़ने लगे तो गुरु नानक एक तरफ खड़े हो गए। नवाब पढ़ने के पश्चात् बादशाह ने पूछा—‘तुमने मेरे साथ नवाब क्यों नहीं पढ़ी?’ इस पर गुरु नानक ने जवाब दिया—‘तुम यहाँ के ही कम जो मैं तुम्हारे साथ नवाब पढ़ता। तुम्हारा शरीर धर्मस्य प्रार्थना या नवाब में क्या हुआ प्रयोज्य होता था परन्तु मन तो तुम्हारा नवाब में संलग्न न इन्कर काबुल की ओर कर रहा था।’

इस पर बादशाह ने यादह-पूर्वक पूछा तो गुरु नानक ने स्पष्ट कह दिया कि तुम्हारा मन तो काबुल में चोढ़े शरीरने में व्यस्त था। मीनबी साहब भी नवाब पढ़ते समय अपने बख्त की चिन्ता में थे कि कहीं बख्त कुर्त में न गिर जाय।

इस प्रकार गुरु नानक की बात सुनकर वादशाह चुप हो गया और बोला कि यह सत्य है—“ईश्वर की उपासना करते समय मन एकाग्र होना चाहिये। एकाग्र-मन से की गई भक्ति या उपासना ही सच्ची उपासना है। उपासना के समय में भी यदि सासारिक कार्यों में मन भटकता रहा, तो इस प्रकार की प्रार्थना से कोई लाभ नहीं है। वास्तव में उपासना एकाग्र-मन से ही होनी चाहिये।



सर्वत्र ईश्वर



एक समय का प्रसंग है कि गुरु नानक मक्का की यात्रा को गये । मक्का-यात्रा करते समय वहाँ पर वे बिय्याम करने के लिये काबा की तरफ पैर करके खो गये ।

काबी जी गुरु नानक के इस कार्य से बहुत नाराज हुए और बोले कि इस प्रकार काबे की तरफ पैर करके सोना बर्न बिच्छू है ।

काबी जी के वाक्य सुनकर गुरु नानक सहज स्वभाव से बोले कि काबी जी इसने नाराज क्यों होते हो ? आप मेरे पैरों को उम तरफ कर दीजिये जिस तरफ मुझा न हो । गुरु नानक की बात सुनकर काबी जी चुप हो गये क्योंकि ईश्वर सब व्यापी है ।

धर्मराज और कुत्ता :



एक समय धर्मराज युधिष्ठिर स्वर्ग की यात्रा करने के लिये चले। हस्तिनापुर से एक कुत्ता भी उनके साथ हो गया। इस प्रकार पत्नी, भाई एवं कुत्ते के साथ युधिष्ठिर चले जा रहे थे।

मार्ग में पर्वतारूढ़ होते समय उनकी पत्नी एवं भाई नीचे गिर पड़े और उनका अन्तकाल हो गया।

धर्मराज और कुत्ता, लम्बी यात्रा को पार करते हुए स्वर्ग के द्वार पर जा पहुँचे। जिस समय इन्द्र के सामने पहुँचे तो इन्द्र ने कहा कि—“युधिष्ठिर इस अपवित्र श्वान का त्याग कीजिये, तभी स्वर्ग में प्रवेश की अनुमति मिल सकती है।” इस प्रकार इन्द्र के वचन सुनकर युधिष्ठिर बोले कि—“यह श्वान तो मेरे माय ही रहेगा। इस श्वान को मेरे से अलग नहीं किया जा सकता है।”

इस पर इन्द्र ने धर्मराज से कटाक्षपूर्ण शब्दों में कहा कि—“आपने पत्नी एवं भाई का तो त्याग कर दिया। उनका ममत्व आपको आकर्षित न कर सका, तो फिर इस श्वान के प्रति क्यों

सर्वत्र ईश्वर



एक समय का प्रसंग है कि गुरु नानक मक्का की यात्रा को गये । मक्का-यात्रा करते समय वहाँ पर वे बिघाम करने के लिये काबे की तरफ पैर करके खो गये ।

काबो जी गुरु नानक के इस कार्य से बहुत नाराज हुए और बोले कि इस प्रकार काबे की तरफ पैर करके सोना बर्ब बिकट है ।

काबो जी के वाक्य सुनकर गुरु नानक सदैव स्वभाव से बोले कि काबो जी इतने नाराज क्यों होते हो ? आप मेरे पैरों को तब तरफ कर दोजिध जिस तरफ खुदा न हो । गुरु नानक की बात सुनकर काबो जी चुप हो गये क्योंकि ईश्वर सब व्यापी है ।



विद्यार्थी की उदारता :



एक समय की बात है कि कलकत्ते में दो मित्र एक ही स्थान पर रहते थे। दोनों एक ही कक्षा में थे, और साथ-साथ ही अध्ययन-क्रम को चलाते थे। उनमें से एक विद्यार्थी प्रथम श्रेणी में पास होता था, और दूसरा द्वितीय श्रेणी में। उनका बहुत समय तक यही क्रम चलता रहा।

एक बार प्रथम श्रेणी में पास होने वाले विद्यार्थी की माता जी बीमार पड़ गई। उसने अपना अधिकांश समय अपनी माता की सेवा-शुश्रूषा में लगाया। इसी कारण से सब मित्रों को विश्वास हो गया, कि इस बार द्वितीय श्रेणी में पास होने वाला लड़का प्रथम पास होगा और प्रथम श्रेणी में पास होने वाला लड़का द्वितीय श्रेणी में पास होगा।

दोनों ने परीक्षा दी, परन्तु परिणाम वही जैसा कि पहले से रहता आया था। प्रथम श्रेणी में पास होने वाला लड़का इस बार अपनी माता की सेवा में अधिक समय लगाने पर

झनना ममत्व है ? हम अपवित्र स्वान का प्रेम क्यों आपको साथ रखने के लिये प्रेरित कर रहा है ?”

मुनिष्ठिर बोले कि— “भार्य एवं पत्नी का मैंने प्रीति प्रवस्था में त्याग नहीं किया है। मृत्यु के परवान् मृत व्यक्ति के पास बैठे रहना यह मोक्ष का काम है।

“जीवन में साथी चाहें मनुष्य हो या पशु उसका साथ कभी नहीं छोड़ना चाहिये। साथी का त्याग करना या उसके साथ विश्वासघात करना एक बहुत बड़ी भूल है।”

“यह कृता बन एवं बनवास में सदा मेरे साथ रहा है। इस कुत्ते ने बहुत बड़ी मजिस्स को पार करने के लिये मेरा साथ दिया और कदम से कदम मिलाकर कठिन यात्रा की है। इस प्रकार इस बेचारे बूढ़-प्राणी का किस प्रकार छोड़ दू ? मेरा हृदय अन्दर से इस बात के लिये गवाही नहीं देता है कि इस कुत्ते का धन साथ छोड़ दू जो कि बहुत बड़ी मजिस्स को पार करने में मेरा सहयोगी रहा है।”

धर्मराज की हम धनुर्ब धर्म-लिप्ता एवं हड़ विचारों से इन्द्र बहुत प्रभावित हुआ और उस स्वान के प्रति उनका मन भी दया से भर गया। कहा भी है —

“मामित्तुल्यं त्वो नास्ति यः समोऽन्यतरं पुरुषम् ।

यः सुस्पृहाः यो व्याधिर्न यः कर्मो दमभ्यस्तः ॥”

इन्द्र ने जब देखा कि मुनिष्ठिर अपने विचारों पर हड़ है। और कुत्ते का साथ न छोड़ कर स्वर्ग का मोक्ष त्यागने को तैयार है तो उसे बहुत प्रसन्नता हुई और दोनों के लिये स्वर्ग के द्वार खोल दिये।



बालक का साहस :



एक बार इंग्लैंड के राजा जेम्स द्वितीय के पौत्र प्रिन्स चार्ल्स प्रथम, जार्ज के सेनापति से परास्त होकर प्राण बचाने के लिये स्कॉटलैण्ड की पहाड़ियों में छिप गये।

यह घोषणा की गई कि जो भी उसका सर काट कर लायेगा, उसे चार लाख रुपये का इनाम मिलेगा। चारों तरफ प्रिन्स चार्ल्स की खोज प्रारम्भ हो गई।

कुछ समय के पश्चात् एक खोजकर्ता कैप्टन ने एक बालक से पूछा कि तुमने प्रिन्स चार्ल्स को देखा है? बालक बोला—जाते हुए तो मैंने देखा है, परन्तु यह नहीं बतलाऊंगा कि कब और किस रास्ते से जाते हुए देखा है।

कैप्टन ने तलवार निकाली और बालक को भय दिखलाना चाहा। इस पर जब लड़का सब भेद बतलाने को तैयार न हुआ, तो बालक पर तलवार से प्रहार भी किया गया। बालक का कण्ठ क्रन्दन हुआ। परन्तु बालक ने वहादुरी के साथ कहा—“मैं इस घातक प्रहार के कारण से ही चिल्लाया हूँ। मैं

मी परीक्षा में प्रथम थाया हा मित्रों एवं परिचितों को बहुत आश्चर्य हुआ ।

धम्मपापका ने उनके प्रश्नोत्तरों की जाँच की तो पता लगा कि द्वितीय श्रेणी में पास होने वाले विद्यार्थी ने एक प्रश्न का उत्तर ही नहीं दिया । जब उससे पूछा गया कि तुमने ऐसा क्यों किया हा वह विद्यार्थी बोला—माप लोगो ने इतनी छान बीन क्यों की है । यह सब मैंने ध्यान-बुझकर किया है ।

विद्यार्थी बोला—मेरे मित्र की माता बीमार पड़ी थी इसलिये वह अपनी माता की सेवा करने में लगा रहा । इसी कारण से उस बेचारे को पढ़ने का समय कम मिल पाया है । वास्तव में वह मेरे से योग्य है और प्रथम श्रेणी में ही पास होने का अधिकारी है । यदि इस वर्ष मैं प्रथम पास हा जाता तो मेरे मित्र का उम्माह भग्न हो जाता । इसी लये मैंने एक प्रश्न का उत्तर ही नहीं दिया जिससे कि मेरा मित्र सदा की तरह इन बार भी परीक्षा में प्रथम था सके ।”

सुसार में सच्चे मित्र किसी माम्प्रधान को ही मिलते हैं । कहा भी है—

यः प्रहरीयैतुचरितं स्तिरं तं बुधी
 यद्वानुद्वेगं हितमिच्छति तत्कृतवत् ।
 तन्मित्रमायति तुल्यं यः तमपिप्यं यः
 दक्ष्यन् वनति पुष्कलतो वनन्ते ॥

बालक का साहस :



एक वार इंग्लैंड के राजा जेम्स द्वितीय के पौत्र प्रिन्स चार्ल्स प्रथम, जार्ज के सेनापति से परास्त होकर प्राण बचाने के लिये स्कॉटलैण्ड की पहाडियों में छिप गये।

यह घोषणा की गई कि जो भी उसका सर काट कर लायेगा, उसे चार लाख रुपये का इनाम मिलेगा। चारों तरफ प्रिन्स चार्ल्स की खोज प्रारम्भ हो गई।

कुछ समय के पश्चात् एक खोजकर्ता कैप्टन ने एक बालक से पूछा कि तुमने प्रिन्स चार्ल्स को देखा है? बालक बोला—जाते हुए तो मैंने देखा है, परन्तु यह नहीं बतलाऊंगा कि कब और किस रास्ते से जाते हुए देखा है।

कैप्टन ने तलवार निकाली और बालक को भय दिखलाना चाहा। इस पर जब लड़का सब भेद बतलाने को तैयार न हुआ, तो बालक पर तलवार से प्रहार भी किया गया। बालक का कण्ठ क्रन्दन हुआ। परन्तु बालक ने बहादुरी के साथ कहा—“मैं इस घातक प्रहार के कारण से ही चिल्लाया हूँ। मैं

मेक्सर्सन बंस का वाक्य है—“संकट में घाये हुए राजा को धनु के हाथों में फँसाने के लिये मैं सहायक नहीं बनूँगा। मुझे घाय कितना भी कष्ट सीजिये परन्तु मैं अपने प्रण से विचलित नहीं हो सकूँगा।”

इसके पश्चात् बालक बोला—“संकट में घाये हुए राजा को धनु के हाथों में फँसाने के लिये मैं सहायक नहीं बनूँगा। मुझे घाय कितना भी कष्ट सीजिये परन्तु मैं अपने प्रण से विचलित नहीं हो सकूँगा।”

केप्टिन उस वाक्य की ओरठा साहस एवं दृढ़ता से बहुत प्रभावित हुआ और प्रसन्न होकर उस बालक को चाँदी का कास (ईसाई धर्म का एक चिन्ह) इनाम में दिया। मेक्सर्सन बंस के लोग आज भी इस इनाम को सम्मान पूर्वक रखते हैं।



पुरुषार्थी-युवक :



एक युवक ने अमेरिका के विश्वविद्यालय से बी० ए० की डिग्री प्राप्त की। युवक निर्वन था, इसलिये शीघ्र ही उसे नौकरी की खोज करनी पड़ी।

उस युवक ने इधर-उधर अपने योग्य कार्य की बहुत खोज-बीन की, परन्तु उसे सफलता न मिल सकी। इससे उसके मन में कुछ निराशा के बादल छा गये, परन्तु उसने प्रयत्न करना नहीं छोड़ा।

अन्त में उसने एक धनवान् सेठ के पास जाकर विनय-पूर्वक नौकर रख लेने की प्रार्थना की। पहले तो सेठ ने उस पढ़े-लिखे अपटूडेट लड़के को रखने से मना कर दिया, परन्तु जब युवक ने बहुत आग्रह किया तो सेठ ने उसको नौकर रख ही लिया।

सेठ जी ने उस युवक को चार आने प्रतिदिन की मजदूरी पर घर व दुकान आदि की सफाई करने के लिये रखा। युवक

ने सहर्ष हम कार्य का करने की स्वीकृति दी थी और उही दिन से सेठ जी के सही परिश्रम पुनर् कार्य करने लगा ।

युवक ने अपने परिश्रम एवं कर्तुव्य-परायणता से सेठ जी की सहानुभूति जीव ही प्राप्ति कर ली । सेठ जी ने प्रसन्न होकर उसे सम्यक् कर्मचारियों की देग-रेख का कार्य दे दिया और उसकी मजदूरी भी पाठ पाने प्रतिदिन कर दी ।

उस युवक के परिश्रम ने सेठ जी को इतना प्रभावित किया कि सेठ जी ने उसका धनना हिस्संगार बना लिया ।

वह युवक का एक दिन सप्ताह साबि की बार धान प्रतिदिन पर मजदूरी करता का अपने परिश्रम पुनर् कार्य एवं सदन से जीव ही बहुत बड़ा बनवान् बन गया ।



रानी की सच्ची सहानुभूति :



एक समय इटली की रानी मारग्रेट पर्वत पर चढ़ रही थी। पर्वत पर चढ़ते समय मार्ग में भयंकर आँधी व तूफान आ गया। रानी सकट में पड़ गई। उसने बहुत साहस के साथ अपने कदम आगे बढ़ाने चाहे, परन्तु तूफान के वेग ने उसे आगे बढ़ने से असमर्थ कर दिया।

रानी ने आल्पाइन के एक छोटे-से वगले में जाकर आश्रय लिया और इस प्रकार अपने प्राणों की रक्षा की।

रानी के वगले में प्रवेश करते ही वहाँ के कर्मचारी वगला छोड़कर बाहर जाने लगे, जिससे कि रानी को कोई असुविधा न हो।

इस पर रानी ने कर्मचारियों से कहा कि तुम लोग वगला छोड़कर बाहर क्यों जा रहे हो? इस भयंकर तूफान में अपने प्राणों को सकट में क्यों डाल रहे हो। यह सकट का समय सब

के निम्न है। जीवन में प्रत्येक मनुष्य को बुद्धि व गुण की पहिचान देवता पढ़ती है। बुद्धि व गुण का नाम ही तो बुद्धिमान है।

अन्त में राजा ने सभी आदिमियों को बंसे के अन्तर बुलावा और कहा कि तुम सब सोम मेरे देश के नागरिक हो इसलिए सब की रक्षा करना मेरा पहला धर्म है।

राजा ने सब से प्रेम-पूर्वक कहा कि यदि यहाँ जगह के अभाव से इस समय हम सब बैठ भी न सकें तो कड़े-कड़े हो इस संकट के समय को साहस के साथ पार कर लेंगे।

राजा की इस अपार सहानुभूति एवं साहसिता से सभी अवस्थित कर्मचारी बहुत ही प्रसन्न हुए और मुक्त कंठ से राजा की प्रशंसा करने लगे।



महारानी की सहृदयता :



महारानी विक्टोरिया चार घोड़ों की गाड़ी में बैठकर हवा खाने जाया करती थी। एक दिन वह इसी प्रकार खूब अच्छी प्रकार सजी हुई गाड़ी में जा रही थी। उसके अग-रक्षक भी उसके साथ थे।

मार्ग में रानी ने एक आदमी, उसकी पत्नी एवं एक छोटी कन्या को देखा, जो कि एक मृत बालक को लेकर दफनाने जा रहे थे।

रानी ने जब देखा कि केवल तीन प्राणी ही इस मृत बच्चे के शव को ले जा रहे हैं और जिनमें भी बच्चे का पिता, माता व बहन हैं। उस दृश्य को देखकर रानी के मन में यह विचार आया कि मरने के पश्चात् धनवानों की शव-या व्यक्ति होते हैं। परन्तु गरीब एवं दीन-दुखियों के कष्ट में भी कोई साथ नहीं देता है। रानी की ^{लोग इतने हो} ^{हुए कि कुछ ही} ^{ई।} के आंसू आ गये।

उस व्यक्ति ने वह भरी हुई टोपी उस भिखारी को प्रणम की और स्वयं बनता बना। भिखारी सिक्कों में भरी टोपी को पाकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ। इससे उस दीन-पुत्री भिखारी की मरीची दूर हो गई और वह सुख-पूर्वक अपना जीवन व्यतीत करने लगा।

वह व्यक्ति यूरोप का एक महान् सचीव था जो कि संघीत-शासन के लिये समस्त यूरोप में प्रसिद्ध था।

उसने सारंगी गरीब भिखारी के सहायार्थ ही बजवाई की और इस कार्य के द्वारा उसने गरीब भिखारी की सहायता की और उसकी मरीची को बहुत कुछ धनों में दूर कर दिया। इस प्रकार उस समर कलाकार ने अपनी कला का सदुपयोग किया और सब की प्रशंसा का पात्र बना।



पराधीनता :



रूप गोपस्वामी बंगाल प्रदेश के रहने वाले थे। वह प्रभु के बहुत ही भक्त थे। बाल्यावन्या से ही उनका ध्यान प्रभु-भक्ति की तरफ लगा हुआ था। गौड़ राज्य के बादशाह अनाउद्दीन के यहाँ वे बर्जोर के पद पर भी कार्य किया करते थे।

बादशाह न्य गोपस्वामी के कार्य में बहुत ही प्रसन्न एवं मग्न रहते थे। इसलिये वे बर्जोर का बहुत ही सम्मान करते थे।

एक बार वे गवरे ही दरबार में जा रहे थे। गन्ते में बहुत जोर में वर्षा होने लगी। वर्षा में भी वे गले नहीं हटाए और दरबार की ओर बढ़ते ही रहे।

मार्ग में उस बर्जोर देखा कि एक गरीब नितांगी की पत्नी अपने पति में निष्ठा माँग लाने का आग्रह कर रही थी। नितांगी यह जाना था कि इन मृत्युप्राप्त दरबारी पामी में

गुप्तम या नौकरी करने वाले के तिराम कोई भी बाहर नहीं पा सकता है। कुत्ते घोर घम बीब-अस्तु भी ऐसी भयंकर बर्षा में बाहर नहीं निकलते हैं। फिर मैं तो एक इन्सान हूँ।

रूप गोपस्वामी को मिथुन की मात सुनकर बहुत आश्चर्य हुआ। उन्होंने सोचा कि एक मिथुन को कि मिथ्या मीथकर अपने परिवार का पालन-पोषण करता है बर्षा में मिथ्या के मिये जाने को तैयार नहीं है। परन्तु मैं बजीर के एक बड़े पद पर हूँ हूँ भी राज्य-वरवार मे अपनी नौकरी पर बर्षा में जा रहा हूँ।

मिथुन के छन्द बजीर साहब के कानों में घुबने लगे और उन्होंने सोचा कि नौकरी चाहे कितने ही बड़े पद की क्यों न हो साक्षरता नौकरी ही है। नौकरी में मनुष्य पराधीन हो जाता है और बन्धन का अनुभव करता है।

बजीर साहब के मन में ये छन्द घुबने लगे —

“पराधीन सपनेहु सुख नाही।”

रूप गोपस्वामी को अपनी नौकरी से उसी छन्द बूझा हो गई थी। उन्होंने सोचा कि मैं भगवद्भक्त के पवित्र मार्ग को त्याग कर इस मनी के पद पर घासीन होकर मग्न हो गया हूँ। वास्तव में मेरा यह जीवन निरर्थक है और पद से मैं घम बीबन कगलौठ हो रहा हूँ। इन पराधीन जीवन को त्याग कर आत्म-निष्ठता में ही शेष जीवन की लगाना योग्य मार्ग है।

इन प्रकार विचार करके उन्होंने उसी दिन बादशाह के समक्ष अपना त्याग-पत्र दे दिया और मंत्री के महान् पद से अपनी मुक्ति पाकर भक्त्य महाप्रभु के अनुयायी बन गए।

वर्षों तक ज्ञानाराधन किया और आत्म-ज्ञान की खोज में लीन रहे। उन्होंने वृन्दावन में श्याम-कुण्ड और राधा-कुण्ड भी बनवाये। इस प्रकार उन्होंने इतने बड़े पद को त्याग कर अपने ज्ञानाराधन एवं चिन्तन-मनन द्वारा शेष जीवन को उत्तम मार्ग पर लगाया एवं ससार में भी यश प्राप्ति की और अपने शुभ कर्मों के द्वारा आगे भी अच्छी गति प्राप्त की।



न्यायाधीश का न्याय



एक समय का प्रसंग है कि बयराद के खसीपत्र के मन में अपने महल के विस्तार का विचार उत्पन्न हुआ। महल के पास ही एक गरीब बुढ़िया की झोंपड़ी भी थी। उस झोंपड़ी की खसीपत्र साहब हटाकर महल बढ़ाना चाहते थे।

खसीपत्र साहब ने बुढ़िया से झोंपड़ी की माल की। बुढ़िया झोंपड़ी देने का तैयार नहीं हुई। खसीपत्र साहब ने बुढ़िया को पैसों का भी लोभ दिया, परन्तु बुढ़िया ने इस पर भी झोंपड़ी देने से साफ मना कर दिया।

खसीपत्र साहब ने गरीब बुढ़िया की झोंपड़ी पर बमपूर्वक अधिकार कर लिया। बुढ़िया ने न्यायालय में न्याय के लिये प्रार्थना की।

न्यायाधीश बुढ़िया और खसीपत्र के बीच न्याय करने के लिये बन दिये। काजी न्यायाधीश खसीपत्र के पास गया और कहा कि मुझे यहाँ से कुछ मिट्टी प्यारनी है।

खलीफा ने काजी जी को मिट्टी खोदने की स्वीकृति प्रदान कर दी। काजी जी ने बहुत-सी मिट्टी खोदकर थैला भर लिया। काजी जी ने थैले को उठाने के लिये खलीफा से सहायता करने को कहा।

खलीफा साहब ने बहुत प्रयत्न किया, परन्तु उस मिट्टी के थैले को उठा न सके। इस पर न्यायाधीश काजी जी बोले कि खलीफा साहब, तुमने दूसरे की भूमि पर बल-पूर्वक अधिकार किया है। जब तुम पराई जमीन के एक छोटे-से भाग से खोदी हुई मिट्टी भी इस दुनिया के काजी के सामने न उठा सके, तो खुदा के समक्ष अन्तिम फैसले के समय सारी जमीन का भार कैसे उठा सकोगे।

खलीफा साहब के हृदय में ज्ञान की किरणों का प्रकाश हुआ और उन्होंने सोचा कि वास्तव में मनुष्य ससार में परिग्रह के लिये समस्त जीवन को स्वाहा कर देता है और अन्तिम समय में सब कुछ त्याग कर इन्सान खाली हाथ इस ससार से चला जाता है।

खलीफा साहब अपने इस कार्य से बहुत लज्जित हुए और बुढ़िया से क्षमा मांगी और उसकी भोपड़ी सुरक्षित रूप में वापिस लौटा दी।



राजा का धर्म



फ्रांस के राजा से बर्ही के मुख्य नागरिकों ने कहा कि महाराज वनेल्स नगर के लोग आपकी बहुत सपभन्ध कहते हैं और आपकी पुतला भी जसाले हैं। इसलिये उनमें से पाँच-सात को आप बेसलाने की हवा लिखा हो जिससे कि ये इसकी पुनरावृत्ति फिर करने का सख्त न करे।

राजा ने मंत्रियों को बसाकर पूछा कि बर्ही के लोगों ने राज्य-कर दिया है या नहीं। मंत्री बोले कि राज्य-कर व ठीक समय पर दे देते हैं।

राजा ने कहा— 'उन बेचारे भाँसे पुरुषों को कर अधिक देना पड़ता होगा जिससे उनकी भाँसा को कष्ट होता होगा। इस प्रकार व सिद्ध होकर और अपना गुस्सा कम करने

के लिये ही ऐसा करते हैं। विरोध प्रकट करने के लिये ही वे मेरा पुतला जलाते हैं।”

राजा ने कहा—“यदि मेरा पुतला जलाकर उनको कुछ क्षणों के लिये मन में शान्ति प्राप्त हो जाती है, तो इसमें मेरी क्या हानि ? यह राज्य-द्रोह नहीं है।”





सन्धा हीरा-मोती



स्वीडन देश के राजा की बहिन मुजिनो ने अपने हीरे-मोती के सहने बेचकर एक धर्मार्थ धौपधामय बुनवाया। इस धौपधामय से निर्धन पुरुषों का बहुत लाभ हुआ।

राजकुमारी स्वयं भी प्रतिदिन योगियों को सेवा-सुभूषा करने जाया करती थी। एक दिन जब वह योगियों की सेवा में लगी हुई थी तो एक रोमी उसकी सेवा में बहुत ही प्रभावित हो गया। रोमी की आज्ञा पर आई और वह जाने लगा।

राजकुमारी को अपनी सेवा से बहुत संतोष प्राप्त हुआ। राजकुमारी ने कहा—“अपने हीरे-मोतियों को धाब में फिर से बेच सकी हूँ।”



अतिथि-सेवा :



महान्ना इब्राहिम नेवा करना अपना परम कर्तव्य समझने थे। अतिथि-सेवा मिये बिना वे भोजन भी नहीं करने थे।

एक दिन कोई भी अतिथि उनके द्वार पर नहीं आया। इब्राहिम को अतिथि की प्रतीक्षा करने हुए बहुत समय हो गया। जब उन्होंने देखा कि अब किसी भी अतिथि के आने की संभावना नहीं है, तो वे स्वयं बाजार गये और वहाँ से एक वृद्ध को आदरपूर्वक घर ले आये।

उन वृद्ध को मन्त्रागपूर्वक घर पर बैठाया। वृद्ध ने भोजन प्रारम्भ करने में पूर्व ईश्वर की स्तुति नहीं की। इस बात को इब्राहिम सहन न कर सके।

इब्राहिम ने वृद्ध से इनका कारण पूछा तो वृद्ध ने तुरन्त उत्तर दिया कि— 'मैं अग्नि पूजक हूँ, तुम्हारे धर्म को मानने वाला नहीं हूँ।'

सच्चा हीरा-मोती



स्वीडन देश के राजा की बहिन मुबिनो ने अपने हीरे-मोती के सहने बेचकर एक बर्माई औपनामय बुनवाया। इस औपनामय से निर्जन पुर्यों को बहुत नाम हुआ।

राजकुमारी स्वयं भी प्रतिदिन रोमियों की सेवा-सुसूपा करने जाया करती थी। एक दिन जब वह रोमियों की सेवा में लगी हुई थी तो एक रोमी सतकी रमा से बहुत ही प्रभावित हो गया। रोमी की माँस भर आई और वह रोने लगा।

राजकुमारी को अपनी सेवा से बहुत संतोष प्राप्त हुआ। राजकुमारी ने कहा— अपने हीरे-मोतियों को घाब में छिद्र से देख लकी है।

घातक के प्रति सहष्णुता :



यवन देश का राजा दानगील स्वभाव के लिये बहुत ही प्रसिद्ध था। किसी ने राजा के सामने सर्व गुण-सम्पन्न हातिम को प्रशमा कर दी। राजा इसे सहन न कर सका और उसने यह घोषणा करा दी कि जो भी व्यक्ति हातिम का सर काटकर लायेगा, उसे उचित पुरस्कार दिया जायेगा।

डघर-उबर हातिम को खोज प्रारम्भ हो गई। एक व्यक्ति हातिम को ढूँढता-ढूँढता बहुत थक गया था, इसलिये वह एक गृहस्थ के यहाँ ठहर गया। उस गृहस्थ ने प्रतिथि को दो-चार दिन तक बहुत विश्राम दिया और उसकी सेवा की। जब वह व्यक्ति जाने लगा तो हातिम बोला कि—“इतनी जल्दी कहाँ जा रहे हो? ऐसी शीघ्रता का क्या काम है? यदि मेरे योग्य कोई ऐसा कार्य हो जिसमें मे सहयोग दे सकूँ हो अवश्य वतलाओ। मैं तुम्हारी सहायता अवश्य करूँगा।”

इबाहिम ने उसको बाफिर समझ कर घर से बाहर निरास दिया ।



चार व्यक्ति :



“क्या खूब सौदा नकद है । इस हाथ दो और उस हाथ लो ।”

महाराजा विक्रमादित्य की सभा में एक यक्ष ने चार प्रश्न किये — (१) अभी भी है और भविष्य में भी रहेगा । (२) अब तो है, परन्तु पीछे नहीं रहेगा । (३) अब तो नहीं है, परन्तु भविष्य में रहेगा । (४) अब भी नहीं है और भविष्य में भी नहीं रहेगा ।

राजा ने उपरोक्त कार्य कालिदास को सोप दिया । कालिदास और यक्ष, दोनों गुप्त वेप में एक सेठ के यहाँ गये और बोले— “हम अतिथि हैं, इसलिये आपको कुछ धन व्यय करना पड़ेगा, कष्ट भी उठाना पड़ेगा और इसके अतिरिक्त कुछ अपमान भी सहन करना पड़ेगा ।”

कालिदास और यक्ष बोले कि राजा ने एक तालाब को तुड़वा दिया है, इसलिये उसके निर्माण हेतु एक हजार रुपये की अत्यन्त आवश्यकता है । किन्तु यह बात राजा के कानों तक न पहुँचे, नहीं तो आपको तड़ दिया जायेगा ।

घमस्तुक्त बोला— 'हातिम का सर काटकर राजा के पास ले जाना है। राजा बहुत बड़ा इनाम देय। इसलिये धाय इस कार्य में मेरी सहायता करेय ता धायको भी उचित इनाम मिलेगा।'

हातिम बोला—'इसमें कौन-सी बड़ी बात है। यदि धायका घसा हो पाय ता बहुत ही प्रसन्नता की बात है।'

हातिम बोला—'मैं स्वयं हातिम हूँ। इस समय घण्टा घबहर है। यहाँ कोई मीकर यादि भी नहीं है, इसलिये धायको मेरे मारने में कोई कठिनाई नहीं होगी। धाय मुझे मारकर मेरा सर यासानी से राजा के पास ले जा सकते हैं। ऐसे घबहर पर धायको कोई पकड़ने वाला भी नहीं है। मेरे मारने से यदि तुम्हाय कार्य बन पाय तो अच्छा ही है।'

हातिम की बात को सुनकर वह व्यक्ति स्तब्ध रह गया। बहुत देर तक वह घमस्तुक्त कुछ न बोले सका। कुछ ही क्षणों के पश्चात् वह हातिम का सर काटने की बात स्मरण कर हातिम के करखों में फिर पड़ा धीर शून मान सी।



इस बात को सुनकर दोनों चल दिये और कालिदास बोले—
“इस भिखारी के पास अब भी नहीं है और आगे भी
नहीं मिलेगा।”



सेठ जी बोले—“घाय खयें न मिले यदि राजा को सबर पड़ेगी तो बेसा जायेगा । दोनों सेठ जी से खयें लेकर बाजार में घायें तो कामिदास यज्ञ से बोले—“इस सेठ के पास घब भी है धीर घायें भी आर्थिक मायना के कारण इसे मिलेगा ।

इसके पश्चात् एक दूकान पर गये धीर उसी प्रकार वैसे का खाना किया । दूकानदार बोला—“मैं हुरामजोरों का पोषण नहीं करता हूँ । घन-सम्पत्ति को कुछ भी मुझे मिली है वह मुटाने के लिये नहीं है, इसलिए मैं एक पाई भी नहीं दूँ वा । दोनों वहाँ से चम दिये । कामिदास जी बोले—“इसके पास घब तो है लेकिन घायें नहीं मिलेगा ।”

कामिदास धीर यज्ञ गरीब का शेष बनाकर एक मिचारी के पास गये धीर बोले—“कुछ खाने को दो ।” वह मिचारी खाने के लिये बैठा ही था ।

मिचारी बहुत प्रसन्न हुआ धीर वह जो सब खाने बैठा था उसमें से तीन हिस्से किन्हीं धीर बोला—“घाय तो इससे ही काम चला लीजिये कुल धीर परिश्रम करैयें धीर जायेंगे । उस गरीब की बात को सुनकर दोनों वहाँ से चम दिये धीर कामिदास ने यज्ञ से कहा—“इसके पास नहीं है परन्तु घायें मिलेगा ।”

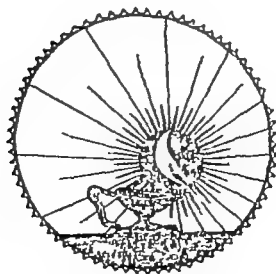
इसके पश्चात् एक गरीब मिचारी भीक माँग रहा था । उसको १ रु० दिये धीर कुछ समय के पश्चात् उसी गरीब के पास मिचारी का शेष बनाकर उसके पास गये धीर बोले—“कुछ वैसे दे दीजियें कुछ खानी है ।” वह गरीब बाना—“छो कहीं से घायें भोजन माँगते-माँगते बहुत समय हो गया है परन्तु कोई नहीं देता है ।

गुरु जी ने सोचा कि बहुत समय हो गया, परन्तु आरुणि अभी तक खेत से वापिस नहीं आया है। ऋषि स्वयं अन्य शिष्यों सहित वहाँ गये।

ऋषि ने 'बेटा आरुणि' कहकर आवाज लगाई। आरुणि बोला—“गुरु जी, खेत का पानी रोकने में मैं असमर्थ था, इसलिए स्वयं ही पानी निकलने के रास्ते में लेट गया हूँ, जिससे कि खेत का पानी बाहर न निकल सके।”

इसे देखकर ऋषि बहुत प्रसन्न हुए और आरुणि को स्वयं अपने हाथों से उठाकर प्रेमपूर्वक छाती से लगा लिया।

ऋषि ने अन्य शिष्यों को आरुणि के कार्य से शिक्षा ग्रहण करने को कहा। गुरु जी आरुणि की भक्ति से इतने प्रभावित हुए कि उसका नाम उदालक रख दिया। उदालक ने विद्याध्ययन किया और सर्व विद्याओं में प्रवीण एवं पारंगत होकर उदालक ऋषि के नाम में विख्यात हुआ।



आज्ञाकारी शिष्य



एक बार आपोश शीष्य ऋषि ने धारमि नामक शिष्य को योग्य समझकर आनाम्यास करने का विचार किया। ऋषि ने उसकी पराक्षा हेतु बेट का काम उसको दिया।

ऋषि ने धारमि से कहा कि—“तुम बेट पर बांधो किन्तु इतना ध्यान रखना कि सिखाई हुये समय बेट का पानी इधर उधर न निकल जाए। बेट का पानी बाहर न निकले—ऐसी पाई बांध कर घाना।”

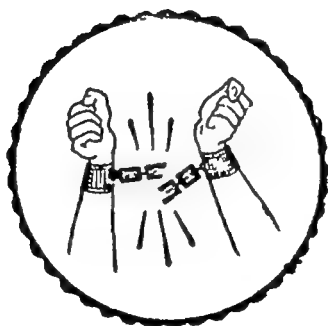
गुरु की आज्ञा से धारमि बेट पर गया। उसमे बेट का पानी रोकने का पूर्ण प्रयत्न किया किन्तु पानी न रुक सका। धारमि ने मन से सोचा कि गुरु जी की आज्ञा का पालन करना है इसलिये किस प्रकार कार्य को संपूरा छोड़कर नर बाँधे।

धारमि ने प्रत्येक सम्भव प्रयत्न किये परन्तु पानी न रुक सका। अन्त में निरुपाय होकर पानी निकलने के रास्ते में स्वयं सेट गया।

चढ़कर नीचे की तरफ देखा जाय, तो घाम और भाड़—सब एक समान दिखलाई देते हैं, -उसी प्रकार यदि मन को ऊंचाई की भूमिका पर ले जाकर खड़ा कर देते हैं तो साधारण भेद-भावों की ओर ध्यान केन्द्रित नहीं होता ।”

सभी धर्मों में मुख्य और सामान्य गुण हैं, परन्तु सफुचित मनोवृत्ति एवं साम्प्रदायिकता की सीमा से बाहर होकर ही ये बातें ध्यान में आती हैं ।

अच्छा एवं सद्गुणी सब चाहे जिस धर्म का हो, उसे ईश्वर-भक्त अवश्य कहना चाहिए और उसका यथोचित आदर-सत्कार करना भी प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है ।



धार्मिक-समता



एक समय का प्रसंग है कि कनकर महाराज जब नबी माहब ने एक कबीर के दर्शन किये। वह कबीर निम्न ईरान तुर्किस्तान और समस्त भारत की यात्रा करके आया था।

कनकर साहब ने पूछा—“छाई बाबा आपने किस तीर्थ में सबसे अधिक रुक्या म साधु-संत देने।” कबीर बोला—“हरद्वार के कु म मेरे में रहे हैं।

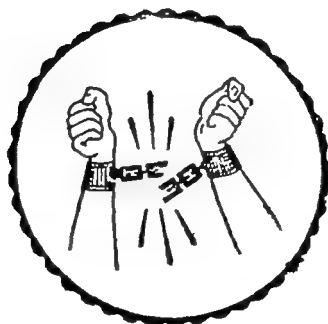
मैं तो प्रत्येक देश में कम तथा अधिक रुक्या में सच्चे संत रहे हैं परन्तु भारत में तो साधु-मनों की एक जमात ही कहा जाहि। यदि ऐसा न हो तो लोगों के पाप के बीजों से दुनिया का सर्वनाश हो जाय।

कनकर साहब आश्चर्य-चकित होकर बोले—“छाई बाबा आप तो मुसलमान कबीर हैं, फिर आपने हिन्दुओं के तीर्थ हरद्वार में कु म के समय यात्रा क्यों की?” छाई जी बोले—“भारत में आप साम्प्रदायिक भेद भाव से ऊपर उठकर देखो तो बहुत कुछ बराबर दिखाई देता। जिस प्रकार ऊँचे पर्वत पर

चढ़कर नीचे की तरफ देखा जाय, तो घास और भाड़—सब एक समान दिखलाई देते हैं, -उसी प्रकार यदि मन को ऊँचाई की भूमिका पर ले जाकर खड़ा कर देते हैं तो साधारण भेद-भावों की ओर ध्यान केन्द्रित नहीं होता ।”

सभी धर्मों में मुख्य और सामान्य गुण हैं, परन्तु सकुचित मनोवृत्ति एवं साम्प्रदायिकता की सीमा से बाहर होकर ही ये बातें ध्यान में आती हैं ।

अच्छा एवं सद्गुणी सत्त चाहे जिस धर्म का हो, उसे ईश्वर-भक्त अवश्य कहना चाहिए और उसका यथोचित आदर-सत्कार करना भी प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है ।



अतिथि-सत्कार



धूरेब महोपाध्याय घर में बूमने के लिए निकले। मार्ग में मौसबी साहब मिल गए। धूरेब भी मौसबी साहब के साथ बातचीत करते हुए घर तक आ गए।

मौसबी साहब को प्यास भगी थी। सा उम्हाने पानी माँगा। मौसबी साहब को बिलास में पानी दिया गया। पानी पीने के पश्चात् मूत्र गिलास मौसबी साहब पास में लड़े बालक को देने लगे।

बालक ने सोचा मुसलमान फकीर का मूत्र गिलास मैं कैसे सूँ ? तब महोपाध्याय जी ने धीन के संकेत द्वारा गिनाम मेने का कहा। बालक ने गिलास में लिया।

मौसबी साहब के चले जाने पर महोपाध्याय जी ने बालक को समझाया और कहा— हिन्दू धर्म के नाते इस प्रकार मूत्र गिलास मेने से दुःख पडस्य हुआ होमा किन्तु याद रखना चाहिए कि अपने घर पर कोई भी प्रतिधि धारण सा उसके सत्कार करने में

धर्म व जाति का विचार नहीं करना चाहिए। अतिथि को साक्षात् ब्रह्मा, विष्णु समझकर उसका सत्कार करना चाहिए।”

अतिथि-सत्कार में यदि तनिक सी भी कमी पड़े, तो हिन्दू-धर्म का वास्तविक रूप में पालन नहीं होता है। हम इस प्रकार अतिथि का सत्कार न करें, तो हम सद-गृहस्थ ब्राह्मण की श्रेणी में नहीं आ सकते।

“तुमने मुसलमान भाई का झूठा गिलास स्पर्श किया, इससे तुमको कोई दोष नहीं लगा है। हाँ, यदि तुम मौलवी साहब का उचित सत्कार नहीं करते, तो तुम बहुत बड़ी मात्रा में कर्तव्यहीन की श्रेणी में गिने जाते और पाप के भागी बनते।”



निष्पाप भक्त



काशी के बाट पर एक बार गृहण के अवसर पर बहुत बड़ा मेला लगा था। महादेव धीरे पार्वती भी मेले में आए?

महादेव धीरे पार्वती ने सोचा कि यहाँ परीक्षा करनी बाहिरै इतनी जन-सङ्ख्या में मन्त्रा भक्त कौन है।

शिबजी पुष्पी पर जेट बड़े धीरे मृत-प्राप दिखाई देने लगे। पार्वती पास में खोक। मुखा में बैठ गई। पार्वती भी ने अपने पति की मृत्यु के सम्बन्ध में लोगों को बतलाया धीरे कहा—“जो निष्पाप भक्त होगा वही मेरे पति को बिम्बा कर सकता है परन्तु यह ध्यान रहे जो भी पापी होगा वह इस सब को स्पर्श करते ही मृत्यु को प्राप्त हो जायगा।”

मेले में जितने भी व्यक्ति आए थे वे भी अपने को भक्त समझने थे परन्तु पार्वती को इस बात को सुनकर किसी ने जो सब को छूने का साहस नहीं किया।

अन्त में एक हरिजन बोला—“मैं बहुत पीछे स्नान करके बापिस आता हूँ फिर आपके पति को बीम्बित करूँगा।

अगर तीन दिन की आयु बढ़ जाए !



बगदाद का खलीफा अपने निजी खर्च के लिए प्रतिदिन छाम को राज्य कोष से एक स्वया मिया करता था । इससे अधिक लेने का उसे त्याग था । परन्तु राज्य के अन्य कर्मचारियों को अपनी धाँजा से अधिक बेतन मिलता था । खलीफा को अपने बेतन की व्यवस्था स्वयं ही करनी पड़ती थी । इसलिये अपने तथा अपने परिवार के खले-पीने व रुपये आदि का खर्च वह एक रुपये से ही चलाते थे ।

एक समय ईश्वर का लीलाकार थाया । राज्य के सभी लोगों ने स्वयं भी अच्छे-बुरे रुपये पहले और अपने मात-बच्चों को भी पहनाये ।

खलीफा के बच्चों ने जब सब को सुन्दर रुपये पहले देखा तो वे भी नये रुपयों के लिए हूठ करने लगे । खलीफा की पत्नी ने बच्चों को बहुत समझाया परन्तु उन्होंने एक न सुनी ।

अन्त में खलीफा की पत्नी ने खलीफा से कहा—“आप तीन दिन का वेतन पेशगी (Advance) ले लीजिए, उससे वच्चों के नये कपड़े बन जायेंगे ।”

खलीफा ने पत्नी की बात सुनकर उत्तर दिया—“अगर तू खुदा के पास जाकर मेरी जिन्दगी के तीन दिन का पट्टा ले आवे तो उसके आचार पर मैं राज-कोप से तीन दिन का पेशगी वेतन ले लूंगा ।”

खलीफा के इस उच्च आदर्श के सम्बन्ध में जिसने भी सुना उसी ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की ।



आदर्श-मैत्री



एक बार सिणकुञ्ज के राजा ने डेवन नामक युवक को प्राण-रक्ष की सेवा दी । डेवन ने राजा से एक वर्ष का समय माँगा कि मैं अपने देश घीस में जाकर अपनी बाल्यार न मान का प्रबन्ध कर आऊँ । जबकि पूरी होते ही सोटने का उसने वचन दिया ।

राजा तिरस्कार पूर्वक बोला—“यहाँ ऐसा कोई व्यक्ति है जो तेरी बमानत दे सके क्योंकि बिना बमानत के तुमको नहीं छोड़ा जा सकता । परन्तु इतना ध्यान रखे कि यदि तुम समय पर उपस्थित न हुए तो बमानत देने वाले को मृत्यु-दण्ड दे दिया जायगा ।

डेवन का एक मित्र पित्रियस उस समय वहाँ मौजूद था । राजाका सुनकर वह बहुत प्रसन्न हुआ और उसने सहर्ष बमानत देने की प्रतिज्ञा की ।

अब तो राजा आश्चर्य में पड़ गया क्योंकि वह किसी पर भी विश्वास नहीं करता था । उसकी समझ में नहीं आया कि

इतने बड़े सकट को सामने देख कर भी एक मित्र ने हमारे का किस प्रकार विश्वास कर लिया।

डेमन अपने देश को चला गया। पिथियम को बदले में नजरबंद कर दिया गया। इस प्रकार एक वर्ष पूर्ण होने को आया, किन्तु डेमन वापिस नहीं लौटा।

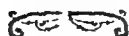
पिथियम ने सोचा कि उस प्रकार मित्र के लिए मृत्यु-दण्ड पाने में मुझे कोई भी दुःख नहीं होगा। मेरा मित्र डेमन या तो मर गया होगा या किसी कारण-विशेष से उसे पहुँचने में विलम्ब हो रहा है।

पिथियम को फाँसी देने की तैयारी होने लगी। फाँसी देने के कुछ ही क्षण पूर्व डेमन आ पहुँचा।

राजा दोनों मित्रों के इस अद्भुत विश्वास और सच्ची मैत्री से बहुत ही प्रभावित हुआ और उमने फाँसी की सजा भी माफ कर दी। राजा ने दोनों से प्रार्थना की कि आज से मुझे भी अपना मित्र समझना।

जहाँ पर परस्पर सच्चा प्रेम, दृढ़-विश्वास और स्वार्थ, त्याग की वृत्ति न हो, वहाँ मित्रता नहीं हो सकती। पिथियस और डेमन की सच्ची मित्रता अभी तक समस्त यूरोप में प्रसिद्ध है।

“विपद पसीदी जे फसे,
ते ही साँचे मीत।”



भंगी की उदारता



एक दिन म्युनिसिपल कमिस्नर ने बंगी-भंगियों के जमादार से कहा—“यह चादमी कार्य करने में बहुत ही होशियार है। इसलिये इसे काम पर लगा दो।”

जमादार ने स्पष्ट कहा—“साहब कहीं भी बगह्र कामी नहीं है। इसलिये कुछ प्रकार इसे काम पर लगा दो।” इस पर कमिस्नर साहब ने कड़क कर उत्तर दिया—“किसी भी चादमी को काम से हटा या धीरे उसके हटने से जो बगह्र चाधी हो उसी काम पर इसे लगा दो।”

जमादार ने कहा—“साहब बिना कारण के किसीके पेट पर भाउ भाई। किसीकी रोबी को बिना रोप के सो दो। इस प्रकार का अनुचित कार्य मेरे द्वारा होना असम्भव है।”

जमादार का उत्तर सुनकर कमिस्नर साहब को मन में बहुत संकोच हुआ और उसने अपने मन में सोचा कि इस जमादार की यास्या एवं विचार मेरे से कहीं उच्च हैं।

यदि बिना कारण किसी को हटाकर इस व्यक्ति को काम पर लगा दिया जाता तो कितना अनर्थ एवं अनुचित कार्य होता और उस निर्दोष व्यक्ति की आत्मा को कितना कष्ट होता? इस प्रकार के विचार मन में आने से कमिश्नर साहब को बहुत गर्मिन्दा होना पड़ा और उस दिन से उन्होंने उस जमादार को आदर की दृष्टि से ही देखा ।



सन्त की शान्ति



प्रमानक हो एक दिन एक सत की मेर सुस्तान से हो गई। सत बोला— 'भार्य सखी को संयम एवं नियम से जीवन व्यतीत करना चाहिए और इसी नीति के अनुसार सांसारिक कार्यों को बनाना चाहिए जिससे कि मनुष्य कभी भी स्वार्थी एवं पापारामा की श्रेणी में न गिना जाय।

सत की इस बात को सुनकर सुस्तान बहुत ही कोपित हुआ और उसने सत को भार बालने का आदेश दिया।

छकीर बोला— 'हे मित्र डेर मत कर। जल्दी से जल्दी मुझे आत्माह के पास भेज दे। परन्तु याद रख—हितकारी और सत्य बचन सर्वदा निर्भयतापूर्वक कहना—यही उच्च जीवन का मुख्य मन्त्र है।'

छकीर चाये बोला— 'मैंने यह उपदेश लेकर अपना कर्तव्य पूरा किया है। मैंने बिना प्रयोजन यह शिक्षा दी है यदि इसका फल मुझे भुल्लु-बुल्लु मिलेगा तो सदा सदा रहूँगा।'

इस पर राजा को कुछ ज्ञान हुआ और उमने सत के सामने आत्म-समर्पण कर दिया और अपनी भूल की क्षमा माँगी ।



मिथ्याभिमान



ग्रीस देश के घाटिका नामक ग्राम में घाटिक विषादिस नाम का एक धीमन्त रहता था। उसे अपनी धन-दौलत ईगले नाम-बचीने घादि का बहुत समिमान था।

एक दिन घईकार बस सुकराठ (सोर्बेटिस) के सामने अपने बैमब की प्रशंसा करने लगा। तब सुकराठ ने नक्से के सामने से बाकर उससे कहा—“जरा इस नक्से में घाटिका ग्राम कहाँ है बतलाइयेगा ?” घाटिका ग्राम बहुत छोटा था इसलिये बहुत ही सूक्ष्मता से लिखा था। इसी कारण बस उसे खोज करने में बेर लगी। जब ग्राम का नाम मिल गया तो सुकराठ ने पूछा—“जब यह हुआ कि आपकी बमीन-बायबाब कहाँ है ?”

घाटिक विषादिस ने उत्तर दिया—“यह पता लगाना भी कठिन है और इस नक्से में यह भी हुई भी नहीं है। चूंकि मेरी बमीन बहुत कम है, इसलिए उसका उल्लेख इसमें नहीं है।”

सुकराठ बोले—“सेठ साहब आपकी कितनी बड़ी धूम है। समस्त यूरोप पर एक छोटा-सा देश घीस हो और उसमें आप ?

का छोटा-सा गाँव आटिका हो, जिसको ढूँढने में भी बहुत समय लगता हो और उसमें भी इतनी आपको जमीन, जिसका पता भी नहीं लग सकता हो। अब आप स्वयं ही समझ लीजिए कि कहाँ तक अपना अभिमान करना ठीक है।”

ससार में अपना सच्चा स्थान कहाँ है ? इसका विचार किया जाय, तो मनुष्य में मिथ्याभिमान उत्पन्न हो ही नहीं सकता है।



मिथ्याभिमान



ग्रीस देश के धाटिका नामक ग्राम में धार्मिक विवाहित नाम का एक यौमन्त रहता था। उसे अपनी मन-शीलता अपने बाप-बहीषे धार्मिक का बहुत समिमान था।

एक दिन झूठकार बच मुकराठ (सोल्डेटिस्) के सामने अपने बेमन की प्रशंसा करने लगा। वह मुकराठ ने लगे के सामने ले जाकर बतते कहा—“जरा इस मन्षे में धाटिका ग्राम कहाँ है बतनाइयेगा ?” धाटिका ग्राम बहुत छोटा था इसलिये बहुत ही सुकमता से लिखा था। इसा कारण बच उसे धोख करने में देर लगी। जब ग्राम का नाम मिस पया तो मुकराठ ने पुछा—“अब यह कहो कि आपकी जमीन-आपदाह कहाँ है ?”

धार्मिक विवाहित ने उत्तर दिया— यह पता लगाना भी कठिन है धीरे इस मन्षे में यह भी हुई भी नहीं है। चूँकि येरो जमीन बहुत कम है, इसलिये उसका जन्मस इसमें नहीं है।”

मुकराठ बोले—“सेठ साहब आपकी चिन्तनी बड़ी कम है। समस्त सूर्यमल पर एक छोटा-सा देश ग्रीस हो धीरे उसमें आप

भी मालूम नहीं है कि कौन-सा आम खट्टा है और कौन सा मीठा ?”

इब्राह्म हस कर बोले—“आपने मुझे वगीचे की रक्षा के लिये रखा है । फल खाने का अधिकार नहीं दिया है । विना अधिकार के मैं यहाँ के फल किस प्रकार खा सकता हूँ और जब तक खाऊँगा नहीं, तब तक खट्टे-माठे का ज्ञान किस प्रकार हो सकता है ।”

सेठ जी सत की बात को सुनकर चुप हो गये और विचार में पड़ गये । सेठ जी बोले—“क्या आपने अभी तक कोई फल इस वगीचे से नहीं खाया । सत ने कहा —“आज तक मैंने कोई फल नहीं खाया है । सत के ये वाक्य सुनकर सब आश्चर्य-चकित रह गये ।



संत इनास का अस्तेय-व्रत



एक समय सेंट इनास बेस-बिसेस में भ्रमण करते हुए एक सेठ के बगीचे में माकर ठहरे। सेठ ने इनास को अपना बगीचे की रक्षा के लिये उपयुक्त समझ कर मासी के काम पर नौकर रख लिया।

इनास ने मासी का काम करना प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लिया। सेठ के बाग के शांत वातावरण को अपनी मूर्ति साधना के लिये उपयुक्त समझ कर ही इनास ने मासी का काम करने की स्वीकृति दी थी।

एक दिन सेठ जी अपने पिछों सहित बगीचे में घूमने हेतु निकले। घाम के पेट पर पके घाम लटक रहे थे। सेठ जी ने इनास को कुछ घाम तोड़कर लाने की आज्ञा दी। घाम तोड़कर लाने लगे।

सेठ जी तथा उनके पिछों ने घाम चढ़े तो भावपूर्ण पड़ा कि घाम लट्ट है। इस पर सेठ जी ने कोप के साथ कहा—“तुम्हें बगीचे में इतने दिन काम करते हुए हो गये परन्तु अभी तक यह

भी मालूम नहीं है कि कौन-सा आम खट्टा है और कौन सा मीठा ?”

इब्राह्म हस कर बोले—“आपने मुझे वगीचे की रक्षा के लिये रखा है । फल खाने का अधिकार नहीं दिया है । विना अधिकार के मैं यहाँ के फल किस प्रकार खा सकता हूँ और जब तक खाऊँगा नहीं, तब तक खट्टे-माठे का ज्ञान किस प्रकार हो सकता है ।”

सेठ जी सत की बात को सुनकर चुप हो गये और विचार में पड़ गये । सेठ जी बोले—“क्या आपने अभी तक कोई फल इस वगीचे से नहीं खाया । सत ने कहा —“आज तक मैंने कोई फल नहीं खाया है । मत के ये वाक्य सुनकर सब आश्चर्य-चकित रह गये ।



पत्थर से भी सीख लो !



बोपदेव बसिछ के बावब बंसी एका महादेव के सुभा-वर्जित थे। जब वे श्याकरण का अध्ययन कर रहे थे तो उन्हें स्मरण नहीं रहता था। इसीलिए उनको अध्ययन प्रिय व कठिन लगता था।

स्मरण न होने के कारण ही कुछ भी उनसे बहुत ही अप्रसन्न रहते थे। इस प्रकार पाठशाला में उनका सदा अपमान होता था।

एक बार पाठ याव न होने के कारण कुछ भी से उनको बहुत पीटा। बोपदेव निराश होकर एक कुँए के पास जाकर चिन्ता-मग्न अवस्था में बैठ गये।

कुछ समय पश्चात् एक स्त्री उस कुँए पर पानी भरने आई। स्त्री ने डोल कुँए में डाला तो बोपदेव ने देखाकर मन में विचार किया कि—“निरन्तर रस्सी की रगड़ से जब पत्थर भी घिस गया तो क्या यह सम्भव नहीं है कि निरन्तर परिश्रम करने से मुझे श्याकरण याव हो जाय।”

अब तो वोपदेव को दृढ़ विश्वास हो गया और उन्होंने अथक प्रयत्न करना प्रारम्भ कर दिया । वोपदेव बाद में बहुत ही प्रकांड विद्वान् हुए और उन्होंने 'भुग्व-वोध' नाम का व्याकरण तैयार किया ।

“करत-करत अभ्यास के,
जड-मति होत सुजान ।
रसरो आवत-जात ते,
सिल पर परत नितान ॥”



क्रोध ही बाँडाल है



एक घोषी नदी किनारे ध्यान में मग्न बैठा था। एक बाँडाल सामा धीरे घोषी के निकट कपड़े धोने लगा। पानी के छूँटे जब घोषी पर पड़े तो उसकी भाँसे खुसी।

घोषी ने क्रोधित होकर बाँडाल को वहाँ कपड़े धोने से मना किया परन्तु बाँडाल धपने कार्य में एकाग्र-चित्त था इसलिए उसने माँगी की आज्ञा को नहीं सुना।

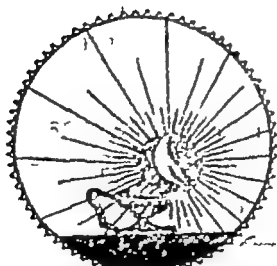
माँगी और अधिक क्रोध के आशेष में धा मचा और उसने उठकर बाँडाल को चिमटे से पीटा। बाँडाल ने कहा—“माँई मेरे से धनवाने में बहुत बड़ी भूल हो गई है। उसके लिए क्षमा कीजिए।

इसके पश्चात् घोषी को ध्यान सामा कि बाँडाल के स्पर्श से धपबिन्न हो गया है, इसलिये गंगा में स्नान करना चाहिए।

माँगी ने सदा में स्नान किया और इसके तुरन्त पश्चात् बाँडाल ने भी गंगा में स्नान किया।

योगी ने चाडाल से पूछा—“तू ने स्नान क्यों किया ? तू मेरे स्पर्श से अपवित्र थोडा ही हुआ है । ” चाडाल बोला—“आप स्वयं तो पवित्र हैं परन्तु जिस समय क्रोध आपके अन्दर प्रवेश कर गया था, उस समय आप चाडाल ही बन गए थे और उमी अवस्था में आपने मुझे पीटा था । आपके स्पर्श से मैं अपवित्र हो गया था, इसलिए पवित्र होने की भावना से गंगा-स्नान किया है ।”

“काम-क्रोध मव-लोभ की,
जब लो मन में खान ।
तब लो पण्डित मुर्खा,
तुलसी एक समान ॥”



दयालु-हृदय



इन्नी देश में साहिब नामक गांव के पास का एक बहुत बड़ी नदी में बाढ़ था गई। जिसके कारण बियाना नगर के निकटवर्ती पुल के दोनों किनारे टूट गये।

गांव की रक्षा करने की चिन्ता में बहुत से व्यक्ति नदी के किनारे पर इच्छे हो गये। उस पुल के पास एक मरीब परिवार रहता था।

पुल बचकर टूटता जा रहा था परन्तु वह बोन परिवार वही पर इस भाधा से बैठ हुआ था कि पानी कम हो जायगा और हम लोग बच जायेंगे।

नदी के तट पर बड़े लोगों को पानी के बड़ते हुए देख से बहुत ही चिन्ता हुई। उन्होंने सोचा कि वह गरीब परिवार पानी की चपेट में जाता जा रहा है और क्षीय ही नष्ट हो जायगा।

किनारे पर बड़े व्यक्तियों में से एक दयालु पुरुष बोला— 'जो कोई भी व्यक्ति इस परिवार को बचा कर लाएगा उसको

पाँच-सी रुपये इनाम मिलेगा ।” परन्तु मृत्यु के भय से कोई भी जाने को तैयार न हुआ ।

अन्त में एक व्यक्ति माहस के साथ नाव लेकर नदी में उतरा । नाव बहुत ही सकट एव परिश्रम के पश्चात् उस दीन-परिवार के पास तक पहुँच सकी । उस व्यक्ति ने रम्सी की सहायता से गरीब परिवार के सब आदमियों की बचा लिया और सुरक्षित रूप में उनको बाहर निकाल लाया ।

कुछ ही क्षणों के पश्चात् वह पुनः पूर्णतया टूट-गया । उस वहादुर एव साहसी पुरुष को जब ५००) का इनाम दिया जाने लगा, तो उसने स्पष्ट मना कर दिया ।

वह बोला—“यह तो आप सब लोगों ने देख ही लिया होगा कि ५००) के लोभ से कोई भी व्यक्ति नदी में प्रवेश को तैयार नहीं हुआ । मैं स्वयं भी रुपये के लोभ से नहीं, वरन् दया के वशीभूत होकर गया हूँ । मैंने दया के कारण से अपनी मृत्यु का भी ख्याल नहीं किया ।”

नदी के किनारे पर खड़े सभी लोगो ने उसकी दया, साहस, एव त्याग की भूरि-भूरि प्रशंसा की ।

क्रोध का इलाज



एक स्त्री घपना पड़ोसिन से बाहर बोली— बहिन मेरा पति बहुत ही बीमार है। उसका क्रोध देखकर मुझे भी क्रोध भा जाता है और लड़ाई। कारण प्रतिदिन बना-बनाया मोचन पड़ा रह जाता है।”

पड़ोसिन बोली—“बहिन इसमें विचार करने की क्या बात है? मेरे पास एक रवाई है वह बहुत ही धन्य है और क्रोध के लिये तो रामदास का काम करती है। तबसे समय तुम संघको मुंह में रख लेना। इससे तुम्हारे पति शान्त हो जायेंगे।

उस स्त्री ने तीन-चार दिन तक ऐसा ही उपाय किया इससे उसका पति शान्त हो गया। वह स्त्री पड़ोसिन के पास गई और कहा—“तुम्हारी रवाई बड़ी धन्य है। इसलिये इसका मुस्ता मुँह बतना हो जिससे इस रवाई को तैयार रखूँ और जब प्रायश्चित्त पड़े मुँह में रखूँ।”

पड़ोसिन बोली—“बहिन यह सिवाय स्वच्छ पानी के और कुछ नहीं है। जब तक पानी तेरे मुँह में रहा तब तक तुम शान्त

न सकी और इसी कारण से तुम्हारे पति स्वयं चुप हो गए। जब सामने वाले आदमी को जवाब न मिले तो वह स्वयं ही चुप हो जाता है। आखिरकार, उत्तर न मिलने के कारण वह कब तक बोलता रहेगा।”



योगेन्द्रनाथ का आत्म-त्याग



योगेन्द्र नाथ बड़े-
दायाद कमकसा के मूर्ख सोमसिद्धरं थे। एक दिन वे अपने मित्रों
सहित बग-स्नान करने गए।

यंभा बहुत लोढ़ा गति से बह रही थी। सब मित्र स्नान
करने से घीर तैरना भी आरम्भ किया।

तब मित्र पानी के बेग से बहेने लया। अपने अपने मित्रों को
सहायता के लिए पुकारा परन्तु कोई भी मित्र मृत्यु के सब से
उसके निकट पहुँचने को तैयार न हुआ।

योगेन्द्रनाथ से न रहा गया घीर वह धकेले ही तैरते-तैरते
डूबते हुए मित्र के पास पहुँच गए। बूबडा कठि सहायता करने
बात को किस प्रकार पागल की तरह से पकड़ने को लपकता है
इसको सभी जानते हैं। उसने भी इसी प्रकार से योगेन्द्रनाथ को
पकड़ लिया।

सहायता के लिए नाथ चेन्नी गई। जैसे ही नाथ उसकी
आर्ष निकट पहुँची वेगे ही डूबने वाला व्यक्ति छूट कर योगेन्द्र के

कन्धे पर चढ़ गया। वह घबराया हुआ तो था ही, शीघ्र ही योगेन्द्रनाथ के कन्धों पर सब दवाव डालता हुआ नाव में चढ़ गया। योगेन्द्रनाथ दवाव पड़ने से नीचे पानी में डूब गए। बहुत प्रयत्न करने पर भी उनका पता न लग सका।

"धन्य है, ऐसे महान् व्यक्तियों को जो दूसरों की रक्षार्थ अपने प्राणों की भी बाजी लगा देते हैं।"

उन्नति की कुँजी



डॉन हन्टर विनायक के एक प्रसिद्ध डाक्टर थे। वे अपने कार्य में बहुत ही निपुण थे। उन्होंने चरीर विज्ञान में भी बहुत अच्छी खोज की थी।

एक समय एक व्यक्ति ने उनसे पूछा— 'डाक्टर साहब आपने ऐसा कौन-सा प्रयत्न किया है जिसके कारण आप इतने प्रसिद्ध हो गए हैं ? ऐसा कौन-सा काम है जिसके करने से आप इतनी उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हो गए हैं ?'

डाक्टर हन्टर ने कहा— 'मेरा एक ऐसा नियम है, बस— पालन करने से मैं इस प्रकार उन्नति प्राप्त कर सका हूँ और प्रसिद्धि का भी काम भिन्ना है। मेरा यह नियम यह है कि कोई भी कार्य किया जाए तो उसका प्रारम्भ पुरुषार्थ विचार करके किया जाए। इसी नियम के आधार पर मैं किसी कार्य को प्रारम्भ करने से पूर्व बूझ अच्छी प्रकार से विचार करके बैठता हूँ कि यह कार्य करने में मैं समर्थ हूँ या नहीं। यदि कार्य असम्भव हो तो मैं उसे प्रारम्भ ही नहीं करता हूँ। जो कार्य विचार के

पश्चात् करता हूँ, उसे पूर्ण करने में एकाग्र-मन से सतत प्रयत्न करता हूँ।

कोई भी काम हाथ में लेने के पश्चात् मैं उसे छोड़ता नहीं हूँ। इसी नियम-पालन के कारण मैं उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हो सका हूँ—“ऐसा मेरा पूर्ण विश्वास है।”

सत्य निष्पत्ति



रोम की राज्य-सभा में हेम बिडियस नामक एक स्वाम्य-वराधण और सत्यनिष्ठ सभासद था। सभी उसके इस उच्च विचारों से बहुत ही प्रभावित थे। यही तब कि बादशाह को भी उसकी सत्यनिष्ठता पर पूर्ण विश्वास था।

एक बार बादशाह सभा-अवसर्ग में एक अनुचित प्रस्ताव पारित करना चाहता था। बादशाह को ऐसा विश्वास था कि हेम बिडियस अवश्य ही इस प्रस्ताव का विरोध करेगा।

बादशाह ने हेम बिडियस को बुलाया और उससे कहा—“यदि तुमने मेरे प्रस्ताव का विरोध किया तो मैं तुम्हारा घर उड़वा दूंगा।” हेम बिडियस वास्तव में साहसी और सत्य प्रेमी था। उसने कहा—“हुजूर मैंने कब आपसे कहा है कि मैं घमर बन कर धाया हूँ? जब कभी स्वदेश और समाज के प्रति कर्तव्य-व्यसन का प्रसंग आया है, तो मैंने सदा ही सत्य का पक्ष लिया है और भविष्य में दूंगा। आपके मन से मैं कभी भी अनुचित प्रस्ताव का समर्थन नहीं करूँगा। यदि सत्य का पक्ष लेने का दण्ड आप मुझे

देना चाहे तो प्रसन्नता के साथ दे सकते हैं। परन्तु इस सत्य आचरण का बदला लेने के लिए आप मुझे मृत्यु-दण्ड देंगे, तो वर्तमान व भविष्य की जनता हम दोनों के कार्य का मूल्यांकन एवं फैसला अवश्य करेगी।”

नियमित समय



एक समय का प्रसंग है कि एक विद्यार्थी नियमित समय पर स्कूल पहुँचना था। अपने इस कार्य से स्कूल में वह प्रसिद्ध हो गया था।

एक दिन सब विद्यार्थी प्रार्थना के समय एकत्र हुए परन्तु वह विद्यार्थी नहीं आया। सब को यह जानकर आश्चर्य हुआ कि आज वह विद्यार्थी नियम पर क्यों नहीं आया है।

मास्टर सख्त ने प्रार्थना का समय हो जाने पर भी प्रार्थना कुछ विमम्ब से करने की आज्ञा दी। कुछ ही प्रतीक्षा के पश्चात् वह विद्यार्थी आ गया और अपने स्थान पर जाकर बैठ गया।

मास्टर ने उससे कहा—“तुम समय पर नहीं आए थे इस लिये आज मैंने प्रार्थना को कुछ समय के लिए स्थगित कर दिया था। मैंने समझा कि शायद स्कूल की बड़ी घाटे चल रही होगी। विद्यार्थी ने उत्काम ही अपनी बड़ी निष्ठा से तो स्कूल की बड़ी पाँच मिनट घाटे चल रही थी।

लिकन की दयावृत्ति :



एक समय अमेरिका के प्रेसीडेंट इब्राह्म-लिकन राज्य-सभा में जा रहे थे। रास्ते में उन्होंने एक सूअर को कीचड़ में फंसे हुए देखा, जो कि कीचड़ से बाहर निकलने के लिए छटपटा रहा था। किन्तु, ज्यो-ज्यो बाहर निकलने का प्रयत्न कर रहा था, त्यो-त्यो वह अधिक कीचड़ में फँसता जा रहा था।

प्रेसीडेंट लिकन ने जब सूअर की दयनीय दशा देखी, तो उनसे न रहा गया और उन्होंने अपनी पोशाक सहित कीचड़ में प्रवेश किया। अपने हाथों से उस सूअर को कीचड़ से बाहर निकाल दिया।

इब्राह्म लिकन समय पर उन कपड़ों सहित राज्य-सभा में पहुँचे। प्रेसीडेंट को ऐसे कीचड़-युक्त कपड़ों में देख कर सभा-सदों को बहुत ही आश्चर्य हुआ। सभी ने इस सम्बन्ध में जानकारी करनी चाही तो लिकन ने सब वृत्तान्त कह सुनाया।

निकल की इस बात पर सभी सभासद बहुत हो प्रसन्न हुए और उनकी प्रशंसा करते हुए बोले कि— 'जब हमारे राज्य के अध्यक्ष ने एक दुखी मूषर के ऊपर इतनी दया की है तो फिर बसंठा की सुख-सुविधा के सम्बन्ध में तो फिर कहना हो क्या है?'

जब प्रेसीडेन्ट ने अपनी धार्मिक प्रशंसा सुनी तो कहा— 'तुम साप मेरी झूठी प्रशंसा कर रहे हो। मैंने मूषर के ऊपर क्या दया की है? यह मेरी समझ में नहीं आ रहा है। मैंने तो कीचड़ में फँसे हुए मूषर को बंध कर, दुःख का समुद्र में लिये-वाले और उस दुःख को मिटाने के लिए है। उसको कीचड़ से बाहर निकाला। इसलिए मेरे इस कार्य से स्पष्ट है कि मैंने मूषर को कोई मतलब नहीं की है बल्कि अपने दुःख को मिटाने के लिए ही उसको कीचड़ से बाहर निकाला है।'

जब मूषर कीचड़ में बाँठा उसे देखकर मेरी आत्मा को दुःख हुआ रहा था परन्तु देखें ही वह बाहर निकला—मेरी आत्मा का दुःख नष्ट हो गया। अब मैं ही बताइए कि मैंने मूषर की मतलब की है या अपनी?

ससार में इन्सान अपने दुःख को ही दुःख समझता है। ऐसा तो कोई विरमा ही होगा है जो दूसरों के दुःख को भी अपना दुःख समझे। जो दूसरों के दुःख में सहायक हो—वह यही सहायक सवेदना समझा है और यही वास्तविक धर्म है।

'धर्म है ऐसी माताओं को जो ऐसे मानव रत्न को धर्म देती हैं, जो अपने कर्मों से दूसरों का प्रफुल्लित करता है, और दूसरों के दुःख को अपना दुःख समझता है।'

आत्म-विश्वास : अजेय दुर्ग है :



योरूप मे स्ट्रिवन नाम का एक धर्म-परायण व्यक्ति हुआ है। वह अति उदार, निर्भय, न्यायपरायण और सत्यनिष्ठ था।

एक बार उससे पूछा गया—“देश व धर्म-द्रोही पुरुष आपके ऊपर आक्रमण करें तो आप क्या उपाय करोगे ?” उसने उत्तर दिया—“मैं सुरक्षित किले मे बैठा रहूँगा।”

एक समय दुश्मन ने स्ट्रिवन को अकेला समझ कर घेर लिया और कहा—“अब आप वतलाइए, आपका किला कहाँ है, जिसमे आप सुरक्षित बैठ सकोगे ?” स्ट्रिवन ने अपनी छाती पर हाथ मारकर कहा—“यह मेरा किला है। इसके ऊपर कोई भी हमला नहीं कर सकता।”

“दुश्मन केवल इस क्षण भगुर शरीर को ही नष्ट कर सकता है, परन्तु अजर-अमर आत्मा को नष्ट करने मे कोई भी समर्थ नहीं हो सकता। आपके हथियारों को देखकर मैं डरा नहीं हूँ। मैं अपने विश्वास रूपी दुर्ग मे अब भी सुरक्षित बैठा हूँ कि—

“मास्मा को कोई मट्ट नहीं कर सकता । जब मतमाइए मेरा कोई क्या बिपाद सकता है ?”

स्दिबन की इस अपूर्व निर्भीकता एवं घटम विश्वास को हेत कर सनु मो प्रकित हो गया और उसे छोड़ कर क्या मया ।

अंग्रेज कप्तान की कर्तव्य-परायणता :



एक बार जहाज का नीचे का हिस्सा समुद्र में टूट गया। सभी को डूबने की चिन्ता हो गई।

कप्तान का कर्तव्य है कि वह स्त्री, बालक तथा पुरुष आदि सभी को पहले बचाने का प्रयत्न करे और अन्त में स्वयं तैर कर बाहर निकल जाय। कप्तान ने नियमानुसार सभी को बचा लिया और सुरक्षित किनारे पर भेज दिया।

कप्तान स्वयं को बचाने के प्रयत्न में था ही कि उसे एक बालक जहाज के कोने में बैठा हुआ दिखलाई पड़ा, उसने आश्चर्य से बालक के पास जाकर पूछा—“तुम कौन हो ? इतनी देर हो गई, सब चले गए परन्तु तुम यहाँ कैसे रह गये हो।”

बालक ने उत्तर दिया—“मेरे पास टिकट के लिए पैसे नहीं थे, इसलिए मैं आप इस जहाज के कोने में बँठ गया था, जिससे मुझे कोई नुकसान न ले।”

कप्तान शीघ्र में पड़ गया—“यदि बच्चे को बचाने जाऊँ तो मेरी मृत्यु सामन है और यदि मैं स्वयं धरेला तैर कर निकल पाऊँ तो यह शायद था कि समुद्र में डूबकर मर जायगा।” उस घपने बाल-बच्चों का भी ध्यान आया कि यदि मैं स्वयं यहाँ डूब गया तो मेरी सभी बच्चों का क्या हाल होगा।

कप्तान ने माना कि—“कुछ भी हो अहास के प्रत्यक्ष व्यक्ति को बचा कर ही मुझे बचने का प्रयत्न करना चाहिए और इसी प्रकार मैं अपने कर्तव्य का पालन भी कर सऊँगा। इसके बाद उसने स्वयं तैरने का पटा उतार कर उस बाधक को पहना दिया और तैरने के लिये समुद्र में उतार दिया। कुछ क्षणों के पश्चात् ही वह बहास कत व्य-गिष्ठ कप्तान सहित समुद्र में डूब गया।



निष्काम-सेवा :



एक समय युद्ध-भूमि में सेनाध्यक्ष सिडनी घायल होकर गिर पड़ा। उसी समय एक सैनिक ने सेनाध्यक्ष से लड़ने वाले शत्रु सैनिक को लड़कर भगा दिया और सेनाध्यक्ष को उठा लिया।

। वह सैनिक सेनाध्यक्ष को अलग निर्भय स्थान पर ले गया और खूब सेवा की। सेनाध्यक्ष उस सैनिक से बहुत प्रसन्न व प्रभावित हुए। सेनाध्यक्ष ने उस सैनिक का नाम पूछा, तो सैनिक ने स्पष्ट शब्दों में कहा—“साहब, मैंने इनाम पाने की भावना से यह कार्य नहीं किया है, इसलिए मैं अपना नाम नहीं बतलाऊँगा। बिना नाम बतलाए ही वह सैनिक चला गया। सेनाध्यक्ष ने बहुत खोज-बीन कराई, परन्तु निस्वार्थ-भाव से सेवा करने वाले उस सैनिक का कहीं भी पता न चल सका।



दूसरों की सेवा ही सच्ची साधना है



ब्रिटेन और

अमेरिका आदि विदेशों में वैदिक का प्रचार करके भारतवर्ष वापस आने के पश्चात्, स्वामी विवेकानन्द ने निश्चय किया कि— मेरे मठ में बितने भी संत हैं, उन्हें सबको धर्म-मत्स्य स्थानों में भ्रमण करके भी समझाना परम हठ के उधार सिद्धान्तों का प्रचार करना चाहिये ।

स्वामी विवेकानन्द ने स्वामी विरजानन्द को पूव बंगाल के ब्रह्म नगर में उपदेश करने हेतु जाने की आज्ञा दी । स्वामी विरजानन्द एकान्तवासो धीर धान्तवृत्ति के सन्त थे । उन्होंने ऐसे बंगाल में पैसना उचित न समझा । उन्होंने स्वामी विवेकानन्द से कहा—“ स्वामी जो मैं कुछ भी नहीं जानता हूँ, इसलिये मुझे उपदेश देने हेतु मठ में बिये ।

स्वामी विवेकानन्द ने कहा— ‘‘तुमको वही आकर यही उपदेश देना है कि उपनिषदों में कहा गया है ।

स्वामी विवेकानन्द की बात स्वामी विरजानन्द के गले नहीं उतरी और उन्होंने स्पष्ट कह दिया—“स्वामी जी कुछ थोड़े दिन और मुझे साधना करके मुक्ति को तैयारी करने दो।”

विरजानन्द की उपर्युक्त बातों से स्वामी विवेकानन्द को बहुत क्रोध आया और वे बोले—“यदि तुम परोपकार की भावना को त्याग कर केवल अपनी ही मुक्ति को प्राप्त करोगे, तो सीधे नरक में जाओगे। मुक्ति पाने का सर्वोत्तम उपाय यही है कि दूसरो की सेवा करो, और यही सबसे बड़ी साधना है।”



दूसरों की सेवा ही सच्ची साधना है



ब्रिटेन और

अमेरिका आदि विदेशों में वैद्यान्त का प्रचार करके भारतवर्ष वापस आने के पश्चात्, स्वामी विवेकानन्द ने निश्चय किया कि—मेरे मठ में बितने भी संत हैं, उन्हें सबको समय-समय स्थानों में भ्रमण करके भी समकृपण परम हंस के उबार सिद्धान्तों का प्रचार करना चाहिये ।

स्वामी विवेकानन्द ने स्वामी विरजानन्द को पूरब बंगाल के हाक्य नगर में उपदेश करने हेतु जाने की आज्ञा दी । स्वामी विरजानन्द एकान्तवासी धीर शान्तवृत्ति के सन्त थे । उन्होंने ऐसे बंगाल में फँसना अधिक न समझा । उन्होंने स्वामी विवेकानन्द से कहा—“स्वामी को मैं कुछ भी नहीं आगता हूँ, इसलिये मुझे उपदेश देने हेतु मठ में बिये ।”

स्वामी विवेकानन्द ने कहा—‘तुमको वहाँ जाकर यही उपदेश देना है कि उपनिषदों में कहीं क्या है ।’

आदि गुणों के कारण ही हम आपके प्रिय बन सके हैं और इन मदगुणों को हम गुरु की शिक्षा में ही ग्रहण कर सके हैं।"

सुलतान अपने अंग-रक्षकों के इन कार्य में बहुत प्रभावित हुए और भविष्य में उनको पहले से भी अधिक प्रेम-पूर्वक रखने लगे।



गुरु का सम्मान *



शेख छात्री साहब विद्वान और सुभाषाएँ पुरख थे। एक दिन वे मैने कपड़े पहने हुए चलने जा रहे थे। रास्ते में बेश के मुसतान अपने धर्म-रसकों सहित मिले। छात्री साहब को देखकर मुसतान के धर्म रसक उसी क्षण पाईसे भीचे उतरे और छात्री साहब के पैरों पर गिर पड़े। छात्री साहब की कृपामता के समाचार सारि भी पूछे।

राजा (मुसतान) विचार में पड़ गया कि— मेरे राज्य में ऐसा कीमत व्यक्त है, जिसको मेरे धर्म-रसक मेरे से भी अधिक आदर व सम्मान देते हैं।

मेरा साहब से वातामाप करके जब धर्म रसक वापिस मुसतान के पास आए ता मुसतान ने सबसे ऐसा करने का कायम पूछा। धर्म रसकों ने कहा— ये हमारे पिता हैं। हमारा आदर जो भी आदर आप दे सकते हैं वह सब उनके महादेव का ही फल है। तेजस्विता स्वामी प्रति, सत्यवादिता

आदि गुणों के कारण ही हम आपके प्रिय बन सके हैं और उन सद्गुणों को हम गुरु की जिज्ञासे ही ग्रहण कर सके हैं।”

सुलतान अपने अंग-रक्षकों के इस कार्य में बहुत प्रभावित हुए और भविष्य में उनकी पहले से भी अधिक प्रेम-पूर्वक रखने लगे।



असतोप की दवा



एक समय सेज सादी साहब अपनी गरीबी के ऐसे संकट-काल में फँस गये कि उनके पास पैर में पहनने को बूते तक भी नहीं रहे। नए बूते पहनने को उनके पास एक पाई तक नहीं थी। जतने में उनको प्रति कष्ट होठा का परगु बूता करीबने में असमर्थ वे इसमिष्ट करते भी क्या ?

एक दिन के निकट की मस्जिद में गए और वहाँ देखा कि एक दीन व्यक्ति जिसके कि दोनों पैरों भी नहीं थे मस्जिद के फाटक के पास बैठा है।

सेज सादी को विचार आया कि—यह भिखारी गरीब भी है और अपने दोनों पैरों के न हाने के कारण बनने-फिरने में भी असमर्थ है। इस हथ की देख कर सादी साहब की आँखें धुप गई और उन्होंने कुछ का हवा-हवा बार बन्दबाद किया—‘हे गरीब परवर ! तू मेरे ऊपर बहुत बड़ा सहानुभूति किया है, जिससे कम से कम मेरे दोनों पैर ही सही सज्जित ॥ १’

सत्य कहा है कि गरीब को अपने से भी गरीब दिखलाई दे जाय और दुखी को अपने से अधिक दुखी मिल जाए, तो असन्तोष की मात्रा कम हो जाती है ।



असतोष की दवा



एक समय दोस्त सादी साहब अपनी मरीची के ऐसे संकट-कास में पड़े गए कि उनके पास पैर में पहनने की जूते तक भी नहीं रहे। गए जूते पहनने को उनके पास एक पाई तक नहीं थी। बलने में उनको प्रति कष्ट होता था परन्तु जूना लगी देने में असमर्थ थे इसलिए करते भी क्या ?

एक दिन वे निकल की मस्जिद में गए और वहाँ देखा कि एक दीन शक्ति जिसके कि दोनों पैर भी नहीं थे मस्जिद के फाटक के पास बैठा है।

मेज़ सादी को विचार आया कि—यह भिक्षापी मरीच भी है और अपने दोनों पैरों के न होने के कारण बलने-फिरने में भी असमर्थ है। इस समय को देख कर सादी साहब की पार्श्व मुख गई और उन्होंने मुखा को हजार-हजार बार धन्यवाद दिया— 'हे गरीब परवर ! तू ने मेरे ऊपर बहुत बड़ा महान किया है तिमने कम से कम मेरे दोनों पैर तो बही सत्तापत है ।'

सत्य कहा है कि गरीब को अपने से भी गरीब दिखलाई दे जाय और दुखी को अपने से अधिक दुखी मिल जाए, तो असन्तोष की मात्रा कम हो जाती है।



द्वेष की दवा—समा



एक दिन खलीफा हाज़ल-उल-रशीद का सहजावा बहुत ही शक्तिशाली और धार्मिक की समस्या में पिता के पास आया और कहने लगा कि प्रमुख सिपाही के लड़के ने मुझे बहुत पालियाँ दी हैं। खलीफा ने बख़ीर को बुला कर कहा— मेरे लड़के का एक सिपाही के लड़के ने बहुत पालियाँ दी हैं। इसलिए आप इस सम्बन्ध में बतलाइए कि क्या करना चाहिए।

बख़ीर ने कहा— सरकार ! उस सिपाही के लड़के को कड़ी सजा देनी चाहिए या सजाय-मौत देना चाहिए। बख़ीर की बात सुनकर खलीफा ने अपनी लड़के से कहा—“बेटा सबसे अच्छा तो यही है कि तू खुद ही उसे धमा कर दे और धमर इतना रहम दिन होने को तूरे सम्बर हिम्मत नहीं है तो तू भी उस सिपाही के लड़के को बासी के बबले गाली दे दे।

प्रार्थना के साथ प्रयत्न भी आवश्यक :



एक स्कूल में बहुत ही योग्य मास्टर पढाया करता था। जब अध्यापक बच्चों से कोई प्रश्न पूछता था, तो उनमें से एक लड़का सदा ही सबसे पहले प्रश्न का उत्तर देता था।

एक दिन दूसरे विद्यार्थी ने उस विद्यार्थी से पूछा—“भाई इसका क्या कारण है कि तू अध्यापक के प्रश्न का उत्तर सबसे पहले ब ठीक देता है।” विद्यार्थी बोला—“भाई मैं सदा सरस्वती की प्रणाम करता हूँ और फिर मन में दृढ़ संकल्प करता हूँ कि आज का पाठ मुझे अच्छी प्रकार याद हो जाना चाहिये।”

दूसरे दिन उस विद्यार्थी ने भी सरस्वती की प्रार्थना की, परन्तु उसे पाठ याद नहीं हुआ। स्कूल में आकर वह विद्यार्थी क्रोधित हुआ और उस विद्यार्थी से कहने लगा कि—“तुमने मुझे धोखा दिया है। आज मैंने अच्छी प्रकार सरस्वती की पूजा

की है, परन्तु फिर भी मुझे पाठ याद नहीं हुआ है। मैं तो दूसरे दिनों की अपेक्षा थोड़ा अधिक भूल गया हूँ।”

पहला विद्यार्थी बोला— मैंने सुना है धीर अनुभव भी किया है। यदि व्यक्ति प्रारम्भ से ही भक्ति-पूर्वक प्रार्थना किया करे धीर उसके साथ प्रयत्न भी किया करे, तो पाठ सरलता पूर्वक याद हो जाता है। परन्तु तुम लोगों ने बिना परिश्रम के ही पठित बनने का प्रयत्न किया है। प्रत्येक पुस्तक को भक्ति-प्राप्त्यर्थ के साथ स्थिर-चित्त से पाठ भी याद करना चाहिए और इनका अनुसरण करने से अवश्य ही सफलता मिलेगी।”



विश्वास का फल :



एक दिन विलायत के एक प्रसिद्ध वक्ता और पार्लियामेण्ट के सभासद मिस्टर फोक्स रुपये गिन रहे थे और पास में ही जिस व्यक्ति को रुपये देने थे, उसके नाम लिखा पत्र भी रखा हुआ था। उसी समय एक दूकानदार आकर रुपये माँगने लगा और रुपये का बिल फोक्स के हाथ में दे दिया।

दूकानदार ने कहा—“रुपये मुझे इसी समय चाहिये, क्योंकि मुझे एक साहूकार को देने हैं।”

मिस्टर फोक्स बोले—“रुपये मैं एक महीना बाद दूँगा, क्योंकि ये रुपये मुझे सेरिडन को देने हैं। सेरिडन से ये रुपये मैंने बिना लिखा-पढी के ही लिये थे। यदि अकस्मात् मेरी मृत्यु हो जाती है, तो उस बेचारे के पास प्रमाण-स्वरूप एक चिट्ठी तक भी मेरे हाथ की नहीं है। इसलिये मैं सबसे पहले उसका ऋण चुकाऊँगा।”

दूकानदार फोक्स की भावना को समझ गया और इसका उसके ऊपर बहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ा। इसी कारण उसने

की है परन्तु फिर भी मुझे पाठ याद नहीं हुआ है। मैं तो दूसरे दिनों की अपेक्षा आज अधिक धुम मचा हूँ।”

पहला विद्यार्थी बोला—“मैंने सुना है घीर अनुभव भी किया है। यदि व्यक्ति प्रारम्भ से ही भक्ति-पूर्वक प्रार्थना किया करे घीर उसके साथ प्रयत्न भी किया करे, तो पाठ सरलता पूर्वक याद हो जाता है। परन्तु तुम लोगों ने बिना परिश्रम के ही पंडित बनने का प्रयत्न किया है। अनेक पुस्तक को भक्ति-भावना के साथ स्थिर-चित्त से पाठ भी याद करना चाहिए घोर इसका अनुसरण करने से भवस्य ही सफलता मिलेगी।”



अमेरिकन इंडियन की ईमानदारी :



अमरीका के मूल निवासी भी इंडियन अथवा रैड-इंडियन पुकारे जाते हैं। एक समय का प्रसंग है कि एक अमेरिकन इंडियन ने किसी अमेरिकन से तम्बाकू मांगी। अमेरिकन ने उसे मुट्ठी भर कर तम्बाकू दे दिया।

दूसरे दिन वह इंडियन उस यूरोपियन के घर गया और बोला—“आपने जो तम्बाकू मुझे दी थी, उसमें एक दुअन्नी निकली है और उस दुअन्नी को देने के लिये ही मैं यहाँ आया हूँ।”

यूरोपियन बोला—“यदि तम्बाकू के साथ दुअन्नी भी तुम्हारे पास आ गई है, तो वह भी तुम्हारी हो गई है, इसमें चिन्ता की क्या बात है?” इंडियन बोला—“देखो, मेरे अन्त करण में दो भावनाएँ काम कर रही हैं। दो विचारों का युद्ध मेरे अन्त करण में चल रहा है। एक तो यह कि जैसा आप कह रहे हैं कि दुअन्नी मेरे पास आ गई तो मेरी हो गई। दूसरा

फोक्स के साथ कोई बात बिबाद नहीं किया। बूकानवार को फोक्स का इतना विश्वास हो गया कि उसके हाथ की चिट्ठी तक उसी क्षण मिस्टर फोक्स के सामने ही फाड़ डाली।

बूकानवार बोला— मैंने भी आपके लिये कागज के टुकड़े टुकड़े कर दिये हैं इसलिये अब मेरे पास भी दावा करने का कोई प्रमाण नहीं रहा है। अब आप जब चाहे अपनी सुविधा-नुसार रुपये दे सकते हैं।

बूकानवार के इस विश्वास और सौजन्य से मिस्टर फोक्स बहुत ही प्रभावित हुए और प्रसन्नतापूर्वक बूकानवार से बोले—
‘यह तो तुम हो ये रुपये तो जाओ क्योंकि तुम्हारा मेरे ऊपर विश्वास के अतिरिक्त कुछ भी पुराना है और तुम्हें इस समय वेसे की भी आवश्यकता है। मैं बैरिजर को इस सम्बन्ध में सूचित कर दूंगा और उसके रुपये कुछ समय पश्चात् दे दूंगा।’



अंग्रेज बालक का विश्वास :



एक बार वर्षा नहीं हुई थी, इससे सभी लोग व्याकुल हो उठे। किसानों ने सोचा कि यदि इस बार वर्षा न हुई, तो देश के ऊपर अकाल का सकट आ जाएगा, लोग भूख से तड़प-तड़प कर जाएंगे।

एक दिन नगर-निवासी ईश्वर से प्रार्थना करने के लिये एक स्थान पर इकट्ठे हुए और वर्षा के लिये प्रार्थना करने लगे।

एक अंग्रेज का बालक भी वहाँ छाता (छत्री) लेकर आया। सब लोग उस बालक को देखकर हँस पड़े और बोले—“हम तो एक-एक बूंद पानी के लिये तरस रहे हैं और यह बालक वर्षा से इतना घबरा रहा है कि बिना वर्षा के भी घर से छाता लेकर चला है।”

अंग्रेज बालक ने, अभिरता से उत्तर दिया—“मैंने पहले ही सुन लिया था कि आप लोग यहाँ पर ईश्वर से वर्षा की प्रार्थना करने के लिये एकत्रित हुए हैं। परन्तु यहाँ आकर मुझे अत्यन्त

विचार है कि मैंने कुछभी माँगी नहीं धीर देने वाले ने मुझे ही भी नहीं बल्कि धून ॥ ही मेरे पास था गई है। इसलिये यह धुपली किसी प्रकार भी मेरी नहीं हो सकती है।”

इंद्रियन ने कहा— ‘रात को मेरे मन में इन विपरीत विचारों का बराबर संघर्ष चलता रहा धीर इसी कारणवश मैं रात को सो भी न सका। रात भर प्रयत्न करने पर भी मुझे नींद नहीं आई। अतः मैं अच्छे विचारों का अनुसरण करके यह धुपली वापिस करने आया हूँ, इसलिये आप इसे ले लीजिये।”



राम-नाम का विश्वास :



एक मूर्ख राजा एक दिन राज्य-सभा में बैठकर गभीरता-पूर्वक बोला—“मेरा कुत्ता जो कि वर्षों से मैंने पाला है, क्यों नहीं बोलता है ? मालूम पड़ता है कि इसकी जीभ में कोई रोग है, इसलिये राज्य-वैद्य को बुलाओ।”

राज्य-वैद्य राजा के पास आया तो राजा ने हुक्म दिया—“इस कुत्ते के रोग का इलाज करो, यदि यह कुत्ता चौदह दिन के अन्दर न बोला तो तुमको फाँसी पर चढ़ा दिया जाएगा।”

वैद्य बोला—“महाराज, यह तो वश-परवश है। इस कुत्ते को कोई रोग नहीं है, फिर इसका रोग मैं किस प्रकार मिटा सकता हूँ, जब कि यह रोग-मुक्त नहीं है।”

राजा ने वैद्य को एक भी बात न मानी और कुत्ते को चौदह दिन के अन्दर ठीक करने की आज्ञा प्रदान की। राज्य-वैद्य ने हाथ जोड़कर राजा ने १४ वर्ष का समय मागा। राजा ने १४ वर्ष का समय सत्कार दे दिया।

चारुचर्य हुआ कि छाता एक के पास भी नहीं है तो क्या भाप सब लोगों को यह विश्वास है कि प्रार्थना करने पर भी पानी नहीं बरसेगा ।

बालक के इस विश्वासपूर्ण उत्तर से सभी चारुचर्य-वर्कित रह गये ।



राम-नाम का विश्वास :



एक मूर्ख राजा एक दिन राज्य-सभा में बैठकर गभीरता-पूर्वक बोला—“मेरा कुत्ता जो कि वर्षों से मैंने पाला है, क्यों नहीं बोलता है ? मालूम पड़ता है कि इसकी जीभ में कोई रोग है, इसलिये राज्य-वैद्य को बुलाओ ।”

राज्य-वैद्य राजा के पास आया तो राजा ने हुक्म दिया—“इस कुत्ते के रोग का इलाज करो, यदि यह कुत्ता चौदह दिन के अन्दर न बोला तो तुमको फाँसी पर चढ़ा दिया जाएगा ।”

वैद्य बोला—“महाराज, यह तो वश-परम्परा है । इस कुत्ते को कोई रोग नहीं है, फिर इसका रोग मैं किस प्रकार मिटा सकता हूँ, जब कि यह रोग-युक्त नहीं है ।”

राजा ने वैद्य की एक भी बात न मानी और कुत्ते को चौदह दिन के अन्दर ठीक करने की आज्ञा प्रदान की । राज्य-वैद्य ने हाथ जोड़कर राजा से १४ वर्ष का समय माँगा । राजा ने १४ वर्ष का समय सहर्ष दे दिया ।

राम्य-बैद्य कुत्ते को अपने शाय से गया घीर यन्त्र के प्यटक के सामने बाकर बैठ गया। राम्य-बैद्य प्रतिदिन तुमसी के पत कुत्ते के मस्तक पर लगाता था घीर स्वय स्नानादि करके कुत्ते के कान में 'राम-नाम' का जाप सुनाने लगा।

राम्य-बैद्य के एक मित्र ने पूछा—“इस प्रकार समय नष्ट करने से क्या लाभ? क्या इस प्रकार कुत्ते के मस्तक पर तुमसी का पता लगाने और इसके कान में 'राम-नाम' अपने से यह बोलने लगेगा?”

बैद्य ने उत्तर दिया— १४ वर्ष तक 'राम-नाम' का जाप करने के पश्चात् मुझे फाँसी की सजा दी जायेगी तो मुझे कोई कष्ट न होगा और न फाँसी की सजा से डर ही लयेगा। और यदि १४ वर्ष की अवधि से पहले यह कुत्ता मर गया तो बुरा कुत्ता मिलेगा और फिर १४ वर्ष की अवधि बह जायेगी। यदि संयोगवश १४ वर्ष की अवधि में राजा की मृत्यु हो गई तो यह सब नाममात्र ही समाप्त हो जायेगा। इस प्रकार राजा ने मुझे यह काम सौंपकर मेरा कल्याण ही किया है, जिससे कि मुझे 'राम-नाम' अपने के प्रतिरिक्त कोई कार्य करने की चिन्ता ही नहीं है।”

संत-बाणी का प्रभाव :



एक समय मारवाड़ी सेठ सूरजमल अपने परिवार सहित हरद्वार की यात्रा करने गए। जब वे गंगाजी में स्नान कर रहे थे, तो एक सत वहाँ आ निकला। सत ने समझ लिया कि यह कोई बहुत बड़ा सेठ है।

सत उस सेठ को देखकर हँस पड़ा। सेठ ने हँसने का कारण पूछा तो सत ने कहा—“यहाँ तुम पानी में डुबकी लगाकर अपने पापों को धोने आये हो या कुछ परोपकार की भावना रखते हो?”

सेठ जी तुरन्त सत के पास आये और प्रणाम करके विनम्रता सहित बोले—“महाराज, मुझे परोपकार का कोई ऐसा कार्य बतला दीजिये, जिससे कि मैं वह कार्य कर सकूँ। उस कार्य के लिए मेरे लाखों रुपये भी खर्च हो जायें, तो कोई चिन्ता की बात नहीं है।”

सत ने प्रसन्नतापूर्वक कहा—“आप हरद्वार से/केदारनाथ तक सड़क बनाकर साधु-सत्तों के भोजन का स्थायी प्रव-

करा दें तो तुम्हारे जैसे सेठ की यात्रा सफल हो सकती है। हाँ, यदि मरीच पादमी केवल नंगा में उधवी नगा कर ही बना जाए, तो उसके लिये तो इतना ही पर्याप्त है।”

सेठ मुरझमन ने सेठ की यात्रा का पालन किया और छीघ्र ही उपरोक्त व्यवस्था कर ही गई। यात्रा भी हज़ार में सेठ मुरझमन को धर्मशास्त्रा उनक नाम से प्रसिद्ध है।

॥ ११ ॥ ११ ॥ ११ ॥ ११ ॥



सम्मानःपदवी से या मनुष्यता से ?



एक समय सिकन्दर ने अपने एक सूवेदार को उसके पद से अलग कर दिया। सूवेदार को किसी प्रकार का दुःख न हुआ और वह पद से अलग होने पर भी आनन्द-पूर्वक रहने लगा।

कुछ समय पश्चात् सिकन्दर ने उसे बुलाया और पूछा—
“तुमको मैंने सूवेदार के पद से अलग कर दिया है, परन्तु फिर भी तुम प्रसन्नता एवं प्रफुल्लित मन से रह रहे हो। पद से हटाने का तुम्हारी चित्त-वृत्ति में कोई भी अन्तर नहीं पड़ा, ऐसा मुझे स्पष्ट प्रतीत हो रहा है। क्या तुम मुझे बता सकते हो कि ऐसा क्यों है ?”

सूवेदार बोला—“हुजूर, आपने मुझे पद से हटा दिया है—इसका मुझे कोई रजोगम नहीं है, बल्कि खुशी है। अब मैं अपने को पहले से उत्तम अनुभव कर रहा हूँ। क्योंकि जब मैं अपने बड़े पद पर था तो उस समय मेरे पास सलाह-मशवरे के लिये सिर्फ बड़े-बड़े हाकिम-हुक्काम (आफीसर) ही आते थे,

घोर छोटे पधिकारी व सिपाही मेरे पास तक जाने में संकोच का अनुभव करते थे । लेकिन अब मेरे साथ छोटे घोर बड़े सभी हाकिम घोर भयना सिपाही तक भाकर बाठभील करते हैं घोर मेरी बेरियत का ह्म पाने की कामना रखते हैं ।”

सिकन्दर बोला—“तुमको पर से हटा दिया फिर भी तुम अपने को पहले से कुछ महसूस कर रहे हो घोर अपनी बिचारी को पहले से कहीं भण्डा समझकर खुसी महसूस कर रहे हो ।

सूबेदार ने कहा—“सरकार आप जानते हैं कि इम्तान का बह्यमन घोर इज्जत बड़े दरजे पर पहुँच जाने में नहीं है बल्कि इसमें है कि इम्तान को पब्लिक (जनता) का चिहना पकीन घोर सभी मुहम्मद हासिल है । पब्लिक अपारा-अपारा धारमी जिसे मुहम्मद व इज्जत की निगाह से देखने सकते हैं वस दुनिया में वही बड़ा इम्तान है । मेरे क्यास में इम्तान की इज्जत बड़े दरजे पर पहुँचने से नहीं होती बल्कि उसमें इम्तानियत होने से होती है । अब आप ही बतलाइये कि इज्जत दरजे में है या इम्तानियत में ?”

सिकन्दर सूबेदार के बिचारों से बहुत प्रभावित हुआ घोर प्रसन्नता पूर्वक उसे पुन सूबेदार का पर प्रदान कर दिया ।

इस दृष्टान्त से स्पष्ट है कि—“अनुपपत्ता का स्तर—अस्य सभी स्तरों से ऊँचा घोर पूजनीय है ।

हातिमताई का परोपकार :



प्राचीन काल में समस्त मानव-जाति का हित-चिन्तक हातिमताई नामक एक राजा हुआ है। वह सदा ही मानव-जाति के हित व परोपकार के विषय में विचार किया करता था।

एक बार अरब के बादशाह ने उसके ऊपर चढ़ाई कर दी। हातिमताई ने सोचा कि यदि मैं युद्ध करता हूँ तो लाखों व्यक्तियों हत्या होगी और महान् नर-संहार अपनी आँखों से देखना पड़ेगा। आखिरकार राज्य से चुपचाप भाग जाऊँ और एक महान् नर-महार होने से बच जाय।

हातिमताई राज्य छोड़ कर भाग गये और अपना रूप बदल कर इधर-उधर छिपकर घूमने लगे।

अरब के बादशाह को इससे सतोष नहीं हुआ और उन्होंने सोचा कि 'कहीं ऐसा न हो कि हातिमताई फिर से अपनी सुरक्षा-व्यवस्था बढाकर मेरे ऊपर आक्रमण कर दे और मेरा

घोर छोटे अधिकारी व सिपाही मेरे पास तक जाने में संकोच का अनुभव करते थे। लेकिन जब मेरे साथ छोटे घोर बड़े सभी हाकिम घोर बदना सिपाही तक आकर बातचीत करते हैं घोर मेरी अंतियत का ह्माम जाने की कामना रखते हैं।”

मिकन्दर बोला—“तुमको पद से हटा दिया फिर भी तुम अपने को पहले से कुछ महसूस कर रहे हो घोर अपनी बिम्बयी को पहले से कहीं अच्छा समझकर खुशी महसूस कर रहे हो।

सूबेदार ने कहा—“सरकार आप जानते हैं कि इन्सान का बहम्न घोर इम्बत बड़े बरजे पर पहुँच जाने में नहीं है बल्कि इसमें है कि इन्सान को पम्मिक (बगता) का बितना सकीन घोर सक्की मुहम्मत हासिल है। पम्मिक व्यारा-व्यारा घादमी बिसे मुहम्मत व इम्बत की निगाह से देखने समते हैं, बस दुनिया में कहीं बड़ा इन्सान है। मेरे क्यास में इन्सान की इम्बत बड़े बरजे पर पहुँचने से नहीं होती बल्कि उसमें इन्सानियत होने से होती है। जब आप ही बतलाइये कि इम्बत बरजे न है या इन्सानियत में ?”

मिकन्दर सूबेदार के विचारों से बहुत प्रभावित हुआ घोर प्रसन्नता पूर्वक उसे पुन सूबेदार का नम प्रदोन कर दिया।

इस दृष्टान्त से स्पष्ट है कि—“मनुष्यता का स्तर—सब सभी प्यारे से ऊँचा घोर पूजनीय है।”

हातिमताई का परोपकार :



प्राचीन काल में समस्त मानव-जाति का हित-चिन्तक हातिमताई नामक एक राजा हुआ है। वह सदा ही मानव-जाति के हित व परोपकार के विषय में विचार किया करता था।

एक बार अरब के बादशाह ने उसके ऊपर चढ़ाई कर दी। हातिमताई ने सोचा कि यदि मैं युद्ध करता हूँ तो लाखों व्यक्तियों हत्या होगी और महान् नर-संहार अपनी आँखों से देखना पड़ेगा। आखिरकार राज्य से चुपचाप भाग जाऊँ और एक महान् नर-महार होने से बच जाय।

हातिमताई राज्य छोड़ कर भाग गये और अपना रूप बदल कर इधर-उधर छिपकर घूमने लगे।

अरब के बादशाह को इससे सतोष नहीं हुआ और उन्होंने सोचा कि 'कहीं ऐसा न हो कि हातिमताई फिर से अपनी सुरक्षा-व्यवस्था बढ़ाकर मेरे ऊपर आक्रमण कर दे और मेरा

राज्य भी जीत ले। इसलिये निष्कण्टक ही राज्य बना लेना चाहिये।

बादशाह ने समस्त राज्य में घोषणा करा दी कि—“जो भी बादमी हातिमताई का घर काटकर मेरे सामने पेश करेगा उसे पच्चास हजार रुपये का इनाम दिया जायेगा।”

जिस दिन मैं हातिमताई अपनी पत्नी सहित निवास कर रहा था उसी स्थान के निकट एक मकड़हाण अपनी स्त्री सहित मकड़ी काट रहा था। प्रचण्ड गर्मी पड़ रही थी इसलिये दोनों स्त्री-पुरुष मकड़ी काटते-काटते चक गये। हातिमताई पुनर्जाप मकड़हारे को देख रहा था।

मकड़हाण अपनी पत्नी से बोला—‘सब कड़ी मेहनत नहीं होती है। सरीर बूढ़ हो गया है इसलिये इस भीषण गर्मी में परिश्रम करने पर पूर्णतया पेट की सूख साम्य नहीं हो पाती है। इसी प्रसंगवश मकड़हारे की पत्नी बोली—‘भयंकर पागल हमें हातिमताई मिल जाय तो उसे पकड़ कर बादशाह के पास ले जाय जिससे हमारे सब दुःख दूर हो जाएँ।’

परम स्वामी हातिमताई उनकी यह बातें सुन रहा था। उनकी गरीबी को देखकर और उनके वार्तालाप को सुनकर हातिमताई की धाँखों में सहसा पाँख छनक जाये और वे उस समय चुप न रह सके।

हातिमताई उसी समय गरीब दम्पति के सामने धा खड़े हुए और बोले—‘मैं हातिमताई हूँ, इसलिये मुझे पकड़ कर बादशाह के पास ले जाओ।’

बूढ़ ने उत्तर दिया—‘मेरे से ऐसा न हो सकेगा।’

इस पर हातिमताई बोले—“मेरे भाग्य मे तो मरना लिखा ही है, इसलिये कोई न कोई मुझे मौत के घाट उतार कर मेरा सर बादशाह के सामने ले ही जायेगा, तो फिर तुम भले आदमा हो और गरीब भी हो, इसलिये तुम स्वय ही मुझे क्यो न 'ले चलो ?”

एक दूसरा व्यक्ति भी हातिमताई की खोज मे वहाँ आ निकला । इन तीनों का वार्तालाप जब उस व्यक्ति ने सुना तो सोचा कि मैं ही क्यो न इसे बादशाह के समक्ष पकड़कर ले चलूँ और इस प्रकार सोचकर उसने हातिमताई को पकड़ लिया और बादशाह के सम्मुख प्रस्तुत कर दिया । इसके पश्चात् उसने बादशाह से इनाम मांगा तो हातिमताई बोला—“महाराज, यह झूठ बोलता है और उसने सही-सही घटना बादशाह को कह सुनाई । उसने बादशाह से कहा कि—“आप इस लकड़हारे को तो इनाम दीजिये और मुझे फाँसी !”

हातिमताई की इस सत्यवादिता एवं महान् आदर्श से बादशाह को आँखो मे आँसू आ गये और वे उसके गुणो पर मुग्ध हो गये । बादशाह सिंहासन से उठे और कहा कि—“इस लकड़हारे को मैं इनाम देता हूँ और आपको आपका राज्य । आन जैसे दयालु को मारकर मुझे कभी भी शान्ति न मिल सकेगी, इसलिये मुझे क्षमा कीजिये ।”



गुप्तदान का महत्व



यह विज्ञापन प्रधान रुप है। आप देखते हैं कि सब जगह विज्ञापन का ही बोलबाला है। प्रत्येक वस्तु के बाईं मोटिस बाईं जगह जगह आपको देखने का मिलाने।

आजकल तो दान का भी प्रचार दिया जाता है। कुछ लोग पीटा जाता है। वेते हैं आप माना मे धीर प्रचार दिन सोभकर नूब करते हैं। यदि किसी व्यक्ति ने जन-हितार्थ कोई दुर्घा बर्मखाला या एक-दो कमरा बनवा दिया तो वह उस पर अपनी भीहर नगाने के सम्मान में सबसे पहले सोचते हैं। सर्वत्र धनिकाए मे इस प्रकार कुछे हुए पत्थर लगे आपको मिलेमे कि प्रमुख व्यक्ति ने यह दुर्घा कमरा या बर्मखाला का कमरा बनवाया है। अधिकतर व्यक्ति अपनी पुष्प-कथा का नूब बाँटन करने हैं धीर समाज में अपना झूठा प्रमाण स्थापित करने का प्रयत्न करते हैं।

पुराने समय में दान का इस प्रकार प्रचार नहीं किया जाता था। लोग लाखों का दान करते थे, परन्तु फिर भी अपना नाम तक गुप्त रखने में ही गौरव समझते थे। वे लोग कहीं पर भी अपने नाम का पत्थर नहीं लगवाते थे।

ज्ञानी पुरुषों ने तो यहाँ तक कहा है कि यदि दाएं हाथ से दान दो, तो बाएं हाथ को पता तक भी नहीं चलना चाहिये, तभी दान का पूर्ण फल मिलता है और दिया हुआ दान सफल होता है।



महात्मा सुलेमान का जन-प्रेम



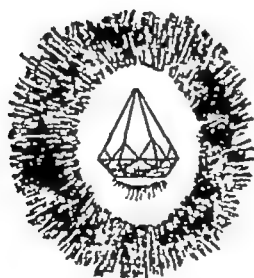
एक दिन सुलेमान अपने सैनिकों के पड़ाव के मध्य से बेश बरबकूर निकला। मार्ग में उसे एक बास वाला मिला जो कि बादशाह के यहाँ बास लेकर जा रहा था। उसके सिर पर भी बास की गठरी भी धीर गधे पर थी।

छाटे बेश में फिरते हुए बादशाह को वह नहीं पहचान सका और उसने बादशाह को मुलाखा धीर पकड़कर बस-गुर्बक उसके सर पर बास की गठरी रखा दी। इस प्रकार गया सबसे धाये धीर फिर बादशाह बास की गठरी लिये हुए धीर उनके पीछे-र्य से चाम वाला चला।

पड़ाव के पास पहुँचने पर सैनिकों ने बादशाह को पहचान लिया और वे स्तब्ध रह गए। जब बास वाले को मातूम पड़ा तो वह भा मयबरा कोपने लगा धीर बादशाह के चरणों पर गिर पड़ा।

महात्मा सुलेमान बोले—“भाई, तुम्हारा क्या दोष है ? मैं स्वयं ही तीन प्रकार के लाभ प्राप्त करने के लिए अपनी स्वेच्छा से वेश बदल कर निकला था । ये त्याग निम्न प्रकार हैं — १ गर्व-त्याग, २ भूठी लोक-लाज का त्याग, ३ प्रत्येक जन की स्थिति व सुख-दुःख का प्रत्यक्ष अनुभव । इसी कारण से तुम्हारी घास उठाकर मैं यहाँ तक लाया हूँ ।”

बादशाह ने कहा कि—“आज से ही मैं सब सिपाहियों को आज्ञा देता हूँ कि भविष्य में कोई कार्य किसी से न कराया जाए, बल्कि अपना सब कार्य स्वयं किया जाए ।”



निर्धनता में अपरिग्रह अनुराग



एक बार एक सेठ किसी गाँव में एक बहुत ही गरीब की भोंपड़ी में ठहरा और दूसरे दिन ही वहाँ से चल दिया परन्तु चलते वसके स्त्रियों की बेसी बसी भोंपड़ी में रह गई।

सेठ ने बेसी की बहुत खोज की परन्तु जब वह नहीं मिली तो उसने सोचा कि यही मार्ग में गिर पड़ी है और किसी ने उठा ली है।

लगभग तीन महीने के पश्चात् वह सेठ फिर से वही भोंपड़ी में आकर ठहरा। भोंपड़ी के मालिक ने वह बेसी क्यों की लो लाकर सड़ बी के हाथ में दे दी और कहा—“सेठ जो यह बेसी आप यहाँ मूल गए थे और आपने फिर इसकी खोज तक नहीं की।”

सेठ ने कहा— ‘मैंने इस बेसी को मार्ग में बहुत खोजा परन्तु वह नहीं मिली। इसलिये मैंने समझ लिया कि मार्ग में

से किसी ने उठा ली है। मुझे भोपडी का ध्यान तक नहीं आया कि वहाँ भी मेरी थैली रह सकती है।”

सेठ अपनी थैली को पाकर बहुत प्रसन्न हुआ और उस वृद्ध गरीब की ईमानदारी पर मुग्ध हो गया। प्रसन्न होकर वह सेठ थैली को उस गरीब को ही देने लगा तो उसने लेने से स्पष्ट मना कर दिया और कहा—“सेठ जी, मेरे पास आपका पता नहीं था, वरना मैं इस थैली को कभी भी इतने दिन तक अपने पास नहीं रखता और आपके पास सुरक्षित पहुँचा देता।”

सेठ उस गरीब की चारित्रिक दृढ़ता से बहुत ही प्रभावित हुआ और उसके लडके को अपना हिस्सेदार बना लिया। इस प्रकार वृद्ध गरीब भी कुछ ही दिनों में धनवान् बन गया।





गुणों की परख



राजा रघुबीर सिंह अपनी प्रजा की मनार्थ का बहुत ध्यान रखते थे और इसी कारण से वह प्रतिदिन रात को बेश बदन कर झूमा करते थे।

एक दिन राजा नगर की चर्चा सुनने के लिये बैद्य बदन कर गया। उस दिन राजा को बहुत बेर हो गई। राजा रात के समय वापिस आया उस समय कुसहान सिंह संतरी राज भवन के पहरे पर था। उसने रघुबीर सिंह को नहीं पहचाना।

राजा रात्रि भर बरबादे के निकट ही बैठा रहा। सुबह हुई तो कुसहान सिंह उसे देखने गया कि यह कौन है जो रात्रि भर यही बैठा रहा है।

कुसहान सिंह ने देखा कि जिस व्यक्ति को रात-भर बेझरे रखा है वह तो राजा ही है कोई अन्य व्यक्ति नहीं। वह राजा को देखकर समझीत हो गया और अपनी भूल के लिए क्षमा माचना करने लगा।

खुशहाल सिंह के इस कार्य से राजा क्रोधित न हुए, बल्कि उसके इस कर्तव्यपरायणतापूर्ण कार्य से बहुत ही मुग्ध और प्रसन्न हुए। राजा ने उसे अपना अग-रक्षक बना लिया।

खुशहाल सिंह ब्राह्मण जाति का था। १६ वर्ष की अवस्था में ५) मासिक की नौकरी पर सेना में भरती हुआ था, और धीरे-धीरे अपने गुणों के कारण राजा का अग-रक्षक बन गया।



सच्ची दृष्टि



दृष्टी के पारसी को कई बार बहुत से संकटों का सामना करना पड़ा। संकटों एवं कष्टों का सामना करते हुए भी उनके मन में कभी निराशा को स्थान नहीं मिला।

जब कोई व्यक्ति उसको बड़-बचन भी करता था तो वह सदा ही हँस कर उत्तर देते थे और अपनी मूडबाजी से उसे हपोस्मित कर देते थे।

एक बार उनसे किसी ने पूछा—“आपके अन्दर ऐसी दिव्य-शक्ति कहाँ से आई?”

पादरी ने उत्तर दिया—“मैंने अपनी दृष्टि का मर्यादात्म्य उपयोग करके ही ऐसी शक्ति प्राप्त की है।”

प्रश्नकर्ता ने पूछा—“मन का दृष्टि के साथ क्या सम्बन्ध है?”

पादरी माहुर बोले—“जब मैं ऊपर की ओर देखता हूँ तो विचार आते हैं कि मुझे ऊपर जाना है वही ऐसा न हो जाए कि मेरे कर्म ऐसे हो जाएँ जिससे मैं ऊपर न जाकर नीचे ही

पड़ा रहूँ। जब मैं नीचे देखता हूँ, तो यह विचार आता है कि सोने-जागने, उठने-बैठने आदि के लिये बहुत थोड़ा पृथ्वी का भाग चाहिये। यदि आस-पास में देखता हूँ, तो बहुत से ऐसे व्यक्ति दृष्टिगोचर होते हैं, जो कि मेरे से भी अधिक कष्टमय जीवन व्यतीत कर रहे हैं।”

“इस प्रकार मैं अपनी दृष्टि को शुद्ध विचारों की ओर आकर्षित करता हूँ, जिससे कि मेरा मन प्रसन्न और शान्त रहता है और इसी कारण से मैं दुःख में भी सुख का अनुभव करते हुए अपनी जीवन-यात्रा हर कदम आगे बढ़ा रहा हूँ।”



काजी का न्याय



मल्ल देव का बादशाह खिचकर प्रवा की दशा जानने के लिये बेप बरस कर बुला करता था। वह प्रत्येक स्वान का गुप्त रूप से निरीक्षण किया करता था परन्तु उसकी भेंट काजी से नहीं हो पाई थी इसीलिये वह काजी को नहीं पहचानता था और न काजी उसे पहचानता था।

एक दिन बादशाह गुप्त रूप से बोड़े पर जा रहा था। मार्ग में उसने जब एक लंगड़े व्यक्ति को असहाय स्थिति में देखा तो उसे बधा या गई। बादशाह ने उसे अपने साथ बोड़े पर बैठा लिया और उसके नीचे तक पहुँचा दिया।

गाँव में पहुँच कर उस लंगड़े व्यक्ति के विचारों में परिवर्तन हो गया और वह बोड़े से नीचे उतरने को तैयार न हुआ। वह बोला कि यह बोड़ा तो मेरा है मैं इससे नीचे क्यों उतरूँ। इस प्रकार वह बादशाह से सम्झका करने को तैयार हो गया।

दोनों ही न्याय के लिए काजी की कचहरी में पहुँचे और न्याय की प्रार्थना की । काजी जी ने कहा—“आप लोग कल आना, तब आपका न्याय किया जायेगा ।”

दूसरे दिन बादशाह तथा वह लंगड़ा व्यक्ति दोनों ही काजी की अदालत में पहुँचे । काजी जी ने दोनों में से एक को घोड़ा खाल कर लाने को कहा और दूसरे को बाँधने को कहा ।

जब कार्य पूर्ण हो गया तो काजी जी ने लंगड़े आदमी को १० कोड़ों की सजा दी और बादशाह को उनका घोड़ा दे दिया ।

बादशाह को काजी के इस न्याय पर बहुत ही आश्चर्य हुआ । तब बादशाह ने अपना भेद खोल दिया कि मैं गुप्त वेष में इस देश का बादशाह हूँ । बादशाह को अपने सामने देख कर काजी जी सम्मान पूर्वक खड़े हो गये ।

बादशाह ने काजी जी की प्रशंसा करते हुए पूछा—“आपने किस प्रकार पहचान लिया कि यह घोड़ा मेरा है ?”

काजी जी बोले—“जब आप घोड़े के साथ चले तो घोड़ा खुश होकर आपके साथ चल दिया, परन्तु जब वह लंगड़ा व्यक्ति लेकर चलने लगा, तो घोड़ा डर के कारण से ही उसके साथ चला । वस, इसी आधार पर मैं इस नतीजे पहुँचा कि घोड़ा उसका नहीं, आपका है ।”



धर्मिमान का फल



‘क्या कर्म का फल है पाप घृत धर्मिमान।
एक ब्राह्मण बहुत ही कठिन तपस्या किया करता था।
साप ही उसे इस बात का धर्मिमान भी बहुत था कि मेरे जैसे
तपस्वी इस सत्कार में कोई दूसरा नहीं है।

एक बार नारद मुनि उधर था निकले तो तपस्वी ब्राह्मण
ग्रहकार था उनके सम्मान हेतु उठ खड़ा भी नहीं। और अपने
साधन पर बैठे-बैठे ही नारद जी से बोला— ‘यदि आप भगवान्
के पास जा रहे हो तो पूछ लेना कि मेरी मुक्ति कब होगी।
नारद जी बोले— ‘मैं अभी वापस जा ही रहा हूँ।’

सुमोक परिभ्रमण के बाद नारद जी भगवान् के पास पहुँचे
और पृथ्वी का परिचय देते हुए ब्राह्मण की मुक्ति के सम्बन्ध में
पूछा— ‘उस तपस्वी ब्राह्मण की मुक्ति कब होगी?’ भगवान् ने
मुक्ति के योग्य व्यक्तियों की सूची नारद मुनि के सामने रख दी।

नारद जी ने मुक्ति पाने वाले व्यक्तियों की सूची को कई
बार देखा परन्तु उन्हें उस तपस्वी ब्राह्मण का नाम नहीं मिला।

इस पर वह आश्चर्य में पड़ गए कि वह ब्राह्मण तो बहुत ही कठिन तपस्या करने वाला है, फिर उसका इस सूची में नाम क्यों नहीं ।

नारद जी ने इस सम्बन्ध में भगवान् से पूछा—“उस तपस्वी ब्राह्मण का इस सूची में नाम न होने का क्या कारण है ?”

भगवान् बोले—“तपस्वी ब्राह्मण तप तो बहुत करता है, परन्तु उसे अपनी तपस्या का बहुत अहकार है, इसलिये उसकी वह तपस्या साथ ही साथ अहकार की अग्नि में स्वाह हो जाती है ।”

नारद जी जब वापिस भूलोक आये तो तपस्वी ब्राह्मण को सब कुछ कह सुनाया । और अंत में यह भी कहा

“दया—घम का मूल है,

पाप—मूल अभिमान ।

जब लों हृदय दया नहीं,

तब लो कैसे मिले निशान ॥”



भगवान् से प्रेम



नारद मुन को अपने ज्ञान और भक्ति के साधारण यह अभिमान था कि मेरे जैसा कोई दूसरा भक्त नहीं है। एक बार नारद भगवान् के पास बन-बिहार करने गये। वहाँ देखा कि एक व्यक्ति सूखे पत्त का रहा है। नारद जी ने उससे पूछा—“तुम सूखे पत्त क्यों का रहे हो?”

वह व्यक्ति बोला—“हरे पत्तों में जीव होते हैं इसीलिए सूखे पत्त ही का रहा है।”

नारद बोले—“यदि तू इतना धार्मिक है, तो यह कमर में तमबार क्या बाँध रखी है?”

उसने उत्तर दिया—“भगवान् के तीन बहुत बड़े शत्रु हैं उनका मारने के लिये ही मैंने यह तमबार अपने पास रखी है।

नारद जी ने पूछा—“भगवान् के तीन शत्रु कौन-कौन से हैं?”

वह व्यक्ति बोला—“प्रथम तो अर्जुन है, जिसने अपना रथ भगवान् को सारथी बनाकर चलवाया । दूसरा द्रौपदी है, जिसने भगवान् से झूठी पत्तले उठवाई । तीसरा नारद मुनि है, जो कि हर समय झूठ-उधर की बातें बनाकर दुःख दिया करता है ’

नारद जी अपने सम्बन्ध में उस गरीब व्यक्ति की बात सुनकर आश्चर्य-चकित हो गये और तत्काल ही उनको कोई उत्तर स्मरण नहीं आया । प्रयत्न करने पर मन ही मन में सत कबीर दास जी का यह पद याद आ गया —

“पढ़ पढ़ कर पत्थर भये,

पड़ित भया न कोय ।

ढाई अक्षर प्रेम का,

पढ़ें सो पड़ित होय ॥”



अशोक का प्रजा-प्रेम



सम्राट् अशोक ने एक बार अपने
ब्रह्मोत्सव के उपलक्ष में सब राज्यों के सूबेदार को बुलाया।
सभी राज्यों के सूबेदार अशोक के सम्मुख उपस्थित हुए।

अशोक ने सूबेदार सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए कहा था—
'सभा सूबेदार अपने कार्य के सम्बन्ध में बतलायें कि उन्होंने
क्या-क्या अच्छे कार्य किये हैं ? जिसका भी कार्य सबो तम होना
या उसे उचित होनाय दिया जायेगा।

सम्राट् की बात सुनकर पूर्व-प्रदेश का सूबेदार बोला—'मैंने
सरकारी कोष में पहले की अपेक्षा तीन गुनी वृद्धि की है।'
पश्चिम प्रदेश का सूबेदार बोला—'मैंने स्वर्ण में पहले से दुगुना
मात्र प्राप्त किया है। उत्तर-प्रदेश का बोला—'मैंने समस्त
जनता को अनुसामम में रहने के लिये तैयार किया है इसलिये
सब बिड़ोही उत्पन्न करने का साहस नहीं करते। मध्य-प्रदेश के
सूबेदार ने कहा—'मैंने राज्य-कोष में कोई वृद्धि नहीं की है
यन्कि उससे बर्च किया है—संकट-काल में प्रजा को खाने के

लिए सहायता दी। शिक्षा-प्रसार के लिए स्कूल बनवाये, यात्रियों के लिये धर्मशालायें बनवाई, रोगियों के लिए औषधालय खुलवाए, अनाथों और निराश्रितों के लिए अनाथालय बनवाए—क्योंकि प्रजा के सुख में ही राज्य की सफलता है।”

सभी सूवेदारों की बातों को सुनकर अशोक ने अन्तिम सूवेदार (मध्य-प्रदेश) की बहुत प्रशंसा की और उसे उचित इनाम दिया। अशोक ने कहा—“मुझे राज्य-कोष में वृद्धि नहीं चाहिये, बल्कि प्रजा के सुख में समृद्धि चाहिए। राज्य-कोष तो प्रजा की ही धरोहर है, राजा तो उसका एक प्रहरी मात्र है। मुझे प्रजा से धन संग्रह करके क्या करना है।”

प्रजा के हित के लिये कार्य करना और उसकी सुख-सुविधा का ध्यान रखना ही राजा के श्रेष्ठ कार्य है। परमात्मा ने राजाओं को प्रजा का रक्षक बनाया है, भक्षक नहीं। इसलिये राजा का कर्तव्य है कि प्रजा के धन को प्रजा के ही हित के लिये ही व्यय करे।

प्रजा-पालन के निमित्त एक लोकप्रिय राजा के कर्तव्य के सम्बन्ध में यह लोकोक्ति कितनी उपयुक्त है।

“जा सुराज प्रिय प्रजा दुस्सारी,
सो नृप अयसि नरक अधिकारी।”



सिद्धराज की बुद्धिमत्ता



सिद्धराज गुजरात के रहने वाले थे इसीलिये उनके नाम से ही सिद्धपुर नामक नगर प्रसिद्ध है। सिद्धराज के पिता करसिंह उसको तीन वर्ष का ही छोड़ कर स्वयं सिंघार गये थे। इसलिये सिद्धराज का वासन-पोषण माता के द्वारा ही हुआ।

एक बार सिद्धराज को सिन्धी के बावगाह ने दरबार में बुलाया। बावगाह के द्वारा इस प्रकार लड़के को दरबार में बुलाने का काम से उसकी माता बहुत मयमत्त हो गई। बावगाह के मय से सीधे ही लड़के को सिन्धी दरबार खान के नियमों का दिया और जब सिद्धराज चलने को तैयार हुआ तो उसे माता ने बहुत ही समझाया कि बावगाह ऐसा प्रसन्न हुआ कि इस प्रकार उत्तर देना और प्रसन्न प्रसन्न हुआ तो ऐसा उत्तर देना।

जब सिद्धराज को समझाया जा रहा था तो वह बीच में ही बाला— 'माता जो यदि बावगाह ने इनसे कोई भी प्रसन्न न

पूछा और अन्य ही कोई प्रश्न पूछ लिया, तो क्या उत्तर दूँ ?”
माता ने उत्तर दिया—“फिर अपनी बुद्धि से काम लेना ।”

माँ का आशीर्वाद लेकर सिद्धराज दिल्ली दरबार में पहुँच गया । बादशाह ने क्रोधित होकर उसके दोनों हाथ पकड़ लिये और पूछा—“अब बतलाओ, तुम्हारा रक्षक कौन है ?”

सिद्धराज ने उत्तर दिया—“आप ही मेरे रक्षक हैं ।” बादशाह ने पूछा—“मैं किस प्रकार तुम्हारा रक्षक हूँ ?”

तो सिद्धराज बोला—“यदि कोई व्यक्ति स्त्री को एक हाथ पकड़ कर लाता है तो जीवन के अन्तिम क्षणों तक उसकी रक्षा करता है, फिर आपने तो मेरे दोनों हाथ पकड़ लिये हैं, इसलिये अब मुझे क्या चिन्ता है ।”

बादशाह सिद्धराज के उत्तर को सुनकर शान्त हो गया और उसकी बुद्धि से प्रसन्न होकर उसे छोड़ दिया ।



प्रेम में पागल



एक स्त्री अपने प्रेमी के प्रेम में मस्त थी। एक बार उसका प्रेमी परीक्षा बना गया तो वह स्त्री उसके विद्योम में बैठने लगी। विद्योम में उसका धीर भी लीला होने लगा और इसी कारण से वह बहुत ही दुर्बल हो गई।

बहुत समय के पश्चात् उसका प्रेमी वापिस लौटकर आ गया। जब वह सबर उस स्त्री को लगी तो वह धान्य-विमोह हो गई और प्रेमी से मिलने के लिये लगी समय बन गई।

रास्ते में एकबार बादशाह मयाज वह रहे व तो वह स्त्री बादशाह के ऊपर हाकर ही धान्य बन गई। बादशाह को उसके इस कार्य पर बहुत ही कोष धाया परन्तु 'मयाज में जोब करना ठीक नहीं' इसी विचार से वे उस समय कुछ नहीं बोले।

बादशाह ने बाद में उस स्त्री को दरबार में बुलाया और उनकी उक्त प्रविष्टता का कारण अनुशासनात्मक रूप से पूछा। तब वह स्त्री बोली—“बादशाह सलामत! इसमें मेरा कोई दोष नहीं है, क्योंकि मैं अपने प्रेमी के प्रेम में पागल हो रही थी

और उससे मिलने के लिये इस आतुरता के साथ जा रही थी, कि मुझे यह भी मालूम नहीं पड़ा कि मार्ग में कौन बैठा है। परन्तु आप तो उस समय खुदा की इवाज में लीन थे, फिर आपने मुझे कैसे देख लिया ?”

बादशाह स्त्री की बात को सुनकर धरमा गया और सोचने लगा कि वास्तव में व्यक्ति को भी खुदा के प्रेम में अन्धा बन जाना चाहिये, तभी इस मार्ग में सफलता मिल सकती है।”



आत्मा और परमात्मा

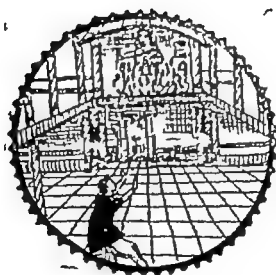


एक भक्त ने संत से पूछा—“मेरी और ईश्वर की आत्मा तो एक ही है, फिर ईश्वर ही सर्वज्ञ क्यों है मैं क्यों नहीं ?” महात्मा ने कहा—“मैं तुम्हारे प्रश्न का उत्तर समीचेता हूँ।

महात्मा ने उस भक्त से गंगा जल लोटे में भरवाने को कहा तब वह व्यक्ति गंगा जल लोटे में भर लाया और महात्मा जी को दे दिया।

महात्मा जी ने कहा—“देखो गंगा में भी जल है और इस लोटे में भी गंगा का जल है इसलिये आप इस लोटे के जल में नाव बना कर दिलावाये ? गंगा में तो नाव बसती ही है फिर इस लोटे के जल में क्यों नहीं बल सकती ? कारण स्पष्ट है कि जल की मात्रा कम है इसलिये इसमें नाव नहीं बल सकती। गंगा में पानी अधिक होता है इसलिये उसमें भली प्रकार नाव बल सकती है।

इसी प्रकार ईश्वर के अन्दर प्रकाश व शक्ति अधिक मात्रा में है, इसलिये वह सब पदार्थों को देखने में समर्थ है। चूँकि तुम्हारा हमारा ज्ञान सीमित है, इसलिये हम सकुचित सीमा के अन्दर ही कार्यरत हो सकते हैं। वस, यही आत्मा और परमात्मा का भेद है और इसी कारण से ईश्वर सर्वज्ञ है।



सच्चा प्रेम



राजपूताने में करनसिंह नाम का राजा हुआ।
त्रिमकीनारी कलावती नामक बीर कन्या के साथ हुई थी।

एक बार अलाउद्दीन खिलजी ने राजाओं पर बड़ाई की तो
राजाओं ने उसका बीरता-पूरवक सामना किया।

अलाउद्दीन ने राजा करनसिंह के ऊपर विष-मुक्त रात
छोड़ा। त्रिमकीनारी ने राजा अपने व्यवस्था में पुष्पी पर विर
पड़ा। कलावती को जब अपने पति की व्यवस्था की खबर पड़ी,
तो उस बीर राजाणी का भुक्त कभी समय जान हो गया और
राजके शरीर में गुन धोलने लगा। भुक्तार्थ रक्त-भूमि के बिने
फड़कने लगी और वह बीरकन्या उसी समय रक्त-स्नान पर
पहुंची। वहाँ उसने अपने पति की व्यवस्था को देखते ही अला-
उद्दीन के विरुद्ध युद्ध प्रारम्भ कर दिया और कुछ ही क्षणों में
अलाउद्दीन को पराजित किया।

राजा करनसिंह जहरीले बाण लगने के कारण से अचेत अवस्था में पड़े थे। किसी ने रानी से कहा कि यदि कोई व्यक्ति इसका जहर अपने मुख से चूस ले, तो यह अच्छा हो सकता है।

रानी ने सोचा कि यदि पति की रक्षा के लिये मेरी मृत्यु हो जाय, तो इससे सुन्दर एवं उपयुक्त अवसर कौन-सा होगा। उसने उसी क्षण अपने पति का विष मुख द्वारा चूस लिया और इस प्रकार पति को जीवन-दान देकर स्वयं स्वर्ग सिंघार गई।

राजा करनसिंह को मित्र एवं परिचितों ने दूसरी शादी करने के लिये बहुत ही आग्रह किया, परन्तु वे इसके लिये तैयार नहीं हुए। राजा करनसिंह ने कहा—“जब मेरी पत्नी ने मुझे जीवित करने के लिये स्वयं प्राण त्याग दिये, तो क्या मैं इतना भी नहीं कर सकता कि विषय-वासना को भी त्याग दूँ।” इस प्रकार राजा करनसिंह ने पत्नी की मृत्यु के पश्चात् दूसरी शादी न करके सबके सम्मुख पत्नी-प्रेम का एक महान् आदर्श प्रस्तुत किया।



जीवन की सार्थकता



एक बंद की दुकान में पुसाब के फूल बोटे का रहे थे। एक सहृदय पुष्प बहाना या निकमा, सो फूलों को छूटते-पीसते देखकर उसे बया भा गई। उस ध्यति ने फूलों से पूछा—“आपने ऐसा क्या अपराध किया है जिसके कारण आपका ऐसी असह्य बेचना सहन करनी पड़ रही है ?”

कुछ प्रमुक्त फलों ने उत्तर दिया—“दुमेच्छा ही हमारा सबसे बड़ा अपराध है। हम सहसा क्षिप्त उठे धीर इस प्रकार हमाए हंसना न देना जा सका। दुनिया कुन्ही एवं पीकितों को देखकर सबेचना प्रकट करती है। धीर बया ना भाव प्रर्षणित कपटी है। परन्तु मुन्ही को देखकर द्विर्षा करती है धीर उसे नष्ट करने का पुर्व प्रयत्न करती है। बग यही दुनिया का स्वभाव है।”

मेव फलों ने भी उत्तर दिया—“दूसरों के लिये मर मिटना—यही तो जीवन की सार्थकता है।



मन में कपट



एक बुढ़िया गठरी लिए हुए बा रही थी।
मार्ग में जब वह बक गई, तो विधवा के लिये बैठ गई।

एक बुढ़-सवार उधर से निकला तो बुढ़िया ने उससे कहा—
“जैसा मेरी यह गठरी अपने बोड़े पर रख लो मैं धागे बलकर
बाप से इसको ले लूँगी। क्योंकि मैं बहुत बक चुकी हूँ इसलिये
इस गठरी को धागे ले बलने में असमर्थ हूँ।”

बुढ़-सवार झकड़ कर बोला— “क्या मैं तेरे बाप का मौक़र
हूँ जो तेरी गठरी अपने बोड़े पर रख लूँ।” यह कहकर वह
बोड़े पर बैठ हुआ धागे बड़ भया धीरे बहुत दूर निकल गया।

मार्ग में चलते-चलते उसे ध्यान आया कि यदि उस बुढ़िया
की गठरी को मैं बोड़े पर रख लेता तो अपनायास ही मुझे गठरी
मिल जाती और मैं उसे सीधा घर ले जाता। गठरी को न लेकर
मैं बहुत बड़ी मूर्ख की हूँ। गठरी यदि मैं बुढ़िया को नहीं देता
तो वह मेरा क्या कर लेती।

यह ध्यान आते ही वह वापिस लौट पड़ा और घोड़े को दौड़ाता हुआ शीघ्र ही बुढ़िया के पास आया। अब वह बड़े मधुर स्वर से बोला—“भैया, लाओ यह तुम्हारी गठरी घोड़े पर रख लूँ, इसमें मेरी क्या हानि है। अच्छा है, तुमको थोड़ी दूर आराम मिल जायेगा। इस गठरी को मैं तुम्हारी आज्ञानुसार प्याऊ पर देता जाऊँगा।”

बुढ़िया बोली—“नही बेटा, वह बात तो बीत गई। जो तेरे दिल में कह गया है, वही मेरे कान में भी कह गया है। अब मैं स्वयं गठरी को लिए धीरे-धीरे पहुँच जाऊँगी।”

घुड़-सवार का मनोरथ पूरा नहीं हुआ, तो वह अपना-सा मुँह लेकर चलता बना।



महान् त्यागी



एक बार एक साहुकार की माता ने कहा—
 'बेटा तुम लाखों का सेन-सेन करते हो परन्तु मैंने अभी तक
 एक लाख रुपये एक ही स्थान पर रक्के हुए नहीं देखे हैं। एक
 लाख रुपये एक ही स्थान पर रखने ॥ कितना बड़ा पशुपति
 बनता है ? यह मैं देखना चाहती हूँ और उस पर बैठकर भी
 देखना चाहती हूँ ।

साहुकार ने अपनी माता के लिये एक लाख रुपये रखकर
 पशुपति बनवा दिया और माता को उस पर बैठवाया । साहुकार
 की माता एक लाख के पशुपति पर बैठे और फिर कुछ वान न
 करे यह कैसे हो सकता है ? यह सोचकर साहुकार ने साहुकार
 की बुलवाया ।

साहुकार ने माता को वान देने के लिये कहा तो माता को
 उस समय कुछ अभिमान था गया । वह साहुकार से बोली—
 'पशुपति की बातें तो बहुत देखे हूँ मैं परन्तु ऐसे बातें नहीं
 मिये होंगे ।

पंडित जी दान लेने अवश्य गये थे परन्तु स्वभाव से भिक्षुक वृत्ति के नहीं थे। पंडित जी का स्वाभिमान जाग उठा और वे जेब से एक रुपया निकाल कर और उस लाख रुपये के चवूतरे पर डाल कर बोले—“तुम्हारे जैसे दातार तो बहुत मिल जायेंगे परन्तु मेरे जैसे त्यागी विरले ही मिलेंगे, जो कि एक लाख को ठोकर मारकर कुछ अपने पास से मिलाकर चल देते हैं।”



मूर्ख ईर्ष्यालु



एक मनुष्य की पूजा से प्रसन्न होकर देवी ने स्वयं प्रमत्त होकर उसे प्रसन्न रूप एक संस्र दिया और कहा— “जो भी तुम चाहोगे वही इस संस्र के बजाने से प्राप्त हो जायेगा। परन्तु इस बात का ध्यान रखना कि पड़ोसियों को तुमसे झूठा मिथेबा।

मत्त प्रसन्नता पूर्वक बना गया। उसने यह संस्र अपने घर पर जाकर बजाया और कहा कि हमारा मकान बहुत ही मज्ज और सुन्दर बन जाय। सब के बजते ही तुरन्त बहुत ही सुन्दर मकान बनकर ऊड़ा हो गया। पड़ोसियों के जैसे ही हो महान बन गये। मत्त को यह बहुत बुरा लगा कि मेरा एक ही महान बना और पड़ोसियों के दो बन गये।

ईर्ष्यामि व्यक्ति दूसरे की सत्ता किस्स प्रकार देख सकता है उसने धम्भता से यह संस्र एक कोने में डाल दिया। परन्तु कुछ समय पश्चात् उसे कुछ रुपयों की बहुत आवश्यकता हुई। इसलिये

उसने विवश होकर शख को बजाया तो उसे जो धन मिला, उससे दूना पडोसियो को भी मिल गया ।

भक्त इस कार्य से बहुत ही क्रुद्ध हो उठा और ईर्ष्याविश कहा कि मेरे घर मे चार कुएं खुद जाएं । शख के बजते ही चार कुएं उसके यहां और आठ-आठ पडोसियों के यहां खुद गये । इससे भक्त को बहुत आनन्द का अनुभव हुआ और उसने ईर्ष्याविश कहा कि मेरी एक आंख फूट जाय, तो उसकी एक आंख फूट गई, परन्तु पडोसियो की दोनो ही फूट गई ।

अन्ये हो जाने के कारण से सब पडोसी कुएं मे गिर कर मर गये । पडोसियो को कुएं मे गिरते देख कर उस मूर्ख ईर्ष्यालु को बहुत प्रसन्नता हुई, यद्यपि उसकी भी एक आंख तो फूट ही चुकी थी ।



मूर्ख इंस्प्यालु



एक मनुष्य की पूजा से प्रसन्न होकर देवी ने स्वयं प्रगट होकर उसे प्रसाद रूप एक शंख दिया और कहा—
“जो भी तुम चाहोगे वही इस शंख के बजाने ॥ प्राप्त हो जायेगा । परन्तु इस बात का ध्यान रखना कि पक्षीसियों को तुमसे दूना मिलेगा ।

मत्त प्रसन्नता पूर्वक जाता गया । उसने वह शंख अपने घर पर बाहर बजाया और कहा कि हमारा मकान बहुत ही चम्प और सुन्दर बन जाय । शंख के बजते ही गुरगुर बहुत ही सुन्दर मकान बनकर खड़ा हो गया । पक्षीसियों के बैसे ही दो महल बन गये । मत्त को यह बहुत बुरा लगा कि मेरा एक ही महल बना और पक्षीसियों के दो बन गये ।

इंस्प्यालु व्यक्ति दूसरे की भलाई किस प्रकार देख सकता ॥ उसने पशुपदा से वह शंख एक कोने में डाल दिया । परन्तु कुछ समय परचाय् उसे कुछ कपड़ों की बहुत आवश्यकता हुई, इसलिये

कहने का तात्पर्य यह है कि जितने अन्न में दान किया जाय उतने ही अन्न में वह अधिक प्राप्त होती है और जितना संग्रह करो उतनी ही वह दूर भागती है। देखिये, नीचे के पद्य से भी यही स्पष्ट होता है —

“भागती फिरती थी दुनिया,
जब तलब रखते थे हम।
जब हमें नफरत हुई,
वह बेकरार आने लगी है॥”



त्यागी से लागी रहे



एक सेठ जा गहा पर ब०-ब० १९५

के पीकवान में बार-बार चुकटे थे। वहाँ पर एक सख्ती का उपासक भी बस हुआ था और वह इस इत्य को देख रहा था।

उस उपासक से यह सब नहीं बेका गया तो वह उठ्य और पीकवान में साठ मारकर बोला—“बेसर्ग सख्ती यहाँ चुकवाने में भी नहीं लग्या जाती है और मैं बस भर तेरी पूजा करते करते बक गया फिर भी तू मेरे पास तक नहीं धाई।”

सेठ साहब हँसते हुए बोले—“माई सख्ती की उपासना करने से सख्ती नहीं जाती है। सख्ती को ठुकरा देने वाले बीठ राम प्रभु की उपासना करने से ही सख्ती तो बया तीन सोक का का गम्य भी पाँच चुमने लगता है। सख्ती की जितनी पूजा की जाय उतनी ही वह दूर भागती है और जितनी भावा में ठुकराई जाय उतनी ही भावा में निफट जाती है।”

सुदा के बन्दों को सेवा



एक बार एक परोपकारी बन्धु के पास एक बेम धाम्मा घोर उसमें उससे पूछा—“मैं उन व्यक्तियों की सूची बना रहा हूँ जो कि सच्चे रिश्ते से सुदा को बन्धवी करते हैं। आप भी बताइए कि आपका नाम इस सूची में लिखू या नहीं।”

परोपकारी बन्धु ने कहा—“माई, मैं तो सुदा के बन्धों की सेवा करता हूँ, सुदा की नहीं। हाँ यदि सुदा के बन्धों की सेवा करने वालों की कोई डायरी आपके पास हो तो उसमें मेरा नाम लिख सीजिये।

बेम बोला— माई, तुम ऐसा क्यों करते हो कि सुदा को छोड़कर उसके बन्धों की मदद व सेवा करते हो ? इसमें तुम्हारा क्या नाम है ?

परोपकारी व्यक्ति बोला—“मेरे धर्मार्थ मैं कोई बलि मुझे इस कार्य की ओर उन्मुख होने की सतत प्रेरणा दे रही है

और इसी कारण से मैं इस कार्य में सलग्न हूँ।" उसी समय उसे एक शायर की यह उक्ति भी याद आ गई —

“खुदा के बन्दे तो हैं हजारों,
बन्दों में फिरते हैं मारे मारे।
मैं उनका बन्दा बनूँगा,
जिनको खुदा के बन्दों से प्यार होगा ॥”



दृष्टि का भेद



महर्षि व्यास के पुत्र युद्धदेव संसार में रहते हुए भी उससे विरक्त रहते थे। एक बार वे आत्म-व्यास की आज्ञा से प्रेरित होकर घर से वन्यम की ओर चले गये।

महर्षि व्यास पुत्र की इस वैराग्य-वृत्ति से बहुत चिन्तित हुए और वे पुत्र-माह में इतने बैठ गये कि पुत्र की घर से वापसी हुआ देखकर स्वयं भी उसको वापिस लाने के लिये उसके पीछे-पीछे चले गये।

मार्ग में नदी के तट पर कुछ स्त्रियाँ स्नान कर रही थीं। व्यास देव को देखकर सब ने बड़ी तत्परता से उचित वस्त्र लपेट लिये और इस प्रकार अपने सम्पूर्ण अंगों को वस्त्रों से आच्छादित कर लिया।

महर्षि व्यास बोले— बेटियो जब मेरा युवक पुत्र युद्धदेव तुम्हारे पास होकर आ रहा था तब तुम नदी में स्नान कर रही थी और नग्न अवस्था में भी तुमने उससे संकोच नहीं किया परन्तु अब ही मैं कुछ व्यक्ति तुम्हारे पास होकर आ रहा है।

तो तुमने सकोच किया और तुरन्त ही अपने वस्त्र शरीर पर लपेट लिये । यह रहस्य मेरी समझ में नहीं आ रहा है ।”

स्त्रियाँ बोली—“शुकदेव युवक होते हुए भी युवकोचित विकार से रहित है । वह स्त्री-पुरुष के अन्तर से भी परिचित नहीं है और उसके मन को विषय-वासना की गंध ने छुआ तक नहीं है, इसलिये उसकी दृष्टि में समस्त विश्व एक समान है । सासारिक भोगोपभोग के सम्बन्ध में वह एक बालक के समान अवोध है । परन्तु देव, आपकी ऐसी स्थिति नहीं है, इसलिये आपकी दृष्टि से छिपाने के लिये ही हमने वस्त्र शरीर से लपेट लिये और अपने अंगों को आपकी कुदृष्टि से बचाया । महर्षि व्यास उन वीरागनाओं के शूल के समान चुभते हुए वाक्यों को सुनकर बहुत ही लज्जित हो गए और तुरन्त ही वहाँ से नीची गर्दन करते हुए खिसक गए ।



दुर्जन के साथ भी सज्जनता .



हजरत मुहम्मद प्रति दिन नमाज पढ़ने के लिये मस्जिद में जाया करते थे। रास्ते में एक बुढ़िया प्रतिदिन उनके ऊपर कुड़ा डालकर उनको तंग किया करती थी इसलिये हजरत मुहम्मद प्रतिदिन बुढ़ा से प्रार्थना किया करते थे कि इस बुढ़िया को सख्खि हो और इस प्रकार मन में विचार करते हुए वे नमाज करने बसे जाते थे।

एक दिन मुहम्मद साहब उठर से निकले तो उस दिन उनके ऊपर कुड़ा नहीं डाला गया। मुहम्मद साहब ने दरवाजा खोलकर मासूम किया तो पता चला कि आज बुढ़िया बीमार पड़ी है।

हजरत मुहम्मद अपना सब काय छोड़कर बुढ़िया के पास गये। बुढ़िया उनको अपनी ओर धाते देखकर बबरा गई और अपने मन में सोचने लगी कि आज प्रतिदिन के कुदूरत का सबभ्रम खत्म मिलेगा। परन्तु मुहम्मद साहब बढ़ता लेने के बजाय उसकी सेवा में लग गये तो उस हृदय को देखकर बुढ़िया का हृदय उमड़

आया और उसे इस्लाम धर्म पर इतना विश्वास हो गया कि उसने स्वयं भी इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया।

हजरत मुहम्मद के जीवन में कितनी ही ऐसी भूलकियाँ हैं जिनसे स्पष्ट विदित होता है कि सज्जन एवं सुधारकों के पथ में कितनी विघ्न-बाधाएँ आती हैं और उन सब को पार करने के लिये विरोधियों को भी अपना मित्र बनाना पड़ता है और इसमें उन्हें कितना प्रेममय जीवन बनाना पड़ता है।

विरोधियों को नीचा दिखलाने से या हिंसक भावनाओं से उनको अपना नहीं बनाया जा सकता है, और न वे इस प्रकार के व्यवहार से सन्मार्ग पर ही आ सकते हैं। कुमार्ग पर भूला-भटका व्यक्ति प्रेम एवं मृदु व्यवहार से ही सन्मार्ग पर आ सकता है।



धन के दूस्ती



सुनाम बंसीय नासिखीन बादशाह पर्यन्त सम्बरित और आर्थिक दृष्टि के साक्षर थे। बादशाह होते हुए भी उन्होंने कभी एक पाई राज्य-काय से नहीं की और अपना जीवन निर्वाह पुस्तकें लिखकर ही किया करते थे।

मातृवर्ष का इतना बड़ा बादशाह होने पर भी उसने पन्च मुसल सासकों की मर्ति एक से अधिक शाही नहीं की और बन्धु बर एक पत्नी-पुत्र का पालन किया। बरेलू कर्मों के अल रक्त मात्रनादि बनाने का कार्य भी बेगम साहिबा को ही करना पड़ता था।

एक समय का प्रसंग है कि मोहन बनाते समय बेगम का हाथ बस गया तो बेगम रसोई बनाने में अग्रगण्य हो गई। बेगम ने बादशाह से कुछ दिन के लिये एक रसोइया रखने का प्रस्ताव किया परन्तु बादशाह उसके इस विचार से सहमत नहीं हुआ और ऐसा करने के लिये साफ मना कर दिया।

बादशाह ने कहा—“मेरा राज्य-कोष पर कोई अधिकार नहीं है, वह तो प्रजा की धरोहर के रूप में मेरे पास है, तो फिर मैं किस प्रकार उस कोष से रुपया खर्च कर सकता हूँ। और जब मैं राज्य-कोष से रुपया खर्च नहीं कर सकता, तो किस प्रकार एक रसोइये को नौकर रख सकता हूँ, क्योंकि मेरी आय केवल अपना जीवन चलाने मात्र के लिये ही कम पड़ती है अर्थात् अपनी आय से मैं अपना तथा परिवार का निर्वाह ही कठिनाई से कर पाता हूँ।”

बादशाह ने आगे कहा—“यदि मैं राज्य-कोष से रुपया लेता हूँ, तो यह तो श्रमान्त में खयानत है। इस प्रकार का कार्य मेरे द्वारा सम्भव नहीं है। जो बादशाह स्वयं स्वावलम्बी न होगा तो उसकी प्रजा किस प्रकार आत्मनिर्भर हो सकती है ?

अन्त में बादशाह ने बेगम से रसोइया रखने में स्पष्ट असमर्थता प्रकट कर दी और राज्य-कोष से एक पैसे लेना भी उचित न समझा। इस प्रकार बादशाह ने अपने इस कार्य से ससार के सम्मुख एक महान् आदर्श प्रस्तुत किया।



नादिरशाह का आदर्श



नादिरशाह एक हीन और साधन-हीन परिवार में पैदा होकर भी एक महान् विजेता हुआ है। वह घोपतियों की बोट में पलकर और दुःख-शांति के द्विर्द्वीप में झूलकर ही बाद में एक बड़ा विजेता एवं और पुरुष के नाम से प्रसिद्ध हुआ है।

बिजय तो नादिरशाह के बोटों के दौर के साथ ही बसती थी। वह एक म्हाबलम्बी और बहादुर सेनापति का और इन युद्धों के द्वारा ही वह प्रसिद्ध सेनापतियों की संतुष्टि में पैदा होता है।

नादिरशाह स्वयं एक पराक्रमी एवं हृदय-प्रतिष्ठ पुरुष था और धार्मिक-विश्वास तो उसमें झूट-झूट कर मरा हुआ था। वह प्रत्येक कार्य को करने की स्वयं क्षमता रखता और किसी कार्य के बिना भी दूसरों का मुँह नहीं देखता था। वह दूसरों की म्हायना पर अपनी उन्नति का ध्येय कभी नहीं बनाया था।

सुख कहाँ ?



एक योगी अपनी योग-साधना में मस्त था।
इसपर उभर से कुछ लोग भी योगी से कुछ पूछने के लिये
घाते थे।

एक दिन योगीराम के पास चार व्यक्ति घाये और अपनी-
अपनी कष्ट-कथा सुनाने लगे। जब योगी ने उनसे पूछा—
“आप लोग क्या-क्या चाहते हैं?” तो चारों ने इस प्रकार इच्छा
प्रकट की—

पहला व्यक्ति बोला—“मुझे यक्ष की बहुत इच्छा है।”
दूसरा बोला—“मुझे पुत्र की इच्छा है।” तीसरे ने जन की
प्राप्त्यकता प्रकट की। चौथे ने कहा—“मुझे सुन्दर स्त्री की
इच्छा है।”

योगी ने चारों की इच्छा पूर्ति का आशीर्वाद दिया तो
चारों व्यक्ति प्रसन्नता पूर्वक अपने-अपने और आनन्द-पूर्वक जीवन
व्यतीत करने लगे।

कुछ समय पश्चात् चारो व्यक्ति फिर योगी के पास आये । पहले ने कहा कि यश तो मिला परन्तु प्रतिस्पर्धा का दुःख नहीं जाता है । दूसरे ने कहा कि पुत्र तो बहुत हो गये परन्तु आज्ञाकारी एक भी नहीं है । तीसरे ने कहा कि धन तो बहुत एकत्रित हो गया है परन्तु खाना खाने तक को समय नहीं मिलता है और धन की रक्षा करना भी मेरे लिये एक समस्या बन गई है । चौथे ने कहा कि स्त्री तो बहुत सुन्दर मिली है, परन्तु उसके अति सहवास से एक विषम रोग लग गया है ।

चारो ही योगीराज से कहने लगे—“महाराज, हम तो पहले से भी अधिक दुःख का अनुभव कर रहे हैं । तब योगी ने कहा—“जहाँ तक वास्तविक सुख और शान्ति का प्रश्न है, वह सासारिक भोगोपभोग से प्राप्त होने वाली नहीं है । वह तो सतोष और त्याग से ही सम्भव हो सकती है ।”



महात्मा ईसा का आदर्श



एक समय महात्मा ईसा बैठे हुए बीन-बुद्धियों एवं दीक्षित व्यक्तियों के उत्थान के सम्बन्ध में विचार कर रहे थे। उसी समय उनके कुछ अनुयायी एक स्त्री को पकड़ कर लाये और बोले कि इस स्त्री ने दूसरे पुरुष से व्यभिचार कर लिया है। इसलिये इस निन्दनीय कार्य के लिये उसे मृत्यु-दण्ड देना चाहिये। अनुयायियों ने पत्थर मारकर उसकी मृत्यु करने का निश्चय किया।

महात्मा ईसा ने जब अपने अनुयायियों का यह निर्णय सुना तो उनको दया का यह धीर ने भरे हुए चेहरे दिखा बोले—“आपने जो एक स्त्री को इसमा भयंकर दण्ड देने का निश्चय किया है, आप भीम स्वयं अपने सम्बन्ध में कुछ समय के लिये विचार कीजिये।”

ईसा ने आगे कहा—“यही इस स्त्री को मारने का कार्य करे जिसने कभी भी किसी दूसरी स्त्री को कुदृष्टि से नहीं देखा है और न किसी दूसरी स्त्री के साथ व्यभिचार भी किया है।”

महात्मा ईसा का आदेश सुनकर सब लोग शांत हो गये और परस्पर एक-दूसरे का मुख देखने लगे । उन सब के नेत्र नीचे की ओर झुक गये । इससे ईसा को पता लग गया कि उनमें से एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं था जिसने कभी पर-स्त्री गमन न किया हो ।

ईसा ने कहा—“अत्याचारियो, दुष्टो, दुराचारियो और कुमार्ग पर चलने वालो ! पहले स्वयं अपने को देखो कि आप कितने सत्य-धर्मी व सयमी हैं ? आप लोगो को दूसरो के दोष देखने से पूर्व स्वयं अपने दोषो की ओर दृष्टि दीडानी चाहिये ।”

सभी पुरुषो ने लज्जावश सिर नीचे कर लिये और उस स्त्री को मुक्त कर दिया ।



राज्य-वैभव और त्याग



सिकन्दर महान् के शासन-काल में एक डाप्रोचिनिस् नामक रवागी व्यक्ति हुआ है। उसे न परिश्रम से काम का धीर न किसी प्रकार की कोई कामना ही थी। वह हर समय प्रयुक्तित एवं ध्यान-विमोह रहता था।

सिकन्दर ने जब उसकी क्याति सुनी तो उससे मेट करने की इच्छा हुई। दरबार में सभी व्यक्ति यह मन्त्री प्रकार जानते थे कि वह तो एक फक्कड़ भासमी है। इसीलिये वह बादशाह की भी कोई परवाह नहीं करेगा और अपने विचारों में ही मस्त रहेगा। इसी कारण से लोग उसे मीठकी कहते थे। इन कारणों से कोई भी व्यक्ति इस कार्य के लिये तैयार नहीं हुआ कि उसे बादशाह के दरबार में बला कर में पावे।

अन्त में सिकन्दर स्वयं ही उससे मिलने के लिए गया। डाप्रोचिनिस् उस समय कूप में पाराम से लेटा हुआ था और वह सिकन्दर ने पहुँचने पर भी लेटा ही रहा। उस महाद् सम्राट्

स्वाभिमानि वीरांगना :



आमेर के विख्यात महाराज जयसिंह का विवाह कोटा की राजकुमारी के साथ हुआ था। राजवाला का स्वभाव, आचरण और देश भूषा अत्यन्त सरल और आडम्बर-रहित था। परन्तु समृद्धशाली आमेर के रनवास में रहने वाली अन्य रानियाँ अत्यन्त मूल्यवान् आभूषणों से अपना शृङ्गार करती थी। कोटा की यह राजकुमारी विलास-प्रिय न होकर वीर-स्वभाव की थी। वह सदैव स्वच्छ और सादगी से रहती थी।

एक बार महाराज जयसिंह ने कहा कि कोटे की राज-रानियों की अपेक्षा तो यहाँ की नीच जाति की स्त्रियाँ भी अच्छे व सुन्दर वस्त्र व आभूषण पहनती हैं और अपना शृङ्गार करती हैं।

कुछ समय के पश्चात् महाराज जयसिंह एक काँच का टुकड़ा लेकर रानी के पहने हुए वस्त्रों को काटने लगे और उसे सुन्दर वस्त्र धारण करने का उपदेश देने लगे। परन्तु उस वीरवाला

सद्व्यवहार



सिक्खर के प्रतिहन्त्री पोरस को मुद्र-लेश में पकड़ लिया गया और उसे सिक्खर के सामने लाया गया। सिक्खर ने क्रोध-पूर्वक उससे पूछा—“बतारण, पर तुम्हारे साथ कैसा व्यवहार किया जाय ?”

पोरस ने बीरता के साथ उत्तर दिया—“जाय वैसा व्यवहार कीजिए जैसा किसी एक बाइसाह को दूसरे बाइसाह के साथ करना चाहिये।”

सिक्खर पोरस की बात को सुनकर स्वस्थ रहा गया और उसके इस बुद्धिमत्ता-पूर्वक उत्तर एवं साहस से इतना प्रभावित हुआ कि उसे उसी क्षण मुक्त कर दिया।

जो पोरस भयंकर संकट के सामने भी कभी शत्रु के सामने नहीं झुका वही सिक्खर के इस सह व्यवहार से इतना प्रभावित हुआ कि सदा के लिये उसका सेवक बन गया।

स्वाभिमानी वीरांगना :



आमेर के विख्यात महाराज जयसिंह का विवाह कोटा की राजकुमारी के साथ हुआ था। राजवाला का स्वभाव, आचरण और देश-भूषा अत्यन्त सरल और आडम्बर-रहित था। परन्तु समृद्धशाली आमेर के रनवाम मे रहने वाली अन्य रानियाँ अत्यन्त मूल्यवान् आभूषणों से अपना शृङ्गार करती थी। कोटा की यह राजकुमारी विलास-प्रिय न होकर वीर-स्वभाव की थी। वह सदैव स्वच्छ और सादगी से रहती थी।

एक बार महाराज जयसिंह ने कहा कि कोटे की राज-रानियों की अपेक्षा तो यहाँ की नीच जाति की स्त्रियाँ भी अच्छे व सुन्दर वस्त्र व आभूषण पहनती हैं और अपना शृङ्गार करती हैं।

कुछ समय के पश्चात् महाराज जयसिंह एक काँच का टुकड़ा लेकर रानी के पहने हुए वस्त्रों को काटने लगे और उसे सुन्दर वस्त्र धारण करने का उपदेश देने लगे। परन्तु उस वीर-वाला

ने इस कृत्य को अपनी आत्म-प्रतिष्ठा और स्वामिमान का प्रत्यक्ष समर्थन और सहायता ही उसने पास में रखी हुई तलवार उठा ली।

बहु गरज के साथ बोली— 'मैंने जिस बंध में जन्म लिया है, वह राज्य-बंध कदापि इस प्रकार की पूर्ण धीर उपहास के योग्य नहीं है। आप इस बात का स्मरण रखिये कि इसी धीर पुत्र में पारस्परिक-प्रेम सम्भाव सम्मान होने से ही साम्राज्य सुख ही नहीं परितु धर्म को रखा भी होती है।

धीर सभा की ने गरज के साथ भाषे कहा— "महाराज यदि विनाशिता चाहते हो तो बेवचनों के यहाँ बने बाघों या दुग्धों के चरम्य बूमो। मैं एक धीर बाला हूँ और उसी कारण से मैं और-बेध पहनता जाहूँ हूँ और एण का साथ सजाना चाहूँ हूँ। तलवार के हाथों से मैं सब का मुकाबला करने में भी समर्थ हूँ इसलिये आप मेरे सामने आधो जिससे आप सभी प्रकार समर्थ सको कि आपके के राजकुमार कांच के दुर्घों को बताने में इतने चतुर नहीं हैं जितनी कि कोटा की राजकुमारी तलवार में हाथ बसाने में निपुण है।"

जिसासी महाराज यह कृत्य देखकर पुनः आप बड़े रह गये। धीर-पत्नी का और रूप देखकर उनकी विनाशिता नष्ट हो गई। वह चरणों में भिन्न गया और बोला— 'इसी समा करो। मैं तुम्हें समझने में सक्षम की है। वास्तव में तुम्हारे बेसी चारागताओं से ही आज आर्य-जाति का जीवन स्थिर है। आपका हमारे जैसे विनाश-प्रिय जाति तो इस जाति को रक्षात्मक में न जा चुके होते।

दीवान सागरमल का न्याय :



सिखों के शासन-काल में मुलतान नामक सूबे में फारूक नाम के दीवान थे। वे बड़े प्रजा-पालक थे और उनके शासन-काल में कोई भी किसी प्रकार के राजकीय दुःख का अनुभव नहीं करता था। उनकी मृत्यु के पश्चात् उनका लड़का सागरमल दीवान के पद पर आसीन हुआ। वह भी अपने पिता के समान ही प्रजा-पालक और न्याय-प्रिय था।

एक बार एक बूढ़ी विधवा की जमीन कुछ व्यक्तियों ने अनुचित रूप से दवा ली। दीवान जी को विश्वास हो गया कि वास्तव में जमीन तो बुढ़िया की है, परन्तु इसे असहाय समझ कर ही इन लोगों ने इसकी जमीन दवा ली है।

एक दिन स्वयं दीवान न्यायाधीश के रूप में उस जमीन में स्थित कुएँ में पानी लेने गये। सभी लोग बुढ़िया के कुएँ पर न्यायाधीश को पानी भरते देखकर आश्चर्य में पड़ गये।

कुछ समय के पश्चात् ग्यायाधीश ने सब लोगों को बुलवाया और कहा— 'देनो इस कुएं में मेरी घंटी गिर पड़ी है। इससिंघ घाय इसका ध्यान रखना कि कोई उसे निकालने न पाये। मैं स्वयं कुछ समय पश्चात् उसे निकलवा लूंगा। परन्तु यदि घंटी घंटी नहीं मिली तो घाय लोगों को तीन हजार रुपये इस घंटी की कीमत देनी पड़ेगी। वहाँ उपस्थित सभी व्यक्ति चला गये और बोले—“इस कुएं पर हमारा कोई अधिकार नहीं है तो बुद्धिमा का कुंसा है। तब ग्यायाधीश बोले— ‘क्या यह तुम लोग सत्य कहते हो कि यह बुद्धिमा का कुंसा है?’”

सब लोगों ने एक स्वर में कहा—“हम सत्य ही कहते हैं कि यह कुंसा बुद्धिमा का है, हमारा इस कुएं पर कोई अधिकार नहीं है।

ग्यायाधीश ने कहा— ‘जब घाय लोगों का इस कुएं पर कोई अधिकार नहीं है तो किस बर्षीन में यह कुंसा बना हुआ है उस पर तुम लोगों का किस प्रकार अधिकार हो सकता है?’

ग्यायाधीश की इस बात को सुनकर वहाँ उपस्थित सभी व्यक्ति एक-दूसरे का मुँह देखने लगे और चुपचाप अपने-अपने घर लौट गये।



धन-बड़ा या विद्या :



मिश्र देश में एक धनवान् सेठ के दो पुत्र थे। सेठ ने एक पुत्र को विद्याध्ययन कराया और दूसरे को मिश्र का कोषाध्यक्ष बनवाया।

एक दिन कोषाध्यक्ष ने अपने विद्वान् भाई से कहा कि—“देख, मैं बिना पढ़ा भी कितने बड़े पद हूँ और सम्पूर्ण देश की धन सम्पत्ति मेरे हाथ में है, और तू विद्याध्ययन करके भी जैसा का तैसा ही रह गया है।”

विद्वान् भाई ने उत्तर दिया—“प्रभु की मेरे ऊपर बहुत बड़ी कृपा है, जो मुझ को विद्या रूपी धन दिया है। विद्या रूपी धन कभी भी कम नहीं होता है और जितना दान करो उतना ही बढ़ता है। इस धन की देवता भी इच्छा करते हैं।”

शिक्षित भाई ने आगे कहा—“आप मिश्र देश के कोषाध्यक्ष की उस गद्दी पर बैठे हैं, जिस पर अब तक बहुत से आदमी बैठ चुके हैं और बहुत से उस पद से उतार भी दिये गये हैं। फिर कोषाध्यक्ष बनने से ही यह राज्य कोष आपका थोड़ा ही हो

खुशामदी भक्ति और खुदा :



एक समय एक फकीर किसी राजा के यहाँ ठहरा। भोजन का समय हुआ तो राजा ने फकीर को सम्मान-पूर्वक भोजन कराया, परन्तु फकीर ने भोजन तो बहुत कम खाया और नमाज बहुत लम्बे समय तक पढ़ी। राजा ने फकीर को बहुत ही त्यागी और सयमी समझा और उसके प्रति राजा की अगाध श्रद्धा हो गई।

फकीर राजा से विदा लेकर अपने घर गया, तो उसने घर पहुँचते ही भोजन माँगा, क्योंकि भूख तेज लगी हुई थी और वह भूख से व्याकुल हो रहा था। घर वालों को यह जानकर आश्चर्य हुआ कि राजा के यहाँ ठहर कर भी इतनी भूख क्यों ?

फकीर ने उत्तर दिया—“राजा के यहाँ भोजन की तो कोई कमी नहीं थी और मैंने भोजन भी प्रेम-पूर्वक किया, परन्तु राजा की श्रद्धा का पात्र बन सकूँ, इसलिये भोजन कम खाया और नमाज अधिक समय तक पढ़ी।”

दून ने कहा—“यदि यह स्थिति है तो जब चाप पेट भरकर मोहन भी कीजिये और नमाज भी पढ़िये क्योंकि वहाँ के दिवाबटी मोहन से बैसे चापका पेट नहीं मरा और सत्ताप्त प्राप्त नहीं हुआ। उसी प्रकार बाघवाह का कुल करने के विषय की कई सम्पत्ति नमाज से कुल भी कुल नहीं हुआ होगा।”

दून और मोहन एक-दूसरे के प्रतिद्वन्द्वी हैं। इस सम्बन्ध में कुछ कबीर की उक्ति किठनी सार्थक है :—

“कजिरा कुल है कुली,
करत बदन में बध ।
या को दुकड़ा डारि के
बदन करो निरुध ।”



परिश्रम ही सच्चा संतोष :



अरब मे हातिमताई नामक एक महान् बादशाह हुआ है। उदारता और दान मे उसे अरब का हरिश्चन्द्र कहा जा सकता है। वह प्रजा की प्रत्येक सुख-सुविधा का ध्यान रखता था और प्रत्येक सम्भव सहायता के लिये सदैव तत्पर रहता था।

एक दिन कुछ लोगो ने बादशाह से पूछा—“अपने से भी योग्य और अच्छा आदमी आपने कभी देखा है या सुना है ?”

बादशाह ने उत्तर दिया—“मैंने अवश्य देखा है। एक दिन मैंने नगर के सभी निवासियों को भोजन का निमन्त्रण दिया और सयोगवश उसी दिन मुझे जंगल मे कार्यवश जाना पडा। जंगल मे एक गरीब लकड़हारा लकड़ी काट रहा था, परिश्रम के कारण उसके सब कपडे पसीने मे भोग गये थे और वह बहुत थक चुका था। लकड़ी का गट्ठा बाँधकर वह चताने ही वाला था कि मैं उसके पास पहुँच गया और उससे पूछा—भाई !

घात्र ना हाजिमनाई के घरी मगर की मर जमना का निमंत्रण
 है घात्र मगर के ममी माव वही पर चखे से घात्रा भोजन
 करने छिड़ तुम घटी पर क्या मही गये ? क्या तुम्हें कोई सुचना
 मही मिला ? यदि घात्र भू हाजिमनाई के घरी घात्रन करने
 जाना ना बल घण्टा पीर स्वादिष्ट भोजन पाने का
 विषय ।

मरहट्टा उगमना-गुरीट बाणा—“आ ध्वनि घने ज्योर
 पश्चिम पीर मरहट्टा मे की बसाई का राने पाने में ही
 मरहट्टा का अनुभव करना हो का पात्रा पीर घटागताओं के
 ६ बार व बाहर का हाव पगाने जान ?”

बाइगा मे बाणात—“मरहट्टा के दम उत्तर मे ही बल
 उमर दूषा पीर मीन घन मरहट्टा मर से उम घन से भी पश्चिम
 मुगा पीर मरहट्टा मरहट्टा ।”



दयालु सेठ :



एक वर्ष भयंकर अरुण पड़ा और नदी-नाने सभी सूख गये। प्रजा को अन्न तो बचा, पानी तरु मिलना भी दुर्लभ हो गया।

एक सेठ के पास अन्न का बहुत बड़ा सग्रह था, ऐसे समय में उसने सभी देशवासियों की सेवा की और सभी को यथायोग्य अन्न जीवित रहने के लिये दिया। परन्तु वह सोचने लगा कि मेरा भंडार तो समाप्ति पर है, अब मैं किस प्रकार अपने देशवासियों को अन्न दे सकूँगा ? इस चिन्ता में वह कमजोर हो गया और जब उसका अन्न समाप्त हो गया तो वह और भी गहरी चिन्ता में डूब गया।

एक दिन सेठ के एक मित्र ने पूछा—“आप इतने कमजोर कैसे हो गये हैं ? आपको किस वस्तु की कमी है ?” मित्र की बात सुनकर सेठ की आँखों में पानी भर आया और वह बोला—“मेरी यह स्थिति मेरे निजी दुखों के कारण नहीं हुई है, बल्कि इस दुष्काल में भूख से तड़पते देशवासियों की दशा को

देसकर ही हुई है और इस दुःख के कारण मेरा हृदय फटा
जा रहा है ।

मित्र सेठ की इस बयानुमा पर वह व्यक्ति मुग्ध हो गया
और सर्वथ उसकी प्रशंसा की ।

देखिये एक शायर भी इस सम्बन्ध में कह रहा है :—

“करो करोन्कार लख, परे बार खोले भिन्द,
नाम निकल गिला रहे कल्ला सो करना क्या है ?
कलीयों की कलारों पर, कर्वेई हर कर्वे कैने
कर्वे पर मरी बाबों का प्यो बाकी किया होवा ।”



सन्तोष और निष्काम भक्ति :



प्राचीन समय में राजा नाम का एक महानगर था। उसकी पत्नी का नाम था राजा। राजा पति-पत्नी प्रतिदिन जंगल में जाता कहते थे और लकड़ी काट कर लाया करने थे। उनमें जो कुछ भी श्राव होती थी, उसी में अपना निर्वाह करने थे।

एक दिन नारद मुनि ने भगवान् ने कहा—“एक दिन श्रुतियों का दुःख दूर करो।”

भक्तप्रसन्न भगवान् बोले—“इतना दुःख दूर करने के लिये कुछ दिया भी जाय, तो कोई उपाय नहीं है।”

नारद जी बोले—“उपाय क्यों नहीं है ! आपकी इच्छा ही नहीं है, ऐसा प्रतीत होता है।”

भगवान् ने कहा—“अच्छा, देवों ! जिस रास्ते से दोनों पति-पत्नी जा रहे हैं, उस रास्ते पर एक मोहर की धैली डाल दो।” भगवान् की आज्ञा से मार्ग के बीच में धैली डाल दी गई।

पति-पत्नी का हो रहे थे। पति धाये का घोर पत्नी पीछे। पति ने वह बंती देखी तो उसने सोचा कि कहीं पत्नी का मन न ललचा जाय इसलिये उस बंती के ऊपर मिट्टा डाल ही घोर धाये बड़ गंवा परम्पु डाँका ने उस कार्य को देख लिया घोर समझ गई। वह बोली—“आपने बूल क्यों डाली? बूल पर बूल डालने की क्या आवश्यकता है? बूल घोर खाने में अभी आपको कोई मेह प्रजोत होता मामूम पड़ता है!”

घपनी पत्नी की बात को सुनकर रौंटा बहुत ही प्रसन्न हुआ घोर उसकी छुरि-छुरि प्रशंसा की। उसे पूर्ण विश्वास हो गया कि मेरी पत्नी मेरे से भी अधिक त्याग की भावना रखती है।

यह नारद जी समयानु से बोले—“इनके लिये लकड़ी इकट्ठी कर दो जिससे इनको परिश्रम न करना पड़े घोर ये उनको बेच कर धन प्राप्ति कर सकें ”

मगवान बोले— इन कार्य के करने से भी कुछ होने वाला नहीं है। फिर भी नारद जी ने लकड़ियों एकत्रित कर ही परम्पु गंगाब दम्पति ने उन लकड़ियों को सुधा तक नहीं। दम्पति ने सोचा कि ये लकड़ियाँ किसी ने अपने लिये एकत्रित की हैं इसलिये उन्होंने उनसे हाथ भी नहीं मपाया। यहाँ तक कि उस घर के पास गया हुई लकड़ियों की सुधा तक नहीं।

उस दिन दलीब दम्पति को अधिक परिश्रम करना पड़ा। मगवाना जिसने न देखकर नारद ने समयानु ॥ कहा—“आप इनका इर्गन खोलिए घोर जो इनकी इच्छा हो, माँपने को कहा।”

भगवान् ने राकाँ और वाँका को दर्शन दिये और वरदान माँगने को कहा । गरीब दम्पति बोला—“हम तो आपके भक्त हैं, आपकी भक्ति से अधिक हमें कोई वस्तु प्रिय नहीं है । आप स्वयं ही बताइये, हम क्या चीज माँगें ? आपकी भक्ति के अतिरिक्त हमें कोई वस्तु नहीं चाहिये ।”

देखिये, शायर ने इस सम्बन्ध में क्या ही अच्छा कहा है —

“जन्म से कोई नीच नहीं,
जन्म से कोई महान् नहीं ।
करम से बढ़कर किसी मनुष्य को,
कोई भी पहचान नहीं ॥”



प्रभु को प्रेम ही प्रिय है



मिठाव सीधों का मुनिपा
भीरामचन्द्र जी का परम भक्त था। अधिक पढ़ा-लिखा न होने
के कारण वह रामचन्द्र जी को 'तू' कहकर पुकारता था परन्तु
रामचन्द्र जी इस बात पर कोई ध्यान नहीं देते थे और इसके
बिपरीत उसको अधिक प्रेम करते थे।

एक बार मन्मथ उस पर इस प्रसन्नता के लिये बहुत
बोधित हुए और उसे मारने के लिये तैयार हो दिये। उसी समय
रामचन्द्र जी बोले—“मन्मथ तू किसकी मारने को तैयार हो ?
बुढ़ा और स्वयं प्रभु के कारण ही तो यह मुझे 'तू' कहकर पुका
रता है तू उसे अपराध मठ समझे। इस प्रकार पुकारने से
तो उम्मा भरा इसके ऊपर प्रभु बहुत है।”

श्री रामचन्द्र जी बोले—“प्रभु के कारण से ही तो
‘राजा’ भी मुझे अपना बना सकता है। और अमरहित बाह्य
मन्मथान्तर्गत बने किसी का काम नहीं है। मेरे प्रति जिसकी भक्ति
इनका दे उनका नामा हुआ मन्मथ भी मेरे लिये विष के समान
बना।

मालूम पड़ती थी, परन्तु क्योंकि अब मैं ऊँचा चढ़ आया हूँ, इसलिये अब नीचे का सब प्रदेश सम लगता है।”

“आध्यात्मिक जीवन में उच्च अवस्था प्राप्त हो जाने पर व्यक्ति का हृदय इतना विशाल एवं व्यापक हो जाता है कि वह सभी धर्मों को समान दृष्टि से देखता है और मत-मतान्तरों के झगड़ में नहीं पड़ता है।”



सर्वधर्म समन्वय



जिसके पवित्र हृदय में ज्ञान का दिव्य प्रकाश विद्यमान रहता है ऐसे महान् व्यक्ति को बाद-विवाद एवं मत-मतान्तरों के वर्णन से कोई आनन्द नहीं आता । ऐसा व्यक्ति सदा-सबदा प्रत्येक धर्म को समान दृष्टि से देखता है ।

एक बार ब्राह्म-समाज के प्रमुख सपदेशक प्रतापचन्द्र मजूमदार साहिब महर्षि बेबेन्द्रनाथ ठाकुर से मिलने गये । उनकी बैठक पर उन्होंने विभिन्न धर्मों के बहुत-से ग्रन्थ दिये । प्रतापचन्द्र मजूमदार सभी-भांति जानने के कि महापि कई धर्मों को निरस्तपूर्ण दृष्टि से देखते हैं फिर इन धर्म-ग्रन्थों का संग्रह क्या है ? इस प्रकार सब की उनके घर पर इन ग्रन्थों को बैठाकर बहुत ही आश्चर्य हुआ ।

सब ने महापि से पूछा— 'आपकी देखिक पर ये पुस्तकें कैसे आ सको ?' महापि ने उत्तर दिया— 'जब मैं बीजे प्रवेश में प्रमत्त करता था तब मुझे छोटी-छोटी पहाड़ियों की ऊँचाई भी नीची

मालूम पड़ती थी, परन्तु क्योंकि अब मैं ऊँचा चढ़ आया हूँ, इसलिये अब नीचे का सब प्रदेश सम लगता है।”

“आध्यात्मिक जीवन में उच्च अवस्था प्राप्त हो जाने पर व्यक्ति का हृदय इतना विशाल एवं व्यापक हो जाता है कि वह सभी धर्मों को समान दृष्टि से देखता है और मत-मतान्तरों के भ्रष्ट में नहीं पड़ता है।”



धन दोष-मूलक है



राजा परीक्षित बहुत ही म्याम-प्रिय और दयानु राजा था। वह अपनी प्रजा की सुख-सुविधा का सदा ध्यान रखता था और इसी कारण वह जन प्रसिद्ध हुआ।

एक समय कसियुव को रहने के लिये कहीं भी उपयुक्त स्थान नहीं मिला तो वह परीक्षित के दरबार में गया और इच्छित स्थान की माँग की।

राजा ने कहा—“मेरे राज्य में तुमको रहने के लिये कोई स्थान नहीं है। परन्तु कसियुव ने स्थान के लिये दुबारा प्रार्थना की तब राजा ने दयाभाव से कहा—“वहाँ पर जोरी बुझा लगाव और बेट्या हो वहाँ पर तुम रह सकते हो। जिस स्थान पर भी ये चारों तुमको मिल जाएँ वहाँ पर तुम रहना प्रारम्भ कर दो।

कसियुव ने कहा—“ये चारों एक ही स्थान पर मिल जाएँ यह बहुत कठिन है। इसलिये मुझे तो ऐसा स्थान अनुमाह्य जिसमें कि ये चारों एक ही स्थान पर उपलब्ध हो जाएँ।

कलियुग की बात सुनकर राजा ने उसे एक स्वर्ण का गोला दिखलाया और कहा कि इस गोले में उक्त चारों पदार्थ मिल जाते हैं।

“वास्तव में धन मनुष्य को सत्मार्ग से कुमार्ग की ओर चलने के लिये प्रेरित करता है और इन्सान को हैवान बनाने के लिये कोई लोभ सवरण नहीं करता। धन से ही चोरी, जुआ, धाराब, बेव्यागमन आदि दुर्गुणों को-प्रोत्साहन मिलता है और मनुष्य मनुष्यता से नीचे गिर जाता है।”

देखिये, शायर भी सकेत कर रहा है —

“मौत कभी भी मिल सकती है,
लेकिन जीवन फल न मिलेगा।
भरने वाले ! सोच समझ ले,
फिर तुम्हको यह पल न मिलेगा ॥”





भाग की तृप्ति, भोग में नहीं



प्राचीन काल में एक राजा हुआ है। जब वह बूढ़ हो गया तो उसका धीरे-धीरे इन्द्रियां बहुत क्षिप्त हो गईं परन्तु उसके मन से काम-वासना नहीं गई।

एक समय वह बैठा हुआ था तो उसे विचार आया कि बूढ़ावस्था आ गई परन्तु काम-वासना शान्त नहीं हुई। इसलिये उसने मन्त्रान् से पुनः शक्ति और योग्यता प्राप्त करने के लिये प्रार्थना की।

जब राजा के मन्त्र की शक्ति की काम-विपत्ति की खबर पड़ी तो उसने अपना योग्यता प्राप्त की है विद्या और उसकी बूढ़ावस्था स्वयं से भी। इस प्रकार राजा योग्यता को पाकर बहुत प्रसन्न हुआ और अनेक प्रकार के योग्यता-योग्यता करता हुआ योग्यता ध्यानीत करने लगा। इस प्रकार योग्यता में निष्ठा हुए उसे बहुत दिन ध्यानीत हो गये परन्तु योग्यता-निष्ठा बरा भी कम नहीं हुई।

किसी प्रकार राजा को कुछ चेतना आई और उसने विचार किया कि जब अनेक वर्ष भोग भोगने पर भी मन को शान्ति नहीं मिली और भोग की इच्छा का अन्त नहीं हुआ, तो आगे होना भी सम्भव नहीं है। इस प्रकार उसको पूर्ण विश्वास हो गया कि भोग भोगने से इच्छा शान्त नहीं होगी, अतः उसने अपने पुत्र को बुलाकर उसका यौवन वापस कर दिया और कहा—“भोग भोगने से यह लालसा कम होने वाली नहीं है, इस प्रकार के कार्य से तो यह और भी बढ़ती है। इसलिये मनुष्य चाहे जितना सासारिक सुखों को भोगने का प्रयत्न करे, परन्तु इच्छा शान्त होने के बजाय बढ़ती ही जाती है। इसलिये मैं अब इसका पूर्ण त्याग करूँगा।”

राजा ने ईश्वर का स्मरण करने का निश्चय किया और सुख-दुःख को समान दृष्टि से देखता हुआ जीवन व्यतीत करने लगा। सामारिक भोगोपभोग से उदासीन होकर और निर्मल चित्त से ससार रूपी सुन्दर वगीचे में विचरण करने लगा। इस प्रकार उसने अपनी सभी इच्छाओं को विलीन होते देखा और जीवन में सच्चे सुख-शान्ति का अनुभव किया।

देखिये, समय रहते सावधान होने वालों के प्रति शायर भी कह रहा है —

“कल का दिन किसने देखा है,
आज दिन हम खोएँ क्यों ?
जिन घड़ियों में हँस सकते हैं,
उन घड़ियों में रोएँ क्यों ?”



मुनि जी बोले—“ठीक है, आज इसीलिये सेठ ने कहा था कि आवश्यक कार्य वश देर हो गई है।”

मुनि जी ने आगे कहा—“धन्य है ऐसे भक्त को, जो इतने भयकर एवं कष्टदायक समय मे भी प्रभु-भक्ति को नही भूला और अपूर्व धैर्य एवं साहस का परिचय देकर धर्म-स्थान मे आया। वास्तव मे प्रभु-भक्ति के बिना मनुष्य मे इतना धैर्य नही आ सकता है।”

जब मुनि जी ने सेठ से इस सम्बन्ध मे बातचीत की तो सेठ ने कहा—“महाराज, ससार मे कौन किसी का है ? पुत्र मेरा होता तो मेरे पास रहता और मुझे छोड़ कर क्यों जाता ? महाराज, यह ससार तो एक प्रकार का सम्मेलन है, जहाँ मिलन हुआ और बिछुड गये।”

सेठ के इन विचारो को सुनकर सभी उपस्थित जन बहुत प्रभावित हुए और सेठ को धन्य-धन्य कहने लगे।



दान और भावना



किसी विषय अनुष्ठान (कंडा) के सम्बन्ध में एक भारतीय डिप्टीमैजिस्ट्रेट (डेपुटेमैन) सन् १९२३ में म्यून गया था। उस समय वहाँ पर किसी चीनी परिवार के यहाँ ठहरने का व्यवसर था।

उस चीनी ब्रह्मन् को डेपुटेमैन ने भारत की स्थिति रचनात्मक कार्यों का विवरण तथा राष्ट्रीय शिक्षण का महत्त्व समझाया। चीनी ब्रह्मन् उनकी बातों से बहुत ही प्रसन्न हुआ और डेपुटेमैन को एक हजार रुपये का बैक प्रदान किया। परन्तु बैक देते समय वह भी स्पष्ट कह दिया कि हमारा नाम दानदाता-सूची में न मिला जाय और न हमारा नाम किसी को इस सम्बन्ध में पतासाया ही जाय।

डेपुटेमैन को अपने कार्यक्षेत्रीय पार चीनियों से सम्पर्क साधन का व्यवसर था तो उन्होंने भी यथाशक्ति दान दिया परन्तु अपना नाम नहीं मिलाया। जब उन व्यक्तियों से नाम न मिलाने का कारण पूछा गया तो उन्होंने कहा—

“हमारे धर्म-ग्रन्थों लिखा हुआ है कि धर्म के लिये या दान हेतु यदि शुभ सकल्प आया है, तो उसे तुरन्त पूर्ण करना चाहिये। धर्म का ऋण एक घड़ी भी अपने पास नहीं रखना चाहिये। जितना समय धर्म का ऋण देने में लगता है, उतना ही अधिक पाप सर पर चढ़ता है। हमारे यहाँ गुप्त-दान का बहुत महत्त्व है।”

शिष्टमंडल के सभी सदस्य चोनियो की बातों से चकित हो गए और उन्होंने सोचा कि अपने देश में तो बहुत बड़े-बड़े धनवान् पड़े हैं, जो दान लेने वालों को या तो लताड़ देते हैं या कुछ देते भी हैं, तो बहुत ही कृपणता के साथ। यहाँ तक कि देने से पहले दानदाता-सूची में नाम भी पहले लिखाते हैं और पीछे रुपया निकाल कर देते हैं। इतना ही नहीं, सम्भव हो सके, तो वे अपने नाम का पत्थर भी लगवाने के सम्बन्ध में पहले ही निर्णय कर लेते हैं।

चोनियो की धर्म-निष्ठा और दान के प्रति निस्पृह उदारता को देखकर भारतीय शिष्टमंडल बहुत ही प्रभावित एवं प्रफुल्लित हुआ, किन्तु साथ ही भारतीय धनिकों की धर्म के प्रति सकीर्ण मनोवृत्ति पर खेद भी अनुभव किया।

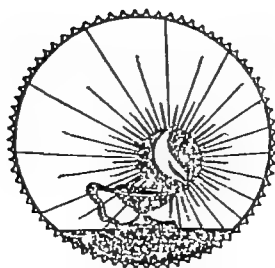


लान होता है तो चुपचाप धन को अपनी तिजोरी में रख लेते हैं।

कुछ समय के पश्चात् तम्बाकू का भाव बढ़ा और लाखों रूपयों का मुनाफा हुआ, तो मुनीम ने वे सब रुपये सेठ जी को दिये, परन्तु सेठ जी ने रुपये लेने से मना कर दिया और कहा—“इस लाभ के हकदार आप ही हैं। मुझे धन का लालच नहीं है, मैं यह चाहता हूँ कि जो मैंने एक बार कह दिया है उसका पालन अवश्य हो। तम्बाकू लेते समय मैंने यह सौदा तुम्हारे ही नाम लिख दिया था, इसलिये इसके लाभ-हानि के तुम ही जिम्मेदार थे। भाग्यवश तुमको लाभ हो गया, तो प्रसन्नता की ही बात है। यदि मैंने लालच में आकर ये रुपये ले भी लिये, तो वचन भग्न होगा, इसलिये इन रूपयों को लेकर मैं चरित्र-भ्रष्ट नहीं बनना चाहता। इस प्रकार सेठ ने लाभ का सब धन मुनीम को ही वापिस कर दिया।



जब ब्राह्मण का पुत्र घर गया तो उसने अपने पिता से सब घटना कह सुनाई। ब्राह्मण ने सेठ से पूछा—“मैंने अपने पुत्र को सदा सत्य बोलने की शिक्षा दी है, इसलिये सत्य की मर्यादा हेतु ही वह सत्य बोला और भविष्य में भी वह सत्य का ही आचरण करेगा, ऐसी मुझे सम्भावना है। जिसने अब तक असत्य से बचाया है, वही इस अन्न और आजीविका के सकट से भी बचायेगा।” और इस प्रकार कह कर ब्राह्मण अपने घर वापिस चला गया।



क्रॉस्लीन और समय का मूल्य



वेम्बामिन क्रॉस्लीन

पुस्तक की दुकान करते थे और दुकान में साथ-साथ एक छाया-ना घेन भी था।

एक दिन कोई सज्जन उनकी दुकान पर पुस्तक खरीदन के लिये आया। उस समय दुकान पर भीड़र बैठा हुआ था। प्राहक ने उसने एक पुस्तक की कीमत पूछी। नौकर ने उस कीमत बतला दी परन्तु उसे विश्वास नहीं हुआ और उसने फिर से कीमत पूछी तो नौकर ने कहा—“एक पुस्तक की कीमत एक डाकर है इसमें कम नहीं हो सकती है।”

प्राहक ने कहा—“मानिक को बुझा दो।” दुकान का स्वामी बर्तौ आया तो उसने प्राहक से विनय-पूर्वक पुस्तक की कीमत के सम्बन्ध में पूछा।

क्रॉस्लीन ने कहा—“इस पुस्तक की कीमत सवा डाकर है। प्राहक ने कहा—“आपके भीड़र ने ही इसकी कीमत एक

डालर ही वतलाई थी, इसलिए आप सच वतला दीजिये कि इस पुस्तक की असली कीमत क्या है ?”

फ्रेक्लीन ने हँसते हुए विनय-पूर्वक कहा—“अब इस पुस्तक की कीमत डेढ़ डालर होगी ।”

ग्राहक समझ गया कि इतना समय व्यर्थ में ही अपना भी और दूकानदार का भी नष्ट किया, इसी कारण से यह कीमत बढ़ाई जा रही है ।

ग्राहक के मन में सकोच हुआ और क्षमा माँगते हुए डेढ़ डालर देकर पुस्तक खरीदी और घर चला गया ।



जापानी महिला का नश्व प्रेम



कम और जापान के बीच जब युद्ध का आभास बन रहा था उस समय कम का एक मित्राणी जापान के ओकियासा नामक शहर के शब्दे मरा उसने जापानमय नामक एक मरदुखी के साथ शादी का कर ली। वह जापानी लम्बी के बोंई नाम गुन्य मरी मरना का। बहुत एक बेटी ही लम्बी लम्बी को दिने कर जापानी लम्बी के लम्ब मरना का और इस कर का कर गुन्य मरना रमना का दि करी लम्बी इस बेटी का म देना है।

एक दिन उसकी लम्बी को गुन्य मरना ही मरा दि देता करी इस बेटी को मरने करी दिमलगा है। लम्बी को गुन्य मरना मरने को करन हो गरी और उसने इस कर का करने के निने करने करी का करन निमरी। गुन्य निमरी के करन कर देती देनने के करन हो मरी।

करन कर के उगे मरा मरा दि देता करी का कर का गुन्य मर है और गुन्य के लम्बी मरकरन इस बेटी के मरना है।

पति-प्रेम से भी अधिक स्वदेश-प्रेम रमणी के हृदय में प्रवाहित हो गया और फलस्वरूप एक दिन उस पत्नी ने अपने पति को शराव पिला दी और पेटो के सभी कागज पुलिस के सुपुर्द कर दिये। जब उसके पति को इस सम्बन्ध में जानकारी हुई तो वह उसी समय जापान छोड़ कर रूस चला गया, क्योंकि वह समझ गया कि अब मेरी पत्नी को मेरा सब भेद मालूम हो गया है।

“धन्य है ऐसी वीरागनाओं को जो देश-प्रेम के लिये अपना सासारिक भोगोपभोग भी त्याग देती हैं और नारी समाज का मस्तक ऊँचा करती हैं।”



राजा चन्द्रपीठ की उदारता



काश्मीर में चन्द्रपीठ नामक एक राजा हुआ है। वह बहुत ही सुदृढ़णी चार्मिक और मोलि-वराणा था। काश्मीर के इतिहास 'राज-तरंगिणी' में लिखा है कि वह राजा सतयुग के राजाओं के समान धर्म निष्ठ था।

एक बार राजा किसी स्थान पर अघहार-मठ बनवाना चाहता था। उसके लिये स्थान की खोज हुई। जिस स्थान को पसन्द किया गया उसके निचट ही एक जमार की मौपड़ी थी।

राज्य के नर्मचारियों ने नर्मचार को बहुत समझाया कि वह इच्छानुसार घन जैवर मज्जड़ी का स्थान दे दे परन्तु वह ऐसा काम के लिये तैयार नहीं हुआ।

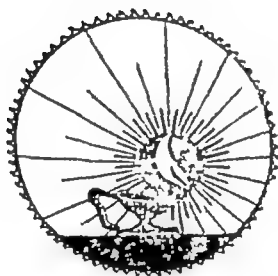
राज्य-नर्मचारी जब अपने कार्य में असफल रहे। उन्होंने राजा के पास नर्मचार के विरुद्ध पत्र लिखा। राजा ने इस पत्र के लिये नर्मचारियों का बहुत ही मठाड़ा।

अन्त में वह चर्मकार इस बात पर सहमत हो गया कि यदि राजा स्वयं आकर भोपड़ी का स्थान मंगे, तो दे सकता हूँ।

जब राजा स्वयं चर्मकार के घर गया और उससे भोपड़ी की याचना की, तो उसने सहर्ष भोपड़ी दे दी और राजा ने उसे भरपूर कीमत देकर सन्तुष्ट कर दिया।



ध्यान दिया। उसके हृदय के शुद्ध भावों के प्रति तुमने उपेक्षा दृष्टि रखी। मुख से शुद्ध उच्चारण और हृदय के शुद्ध भाव— इन दोनों में बहुत बड़ा अन्तर है। शुद्ध उच्चारण की तुलना में मन्त्रे हृदय की भक्ति ही श्रेष्ठ होती है।”



चात की करामात



कमरुता शहर में अरुणचन्द्र नामक एक ज्योति ब्रह्म बना बुद्धिमान एवं विद्वान्मनुष्य था। संदेशों का भी उसको बहुत समझ ज्ञान था।

उसको किसी प्रकार के घराब बीम का व्यवसाय मम न था और उसको यह धारण हमनी बड़ गई कि प्रतिदिन बाजार की ओर लगे। इस कार्य में प्रवृत्त है उसका सम्मान कम होने लगा।

एक दिन के घाने बगीचे स्थित मकान की व्यवस्था कराना चाहते थे तो उन्होंने एक कारीगर को बुलाया और मकान की व्यवस्था के लिये कहा। साथ ही यह भी कह दिया कि हम कार्य को घास ही समझ कर देना चाहिये।

कारागर ने उत्तर दिया— घास नी में दूनी। अथवा कार्य करने चाहिए। बर्बाद करने ही नहीं करने का धारणा कर घास है।”

अथवा कार्य छोड़े—मकान का कार्य करने ही कि कम काम

कारीगर बोला—“बाबू जी, मैं शराब थोड़े ही पीता हूँ जो वायदे के अनुसार कार्य न करूँ। मैं तो जो वायदा करता हूँ, उस कार्य को समय पर पूरा ही कर देता हूँ ?”

स्वरूप बाबू ने पूछा—“क्या, शराब पीने वाले ही झूठ बोलते हैं।”

कारीगर बोला—“शराब पीने से मनुष्य की मनुष्यता नष्ट हो जाती है, इसलिये उसे अपने द्वारा कहे हुए और दूसरों के द्वारा कहे हुए शब्दों का कुछ भी ध्यान नहीं रहता है।”

कारीगर के इन वाक्यों को सुनते ही स्वरूप बाबू की आँखें खुली और उनके हृदय में चेतना का संचार हुआ। तब उनको स्वयं यह समझते देर न लगी कि शराब मनुष्य को मनुष्यता से नीचे गिरा देती है। स्वरूप बाबू ने उसी समय अपने मकान से शराब की बोतलो और प्यालो को बाहर फेंक दिया और इस बात का प्रण किया कि भविष्य में शराब नहीं पीऊंगा।



और हँसने लगा। राजा को बहुत आश्चर्य हुआ कि यह युवक ऐसी विषम परिस्थिति में भी हँसता है। राजा ने उस युवक से हँसने का कारण पूछा।

युवक बोला—“सन्तान माता-पिता का प्रिय धन है। यदि सन्तान के प्रति कोई अन्याय करे, तो वह माता-पिता के पास जाता है। यदि माता-पिता कोई ध्यान न दें, तो वह काजी के पास जा सकता है, और यदि काजी भी कोई सुनवाई न करे तो अन्त में राजा के पास जाता है। यदि राजा भी स्वार्थ की दृष्टि से देखे और अन्याय करे, तो मेरी दृष्टि सहसा ऊपर उम परम पिता परमेश्वर की ओर उठ गई, जो बादशाहों का भी बादशाह है।”

युवक की बात सुनकर राजा को दया आ गई और उसने सोचा कि इस निरपराधी युवक की मृत्यु से तो मेरी ही मृत्यु हो जाय, तो उचित है। राजा ने युवक को धन्यवाद दिया और प्रसन्नता पूर्वक छोड़ दिया। इस पुण्य-कर्म से राजा की आत्मा को इतनी शान्ति मिली कि उसी दिन से राजा के स्वास्थ्य में सुधार होने लगा और कुछ ही दिनों के पश्चात् राजा पूर्ण-रूप से स्वस्थ हो गया।



उन्होंने अन्त कहा—“जो सुख, त्याग और सयम में है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। इसलिये मनुष्य को अपना जीवन त्यागमय एवं सात्त्विक बनाना चाहिये, तभी उसे वास्तविक शान्ति का अनुभव हो सकता है।”



इन विश्वास के कारण से ही वह रण-क्षेत्र में भी निर्भय होकर अपूर्व उत्साह के साथ लड़ता था। युद्ध-क्षेत्र में जब भी विरोधियों की गोली उसके कान के पास से समनाहट करती हुई निकलती थी, तो उसे यह आभास होने लगता था कि उसकी माता पृथ्वी पर घुटने रखकर प्रभु से पुत्र की जीवन-रक्षा के लिये प्रार्थना कर रही है।



मातृ भक्ति और ईश्वर निष्ठा



गैरिबास्की जिसने कि इटली की स्वतंत्रता के लिये महान् कार्य किया था बहुत ही मातृ भक्त और ईश्वर में निष्ठ रहने वाला उत्साही युवक था। गैरिबास्की के उच्च चरित्र-निर्माण में उसकी माता का ही पूर्ण हाथ था और उसकी माता ने अपने पुत्र के जीवन को उन्नति की ओर प्रवृत्त करने के लिये कोई भी कमी न रखी थी।

गैरिबास्की ने अपनी आत्म-कथा में लिखा है—“मेरे प्रसाधारण साहस को देखकर जो लोग विस्मय करते हैं और मुझ-प्रेम में भी मेरे पास देवी-शक्ति होने का अनुमान करते हैं इन सब का मूल कारण ही देव-भक्त पर मेरा पूर्ण विश्वास है। मेरा हृदय विश्वास है कि जब तक सत्त्विक का आदर्श था और देवी के समान मेरी माता मेरे प्रार्थनों की उत्तम ईश्वर की उपासना एवं आराधना में संलग्न रहेगी तब तक मेरे जीवन की पूर्ण रक्षा होगी।”

इस विश्वास के कारण ने ही यह सत्य-क्षेत्र में भी निर्भय होकर प्रभु उपाह के साथ सहता था। मुद्र-क्षेत्र में जब भी विरोधियों की गोची उनके कान के पास में मगनाएट करनी हुई निरन्तरी थी, तो उसे यह आनाम होने लगता था कि उसकी माता पृथ्वी पर पुटों गगनकर प्रभु में पुन की जीवन-रक्षा के लिये प्रार्थना कर रही है।



चकीर के प्रश्नोत्तर



विभी मुक्क के एह चकीर के निम्न
निम्न नाम प्रश्न किये —

१— चकीर की गला मरक है घोर बदन मरिदा की
गला ही बरने है परन्तु मैं उसको देग क्यों बरों मरता है ?

२— मनुष्य का उसका पात-कर्मों के कर्मफल दण्ड क्यों
दिया जाता है जब कि मनुष्य जो कुछ करता है वह सब चकीर
का प्रेरणा से ही करता है ?

३— चकीर जीनाम को मरिदासि के शासक उसे दण्डित
करा करता है जब कि जीनाम स्वयं मरिदासि है चकीर
मरिदा के द्वारा मरिदा का निग प्रचार प्रभाव हो सकता है ?

चकीर के मुक्क के तीनों प्रश्न समीक्षा-मुखर मुखर एक
दूसरे उगारा घोर मुक्क के गर के गर दिया। मुखर के चकीर
के चिह्न काको के मरी शासक मरिदा की प्रार्थना की।

चकीर के चकीर का मुक्का घोर मुखर के गर के मुखर
मारने का चिह्न मुक्का की चकीर के ऊपर दिया—“हम मुखर

ने मुझ से तीन प्रश्न पूछे थे, इसलिये मैंने इसके सर मे पत्थर मार कर ही तीनों प्रश्नों का उत्तर दे दिया है।" काजी ने क्रोध पूर्वक पूछा—“किस प्रकार से आपने पत्थर मार कर उत्तर दिया है?”

फकीर बोला—“इस युवक के सर मे जो पत्थर लगने से दुःख हुआ है, क्या वह दुःख मुझे दिखला सकता है? यदि यह मुझे अपना दुःख दिखला दे तो मैं इसे ईश्वर दिखला सकता हूँ। जिस प्रकार इसका दुःख मुझे दिखलाई नहीं देता है, इसी प्रकार इसे भी ईश्वर नहीं दिखलाई दे सकता है। वह सत्ता तो आन्तरिक अनुभव द्वारा ही देखी जा सकती है।”

दूसरे प्रश्न का उत्तर यह है—“जा कुछ मैंने किया वह ईश्वर प्रेरणा से किया है, इसलिये यदि इसके सर मे पत्थर लगा, तो इसमे मेरा क्या दोष?”

तीसरे प्रश्न का उत्तर यह है—“इसका शरीर भी मिट्टी का बना है और पत्थर भी मिट्टी का ही बना है, फिर मिट्टी का मिट्टी पर क्या प्रभाव हो सकता है?”

फकीर के तीनों प्रश्नोत्तरों को सुनकर युवक भी चकित हो गया और काजी ने उसे सहर्ष छोड़ दिया।



१०६

ग्रामीण का अटुमुत ज्ञान

३४१

कुछ ही दूर चलने के पश्चात् न्यूटन ने देखा कि सूर्य बादलो से ढकता जा रहा है और देखते ही देखते बहुत ही वेग से वर्षा भा होने लगी। न्यूटन वर्षा के पानी से भोग गया।

अब न्यूटन को गडरिये की बात याद आ गई और उसे बहुत ही आश्चर्य हुआ कि गडरिये ने किम प्रकार यह जानकारी प्राप्त कर ली थी कि वर्षा शीघ्र ही होने वाली है।

न्यूटन शीघ्र ही गडरिये के पास गया और एक गिन्नी उसे देकर उससे पूछा कि उसने बिना बादलो के किस प्रकार पता लगा लिया कि शीघ्र ही वर्षा होने वाली है।

गडरिये ने उत्तर दिया—“देखिये, सामने झाड़ी में गीदड़ी अपने बचाव के लिये जगह ढूँढ रही थी और अब भी वह झाड़ी में छिपी हुई है। इसी से मैं समझ गया कि शीघ्र ही वर्षा होने वाली है।”

न्यूटन ग्रामीण के इस प्रकार के ज्ञान से बहुत ही प्रसन्न हुआ और उसे सहर्ष धन्यवाद देकर अपनी यात्रा पर चल पड़ा।



पद्मलोचन के इस आदर्शमय त्याग को देखकर अधिकारी बहुत ही प्रसन्न हुए और उसकी इच्छानुसार साथियो का उचित वेतन बढ़ा दिया गया ।



तब उस अंग्रेज युवक ने कहा—“बस, इस समय मेरा भी यही विचार है। यह तूफान भगवान् के हाथ में है और भगवान् पर मेरा पूर्ण विश्वास है कि वह मेरा कभी भी अहित नहीं करेगा। इसी कारण मैं निश्चिन्त एवं शान्त बैठा हुआ हूँ।”

जिस साधक की ईश्वर के प्रति दृढ निष्ठा है, ईश्वरीय प्रेरणा सदैव उसके कल्याण के लिए प्रेरित होती रहती है। इस शाश्वत तथ्य की पुष्टि में निम्नलिखित पद कितना सार्थक है—

“जाफो राखे साईयाँ,
मार सकं ना फोय ।
बाल न बाँका करि सकं,
जो जग बंदी होय ॥”



महात्मा गांधी और चूमा

१०
४
१

दक्षिण अफ्रीका में महा-
त्मा के समय अंग्रेजों के लोग महात्मा गांधी के विरुद्ध थे। वहाँ
वहाँ की दूना दाना दान में लोगों के महात्मा का घर प्राण
प्राण धोखा था। दिया था।

एक दिन मैं भी वहाँ गया था— 'महात्मा
का नाम है कि उनका जो देश में गया था। वहाँ गांधी
लोगों के देश में था। वहाँ गांधी का नाम था।
वहाँ गांधी का नाम था। वहाँ गांधी का नाम था।

एक दिन गांधी जी का नाम था। वहाँ गांधी का नाम था।
वहाँ गांधी का नाम था। वहाँ गांधी का नाम था।
वहाँ गांधी का नाम था। वहाँ गांधी का नाम था।
वहाँ गांधी का नाम था। वहाँ गांधी का नाम था।
वहाँ गांधी का नाम था। वहाँ गांधी का नाम था।

गांधी जी जब नियत समय पर अपने स्थान पर नहीं पहुँचे, तो जनता में स्वाभाविक व्याकुलता पैदा हो गई और वे गांधी जी को ढूँढने के लिये इधर-उधर निकल पड़े। एक व्यक्ति अचानक उधर आ निकला और उसने गांधी जी को नाली में पड़े हुए कहाते देखा। गांधी जी को इस दुर्वस्था में देखकर उसने उनको तुरन्त उठाया और उसी समय अस्पताल में तात्कालिक चिकित्सा के लिये ले गया।

पुलिस महात्मा जी के बयान लेने के लिये अस्पताल पहुँची तो महात्मा जी ने यह कह कर मना कर दिया कि मैं अपने एक स्वदेश बन्धु के विरुद्ध कोई कानूनी कार्यवाही करने को तैयार नहीं हूँ। पुलिस निराश होकर चली गई।

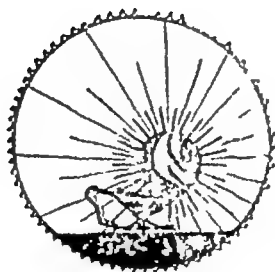
इस घटना के सम्बन्ध में महात्मा जी ने कहा—“अपने स्वदेश बन्धुओं के हाथ से मार खाना जिसके भाग्य में लिखा हो, वह बहुत बड़ा भाग्यशाली व पुण्यवान् है। मेरे उस बन्धु के विचार में मैं दोषी था, इसीलिये उसने अपने विचारों का अनुसरण करके मुझे दण्ड दिया है, अतः मैं उसका दोष किस प्रकार निकालूँ ?

जब यह समाचार उम पठान को मालूम पड़ा और उसने गांधी जी के विचार सुने, तो वह अपनी भूल पर पश्चात्ताप करने लगा और गांधी जी के पास आकर उनके चरणों में गिर गया और अपने अपराध की क्षमा माँग ली। तभी से वह पठान गांधी जी का सच्चा भक्त बन गया।



जीवन का मौन्द्य नियम-गालन

अपना नियम-पालन करने व अपना कार्य एकाग्र-चित्त में करने के कारण जब अन्य निपाहियों को उसके सम्बन्ध में सूचना मिली, तो उनका अन्य निपाहियों पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। उस निपाही के नाम में फड एकत्रित किया गया और उसकी स्मृति में एक स्मारक की स्थापना की गई।



अपनी प्रजा के इस अनुदार एव निष्कुर व्यवहार से राजा को बहुत ही कष्ट हुआ। अन्त में वह निराश होकर अपनी राजधानी को वापस चला गया। मार्ग में राजा को एक भोपड़ी दिखलाई पड़ी, वह उस भोपड़ी के पास गया और बन्द दरवाजे को खट-खटाया। किसान ने दरवाजा खोला और सम्मान-पूर्वक राजा से उनके आने का कारण पूछा।

राजा ने कहा—“मैं बहुत थका हुआ हूँ। मार्ग में जा रहा था, अब रात्रि हो गई है, इसलिये चलने में असमर्थ हूँ। कृपया आप विश्राम के लिये स्थान दे दीजिये।”

किसान बहुत ही प्रसन्न हुआ और बोला—“यह कौन-सी बड़ी बात है? आइये, अन्दर आइये और पूर्ण विश्राम कीजिये, इसमें पूछने की क्या आवश्यकता है। आप आराम से बैठिये और पूर्ण विश्राम कीजिये। आप कुछ देर से आये हैं, यदि कुछ ही समय पहले आ जाते तो भोजन तैयार था। अब थोड़ा भोजन शेष है, वह मैं लाकर आपको देता हूँ। किसान ने आगे कहा — “मेरी पत्नी बीमार है, इसलिये ठीक प्रकार से अतिथि सत्कार तो मैं नहीं कर सकता, परन्तु फिर भी जहाँ तक हो सकेगा आपकी सेवा करके अतिथि-सेवा का कर्तव्य पूरा करूँगा।”

किसान ने राजा को घास की गद्दी पर ही बैठा दिया और स्वयं उसके आदर सत्कार में लग गया।

कुछ समय के पश्चात् वह किसान राजा से बोला—“आप भोजन कीजिये और इसी घास पर विश्राम कीजिये। मैं अपनी पत्नी की देख-रेख करने जा रहा हूँ, क्योंकि वह बीमार है। मैं लौटकर आऊँगा और आपकी सेवा करके अतिथि-सेवा का कर्तव्य पूरा करूँगा।”

कुछ दर क पारवान् बहु विमान अपने एक बच्चे को लिदे हुए राजा के पास आया घोर बोला—'कम इस बच्चे का नामकरण मंजूर है। अगले १० यदि आप कम तक टूटते रहें।'

राजा ने बच्चे का प्रम-गुरुव घोर में बैठाया घोर आसी घोर देन हुए बहा—'यह बालक आध्यात्मी ११। अतिवि का इस दुःख अविष्कारणी का मुनकर विमान बहने ही प्रमत्त हुआ।

मकरा होने ही राजा ने विमान में बचने की आज्ञा दी घोर बोला— इस बच्चे का नामकरण मंजूर है तब तक न करें जब तक कि मैं आने गौर में नीचे कर आदि न आ जाऊँ। मैं लम्बे लम्बे घड़े में ही आदिम लोभने का प्रमत्त बचता।

विमान ने इसका कारण पूछा ना राजा ने कहा—'मेरे १२ में बहा एक बचवान् मित्र जगता ॥ उदगे में मुझारे इस आश-जगता को आप बचाना घोर मुझारे इस बालक का अर्पण करने का आग्रह भी बचता। अगले १२ मुझ मुझे बचने की दि अब तक मैं आदिम न आ जाऊँ तब तक मुझ इस बच्चे का नामकरण मंजूर न बचाने।'

राजा की अर्पण मंजूर करके विमान ने बचने दे दिया। विमान के आग्रहजन ने राजा 'मन्त्रा-गुरुव मन्त्रादी की बचा गया।

अब नीचे घड़े का लम्बे अर्पण हो गया की विमान को विमान है दि वह अर्पण मन्त्रा मन्त्र आदिम न आ जाऊँ है।

उसने वच्चे को गिरजाघर में ले जाने की तैयार की, तो उसी समय घोड़ों के आने की ध्वनि उसे सुनाई पड़ी।

किसान ने देखा कि राजा के अग-रक्षक आ रहे हैं। देखते ही देखते कुछ ही क्षणों में वे किसान के पास आ पहुँचे। राजा अपनी घोड़ागाड़ी से नीचे उतरा और किसान के पास जाकर बोला कि—“मैं अपनी प्रतिज्ञा का पालन करने के लिये आया हूँ। मैं वही अतिथि हूँ जो कि रात्रि को तुम्हारे यहाँ विश्राम करने के लिये ठहरा था।”

इस अनोखे दृश्य को देखकर और राजा की बात सुनकर किसान आश्चर्य में पड़ गया और एक शब्द भी उसके मुख से नहीं निकला। वह भयभीत होकर राजा की ओर देखने लगा।

राजा ने कहा—“मैं तुम्हारे अतिथि-सत्कार से बहुत प्रसन्न हुआ हूँ और उसी के फलस्वरूप उसका बदला देने के लिये आया हूँ। आज से तुम्हारा यह वच्चा मेरी देख-रेख में रहेगा। यह कहकर राजा ने मुस्कराहट के साथ किसान से पूछा मेरी भविष्यवाणी सही हुई न?”

सरल स्वभावी किसान सब बातें समझ गया और उसने अपने वच्चे को लाकर राजा की गोद में रख दिया। राजा उस वच्चे को घर ले गया और अपने ही वच्चे के समान उसका पालन-पोषण किया। किसान के लिये भी भोपड़ी के स्थान पर एक सुन्दर भवन बनवा दिया गया अब किसान आनन्द पूर्वक रहने लगा और अपने मन में सोचने लगा कि मेरी एक छोटी-सी सेवा के लिये राजा ने मुझे कितना बड़ा व्यक्ति बना दिया है।

सर्वश्रेष्ठ दान शिक्षा प्रदान



एक रामकृष्ण मिशन में सर्वप्रथम सत्र निवारण का कार्य सुविधाचार त्रिने में प्रारम्भ किया तो उस समय स्वामी विवेकानन्द का एक वचन था। स्वामी जो वे बहुत रामकृष्ण मिशन को ही मिठाया। मिशन का सम्बन्ध है तो उद्देश्य या शुभाव निरा का बहुत विषय प्रसार है :—

यह साव्य जनता के संघट निवारण हेतु थी काव्य या शरीर का निवारण कर रहे हो इससे संघट निवारण की सम्बन्ध का ही सम्बन्ध नहीं है। यह निवारण एक ही प्रकार दान का ही है। यह दान है कि धन में धन साव्य ही नीति है। यह। जोवने काव्य की कभी भी कभी न होगी क्योंकि भाग्य योग देव में जोवने काव्य की कोई कभी नहीं है।”

गणतन्त्र देने के साथ-साथ यह धन साव्य निवारण देने का भी कार्य करें तो बहुत स्वामी व लोग हाथ और हमारे वचन वचन निवारण दान करके फिर के जाने जाने धन में हाथ की कक्षा का धन वचन वचन वचन।

“आप लोगो को ऐसे भी अनेक व्यक्ति मिलेंगे जो अपनी आजीविका चलाने में समर्थ होने से पूर्व ही शादी कर लेते हैं और वे जीवन-पर्यन्त भुखमरी व गरीबी के शिकार बने रहते हैं।”

“आप लोग सहायता या दान के रूप में जो कुछ भी वितरण कर रहे हैं, उससे तो बहुत-से व्यक्ति गरीब बनकर अनुचित लाभ उठा सकते हैं। आशा है आप मेरे सकेत को भली प्रकार समझ गये होंगे और अन्य सहायता व दान के साथ-साथ विद्या-दान भी करेंगे, जो कि अपना मुख्य कार्य है। अन्न-दान से तो एक-दो दिन का कष्ट एव सकट ही दूर कर सकोगे, परन्तु विद्या-दान से तो उनके जीवन-पर्यन्त का सकट समाप्त किया जा सकता है।”



ध्यान, भजन और ज्ञान



एक बार स्वामी शिरोमानन्द व मरानन्द जी घरने कुछ सिध्यों सहित रेम-यात्रा कर रहे थे। इसमें पूर्व स्वामी जी अवस्था में थी “अमरुत आरुत अमरुत” के प्रचार हेतु भगवत् सो वर्ण तक प्रयाण कर चुके थे। उगीने घरने गुरुदेव की आज्ञा का पालन पूर्ण सम्यक्ता में किया था।

तब मरानन्द स्वामी जी को इन सम्बन्ध में बहुत दुःख हुआ कि घरने सिध्द और गुरुमाई सेवेत रूप में शिवाय एव अनुसरी नही है। इसी कारणवत् के बड़ी-बड़ी रूप भी हो जाने थे।

शिरी सिध्द के अनुविन कार्य में स्वामी जी बोधित हो दये और दुःख घटागात्र का लप्य करके रहने लगे—“तुम लोग घर ध्यानन धारि कुछ भी करने में समर्थ हो। इसलिये ध्यानन भजन का कार्य छोड़ कर बुद्धीमयी (मजदूरी) करने लगे। इनके दर्शनन घर सब कुछ भी नहीं कर सकने लगे।”

गुप्त महाराज स्वामी जी के सम्मुख हाथ जोड़ कर खड़े हो गये और कहने लगे कि—“स्वामी जी, पठन-पाठन के लिये तो आपने ही मना किया था।”

इसके उत्तर में स्वामी जी बोले—“मैंने तुमको पठन-पाठन के लिए ही मना किया था, तो इसके बदले में भजन और ध्यान के लिये तो कहा था, इसमें आपने कितनी उन्नति की है ?”



रामकृष्ण परम हंस और चापलूसी

००
४
१

रामकृष्ण परम

हम का धनका प्रगति व कामधुमा का काँ हस्ता मही था। श्री
काँ श्री धर्म उक्त धर्म का गुण-मान बनाया और उक्त धर्म
का धर्मका था उक्तका के काँ श्री गिरा व धर्मका म न बनाये
व। धर्म धर्म का व धर्म प्रसार जाने जाने और धर्म प्रसार
परिणत कर लेने व उक्त का धर्म धर्मका व धर्मका के
गर्भका व धर्मका के व।

एक बार काँ वधवा व धर्म उक्त धर्मका व धर्मका
धर्म गधाम व धर्मका के व धर्मका धर्मका धर्मका
व धर्मका धर्मका धर्मका धर्मका धर्मका धर्मका
व धर्मका धर्मका धर्मका धर्मका धर्मका धर्मका

धर्मका धर्मका धर्मका धर्मका धर्मका धर्मका
धर्मका धर्मका धर्मका धर्मका धर्मका धर्मका
धर्मका धर्मका धर्मका धर्मका धर्मका धर्मका

रामकृष्ण परम हंस को अपनी प्रशंसा का कितना आघात हुआ ? यह सब कुछ इस लघु दृष्टान्त से स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है ।

एक दिन वे घूम रहे थे, तो उनके मन में यह विचार आया कि—“बहुत से व्यक्ति मुझे मान-सम्मान देकर अभिमानी बना देते हैं, उनमें से एक केशवचन्द्र सेन भी निकले । क्या ही अच्छा होता यदि मैं उनको अपने पास बैठने का अवसर ही न देता ।”

उन्होंने यह भी सोचा कि—“जो व्यक्ति त्याग व समय के सत्-मार्ग पर चलने को तत्पर है, उसे इस प्रकार के सासारिक मान-सम्मानों की क्या आवश्यकता है । ऐसे व्यक्तियों को अपनी प्रसिद्धि की कामना नहीं करनी चाहिये ।”



संत कनकदास और आत्म-ज्ञान



संत कनकदास अपने प्रारम्भिक जीवन में निकार भेजने में बहुत ही प्रसिद्ध थे और इसी कारण बाण-विद्या में भी पूर्ण निपुणता प्राप्त कर चुके थे। यहाँ तक कि उनके समय में कोई भी बाण बनाने में उनकी बगलगी का साहस नहीं करता था।

बाण बनाने में निपुण होने के कारण ही उनको एक राजा के यहाँ सेवान्वित का पद भी प्राप्त हुआ था। इस पद पर रहकर उन्होंने सब एक प्रतिष्ठा का धरतू धर्मन किया।

तब हिम युद्ध करने समय कनकदास के मन में यह विचार आया कि—“जब मेरे जीवन का यही उत्पत्य है कि राजा की सम-कीर्ति के लिए दूसरी का मर जाना किन्तु और पराई स्वार्थ-साधना का साधन बनूँ ?” इस धम्म-प्रेरणा में प्रभाव में उनको युद्ध में हमनी भूला जा चुका था कि उनके धम्मार्थ में यह उन्मादना हुई कि—“इस धम्मार्थ का दोहरा और नान्वारिक भावा-धर्म के मार्ग में हरदम एक जिता-भाव हाथ में ले ले और

दास बन जा । मच्चे वीरो का लक्षण यही है कि जीवन में महान् परिवर्तन करते-करते एक दिन ऐसी स्थिति आ जाती है कि फिर उनको मन से अधिक सघर्ष नहीं करना पड़ता है ।”

इस पवित्र विचार के प्रभाव से उन्होंने सेनापति का प्रतिष्ठित पद भी छोड़ दिया और सामारिक माया-मोह के फंदे से भी निकल कर विहार के लिये निकल पड़े । विजयनगर में उनको गुरु भी मिल गये और उन्होंने माध्व सम्प्रदाय की दीक्षा ले ली । इसका फल यह है कि आज सत कनकदास का नाम दूर-दूर तक प्रसिद्ध है ।



जब कनकदास से पूछने का नम्बर आया, तो सब ने देखा कि केला उनके हाथ में ही ज्यो का त्यों था। उसने उत्तर दिया — “मैंने जहाँ भी एकान्त स्थान ढूँढा वहाँ व्यक्ति तो कोई नहीं था, अर्थात् मुझे व्यक्ति-रहित स्थान तो मिल गया, परन्तु ईश्वर-रहित स्थान नहीं मिला। इसलिए मुझे कहीं भी एकान्त स्थान नहीं मिला कि जहाँ पर ईश्वर मुझे न देख सके। इसी कारण से आपकी आज्ञा का पालन करने हेतु यह केला मेरे हाथ में सुरक्षित है।”



ऋतुचर्य-व्रत और स्मरण-शक्ति



अधिकतर व्यक्तियों की स्मरण-शक्ति प्रायः की वृद्धि के साथ ही साथ कम होती जाती जाती है परन्तु स्वामी विवेकानन्द की स्मरण-शक्ति बड़ा अचम्भा तक एक-सी जाती रही।

एक समय का प्रसंग है कि एक पुस्तकालय के लिए ब्रिटैनिका विश्व-कोष (Encyclopedia of Britannica) खरीदने का प्रस्ताव आया। स्वामी जी का स्वास्व उस समय ठीक नहीं था और उनका उपचार चल रहा था। इस प्रकार उपचार के समय कठिन परिश्रम के कारण वे बहुत ही दुर्बल हो गये थे।

पुस्तक खरीदने के कुछ दिन पश्चात् एक सद्गुरुस्व स्वामी जी के पास आया तो उसने वहाँ पर बहुत-सी सुन्दर सुन्दर पुस्तकों का डेर देना और कहा— 'स्वामी जी जीवन में इतनी पुस्तकों का पढ़ना बहुत ही कठिन कार्य है ?'

उसने स्वामी जी से प्रश्न तो पूछा लिया परन्तु उसे इस बात का स्वप्न मे भी विचार नहीं था कि स्वामी जी ने इन सब ग्रन्थों का अध्ययन कर लिया है ।

उस व्यक्ति की बात सुनकर स्वामी जी ने वहाँ रखे किसी भी ग्रन्थ मे से प्रश्न पूछने को कहा । गृहस्थ ने प्रश्न पूछे तो स्वामी विवेकानन्द ने प्रत्येक का उत्तर दिया । यहाँ तक कि कुछ प्रश्नों के उत्तर मे तो उस ग्रन्थ की भाषा तक ही प्रमाण स्वरूप कह सुनाई । स्वामी जी की इतनी विशाल स्मरण-शक्ति को देखकर वह व्यक्ति आश्चर्य मे पड़ गया ।

स्वामी जी उस व्यक्ति को आश्चर्य-चकित अवस्था मे देखकर बोले—“देख लिया, आपने कि केवल एक ब्रह्मचर्य-व्रत पालन करने से ही सर्व विद्याएं स्मरण हो जाती हैं । ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन न होने के कारण ही हमारे देश का पतन हुआ है ।”



हाजी महमूद की सहृदयता



हाजी महमूद धरबी घोर
प्याग्गा घादि भागाघों के बहन बने बिहुल के घोर हगरे साथ
ही एक महान् मरानागी भी थे ।

हाजी महमूद का उनका भागा-विगा से बहुत बड़ी सम्पत्ति
मिली थी परन्तु उस सम्पत्ति का वह सब प्रकार से समर्थ होते हुए
भी उन्माद नहीं हो सका। अतः गुण ज्ञानि ने स्वीकृत नहीं
किया । बल्कि यह कि उन्होंने सम्पूर्ण जीवन अधिवास्तिन रूप में
ही व्यतीत किया ।

उन्होंने आत्मार्थीन तथा पराधनार के अपने सम्पूर्ण जीवन
का समर्थन किया । अतः यह कि उनका मन में कभी विचार तक नहीं
कभी भाग घोर दान दुर्गी व्यक्तियों के लिए उन्होंने अपना
सारा धन दिया ।

यदि वह के केवल बहुत बड़े धनी के भौतरी के भाग्य
का ही घोर उनकी बात बसा मुनकर उनके बच को निवारण
करने का पूर्ण प्रयत्न करने थे ।

एक दिन ये गुप्त जेब में एक दोन व्यक्तित्व की नौपटो म
गये और वही उन्होंने देना कि एक गरीब माता अपनी गतान
की भव निराशा करने में आसव हाते के कागज अपने भूते
बच्चों का शिक्षा दे रही है और वानक भूत के वाग्य रो
रह है।

हाजी महमूद की यह सब कुछ देखकर बहुत ही दुःख हुआ
और उन्ही दिन में उन बच्चा के पालन-पोषण का भार अपने
ऊपर ले लिया।



मालिक और नौकर



हाजी महसूब अपने नौकरों के प्रति बहुत ही प्रेम रखता था और साथ उनके साथ समानता का व्यवहार करता था।

एक दिन महसूब को यह मासूम हुआ कि उसके एक नौकर की बहिन बीमार है और जब नौकर ने भी इस बात की सत्यता प्रकट कर दी तो महसूब ने महर्ष उस नौकर को घर जाने की स्वीकृति प्रदान कर दी। इतना ही नहीं महसूब ने अपने पास से एक रक्का की पुर्किया भी दे दी और कहा कि वह रक्का तुम्हारी बहिन के लिये है।

हाजी की इस सहानुभूति को देखकर नौकर बहुत ही प्रसन्न एवं प्रभावित हुआ और साथ में उसके घर के सब व्यक्ति भी बहुत ही मानन्द-विभोर हो गये। सभी के सामने वह रक्का की पुर्किया भोली गई, तो उसमें से रक्का के साथ कुछ रुपये भी निकले जो हाजी ने नौकर की सहायता के संकट समय के लिये रखा दिये थे।

कालिदास और रूप :



एक बार किसी राजा ने कालिदास से कहा—“तुम इतने विद्वान् और महान् पंडित हो, यदि इतना ही अधिक तुम्हारा रूप भी होता, तो कितना अच्छा होता ?”

राजा की यह बात कालिदास को खटक गई और उसने सोचा कि राजा को अपने सौन्दर्य का अभिमान है। इसी को ध्यान में रखते हुए उसने राजा के गर्व को निवारण करने के लिये एक युक्ति सोची।

कुछ ही समय के पश्चात् जब कालिदास ने सोचा कि राजा अब उस बात को भूल गया होगा, तो कालिदास राजा के पास गए और बोले—“महाराज, आज बहुत ही भयकर गर्मी है, इसलिये प्यास लगी हुई है—कृपा करके शीतल जल की व्यवस्था कीजिए।”

राजा ने अपने सेवक से मिट्टी के बर्तन का शीतल जल मंगवाया और उसके साथ ही एक स्वर्ण गिलास भी लाया

गया । कालिदास ने ठंडा पानी पीकर संतोष व्यक्त किया और राजा ने भी पानी ठंडा होने से प्रशंसा की ।

कालिदास ने उस ठंडे पानी को स्वर्ण के गिलास में भरकर रख दिया और कुछ देर के पश्चात् फिर उस स्वर्ण गिलास का पानी पीन के लिये मँगा । कालिदास ने बुझाए पानी पीया और राजा की ओर देखकर हँसन लगा ।

जब राजा ने इसका कारण पूछा तो कालिदास बोले—
“देखिये महाराज कितना ठंडा जल इन स्वर्ण-पात्र में भर
या किन्तु इसके बाह्य सौन्दर्य के प्रभाव से पत्थर का ठंडा
जल उष्ण परम हो गया है और उस रूप रहित मिट्टी के पात्र
में जल कितना ठंडा था ।”

राजा कालिदास की बात को समझ गया और समन्वित
हो गया ।



ईर्ष्यालु का कष्ट :



एक बार किसी व्यक्ति ने एगिस से पूछा—“अमुक व्यक्ति आपकी सम्पत्ति को देखकर बहुत ही ईर्ष्या करता है।” इसके उत्तर में उन्होंने कहा—“ऐसा करने से उसका सताप दो गुना हो जाता है।”

एगिस ने आगे कहा—“एक तो उसे मेरे धन से बहुत कष्ट होता होगा, और दूसरे वह स्वयं निर्वन है, इसका भी उसे महान् दुःख होता होगा।

“जो व्यक्ति निर्धनता के कारण से या अन्य कारण से दूसरे व्यक्ति के ऐश्वर्य को देखकर ईर्ष्या करता है, वह स्वयं अपनी आत्मा को कष्ट देता है। ऐसे व्यक्ति को जीवन में कभी भी सुख-शान्ति नहीं मिल पाती है। कभी-कभी तो यदि ईर्ष्यालु के पास भी धन हो जाय, तब भी वह ईर्ष्या की भावना को नहीं त्यागता और जीवन में सुख को त्याग कर दुःख को जान-बूझकर निमग्न होता है।”

पुत्री को पिता की सीख



हमारे देश में जब पुत्री को समुरान सेवा जाता है, तो माता-पिता उसे कुछ सिखा देते हैं। इसी प्रकार रमाबाई को भी उसके पिता ने सिखा रीति जो कि निम्न प्रकार है :—

“देखो बेटा जब तुम समुरान जा रही हो। मैंने तुमको बहुत प्यार से पाला है। इसलिये मन तो नहीं चाहता कि तुम को अपने से अलग कर दूँ परन्तु संसार के नियम बन्धन मोक्षकार एवं तुम्हारे सांसारिक सुख के लिये ही मुझे यह सब करना पड़ा और साथ तुम अपने उस परिवार को छोड़ कर जिसमें कि तुमने जन्म लिया और इतनी बड़ी अवस्था तक जीवन व्यतीत किया छोड़कर एक नये परिवार में जा रही हो—और साथ ही यह भी है कि साथ के साथ तुम्हारे ऊपर हमारा इतना अधिकार भी न रहेगा जितना कि समुरान बामो का।

“जिस परिवार में तुम जा रही हो, वह बहुत बड़ा है और इसके अतिरिक्त बहुत में आश्रित व्यक्ति भी उस घर में रहते हैं, इसलिये तुम बहुत ही नम्र बन कर रहना और सब के साथ प्रेम का व्यवहार करना। तुमको चाहे जितना कष्ट हो, उसको सहन करने की शक्ति बढ़ाने का प्रयत्न करना और कभी भी किसी की झूठी बात झगड़-उधर मत कहना। कभी-कभी चुगली कुटुम्ब को तो क्या, बड़े-बड़े साम्राज्य को भी नष्ट कर डालती है।”

“यदि तुमने मेरी इस सीख पर ध्यान दिया तो तुम अपने घर को स्वर्ग बना सकोगी और उस परिवार के साथ तुम्हारा जीवन सुख-शान्ति के साथ व्यतीत होगा। इस प्रकार तुम्हारा भी हित है, परिवार का भी हित है और साथ में मैं भी अपने को धन्य समझूँगा कि मेरी सुपुत्री एक सुगृहिणी बनकर अपना सामाजिक जीवन व्यतीत कर रही है। और मेरे मन को वही शान्ति प्राप्त होगी, जो एक पिता को सुयोग्य एवं आज्ञाकारी सतान को देखकर होती है।”



प्रसन्नराय का स्वार्तश्य प्रेम



प्रसन्नराय को स्वार्तश्य से बहुत ही प्रेम का धीर जीवन व्यवस्था से ही उन्होंने संकल्प किया था कि किसी का आश्रित बनकर नहीं रहूँगा। आर्थिक स्थिति ठीक न होने पर उन्होंने जीवन के प्रारम्भ में अनेक कष्टों का सामना किया परन्तु अपने संकल्प से विचलित नहीं हुए।

एक बार वे अपने पुत्र प्रभात कुमुद को विनाशपूर्ण चेन्नने मने तो उसी समय एक निकट सम्बन्धी ने उनसे कहा—“मदके को ऐसी शिक्षा दिलाने का प्रयत्न करना जिससे कि बापिस स्वयंसे में धाकर एक अच्छी सरकारी नौकरी प्राप्त कर सके।”

बाबू प्रसन्नराय ने प्रसन्नता-पूर्वक कहा—“मैंने स्वयं बहुत से संघट्ट सहन किये हैं परन्तु नौकरी करने का स्वप्न में भी विचार नहीं किया तो फिर एक पुत्र को किस प्रकार इतना धन व्यय करने के परवाना मुनासब बसा हूँ? यह कैसे सम्भव हो सकता है।

“प्रजापति तुमुन दीप्यते स्वयं स्वयं सारमयी—मेरी इच्छा
 है धीरे धीरे यदि सब की जिज्ञासा से सा साधन के साधन से
 जगत् की भाँति तुम्हें स्वयं धन की समझ—मेरी मर्यादा
 का अनुभव हो सकेगा।”



नैपोलियन के इस कथन से मित्र को बहुत आश्चर्य हुआ और उसने सोचा कि जिस व्यक्ति के हृदय में हजारों प्राणियों का सहार करने पर भी दया का आविर्भाव नहीं होता था, उसी व्यक्ति को आज एक पक्षी के पकड़ने मात्र से कितना दुःख हो रहा है, और आज वह पक्षी को छोड़ने का आग्रह कर रहा है। आज इसी व्यक्ति के हृदय में कितना महान् परिवर्तन हो गया है कि एक पक्षी का सामान्य दुःख भी यह सहन नहीं कर सका।

इस घटना से स्पष्ट प्रतीत होता है कि—“दया मनुष्य के स्वभाव में एक रहा हुआ सामान्य गुण है।”



वस्तु का उचित उपयोग



एक राधा के राज्य-कोष में हीरे मोती जवाहिरात आदि के बहुसूक्ष्म जेवराल भरे हुए थे। जब यह सूचना बहुत से प्रजा-जनों को मिली तो उनमें से एक ने साहस पूर्वक राधा से पूछा—“महाराज आपके भंडार में जो इतने बहुसूक्ष्म जेवराल भरे पड़े हैं, उनसे आपको कितनी प्राय होती है ?”

महाराज बोले—“इन जेवरालों से कोई प्राय नहीं होती है बल्कि इनकी सुरक्षा और देख रेख के लिये मुझे तो बहुत सा पैसा खर्च करना पड़ता है। पहरेंदार और मुनीम को मासिक वेतन देना पड़ता है।”

यह श्रुति बोला—“महाराज इतने बहुसूक्ष्म हीरे-जवाहिरालों से भी कोई प्राय नहीं होती है यह बहुत ही आश्चर्य की बात है। मेरे घर के निकट ही एक विधवा रहती है उसने तीन रुपये में जो पारों वाली एक चक्की खरीदी है और उसमें जो भी प्राय होती है, उसके परिवार का खर्च धन्यी प्रकार चल

जाता है। जब एक विधवा ने तीन रुपये के पत्थरो से अपने परिवार के व्यय का प्रबन्ध कर लिया तो क्या आपके इन कीमती जेवरों से इतनी भी आय नहीं होती है ?”

उस व्यक्ति ने विनय पूर्वक राजा से दुवारा निवेदन किया —
 “महाराज, इनसे आय होना सम्भव है, और वह इस प्रकार हो सकती है कि इन जवाहिरातों को पेट्टी से निकाल कर व्यापार आदि में लगा कर निर्धनों की सहायता की जाए या कोई उद्योग खोल कर निर्धन व्यवित्तियों को रोजगार दिया जाए। इस योजना से आय भी होगी और जनता का पालन भी होगा।”



या तो इनको छिपा कर रखूँ या किसी दिन माता को ही स्पष्ट मना कर दूँ कि इस प्रकार गहने पहनना मुझे विल्कुल पसन्द नहीं है।”

एक ओर मेरे ही जैसे विद्यार्थी नौकरी करके अपना पेट भरें और उनको इस प्रकार की वस्तुओं के दर्शन भी न हो, और दूसरी ओर मैं उनके सामने गहने पहन कर अपनी अमीरी का प्रदर्शन करूँ। इस प्रकार का कार्य मेरे द्वारा कदापि सम्भव नहीं है।”

उसी दिन से रानाडे ने सब गहने उतार कर डाल दिये और भविष्य में किसी भी अवसर पर गहने न पहनने का दृढ सकल्प किया। इसी प्रकार के उच्च विचारों के प्रभाव से अपने जीवन में देश-हित के लिये अनेक कार्य किये और दूसरों को भी अपना अनुसरण करने के लिये प्रेरित किया।

समाज-सुधार के सम्बन्ध में रानाडे की धारणा आज के भाषणवादी नेताओं जैसी नहीं थी, जो ‘भाषण’ को ही सामाजिक समस्याओं का समाधान मानते हैं और व्यावहारिकता से उदासीन दिखाई देते हैं, बल्कि रानाडे तो ‘व्यवहार’ वाद के ही पक्के समर्थक थे और ‘आचार’ के बिना ‘विचार’ को कोरी विज्ञापन बाजी मानते थे। सुधारवाद के सम्बन्ध में समाज-सुधारकों के मांग-दर्शन के लिये स्वर्गीय रानाडे का यह कथन कितना हृदयग्राही है, देखिए—

“समाज सुधारों को कोरी पट्टिया पर लिख कर ही नहीं छोड़ देना चाहिये।”



हीरानंद भट्टाचार्य अगवें कर्तव्य-पालन में कभी भी आलस्य नहीं करते थे। जब उनको सर्टिफिकेट देने का कार्य सौंपा गया, तो सर्टिफिकेट देने से पूर्व उनको प्रत्येक के घर जाकर जाँच करनी पड़ी कि किम व्यक्ति की क्या स्थिति है, और जो व्यक्ति सर्टिफिकेट माँग रहा है, वह वास्तव में इसका अधिकारी भी है या नहीं।



सुदा की सही वन्दगी



मुसलमान चारों के पवित्र तीर्थ-स्थान मक्का की एक मस्जिद में एक भक्त पानी का घड़ा लेकर सदा रहता था और नमाज पढ़ने से पहले बसु करने के लिए जो सोम पानी माँगने के उनको उस बड़े से पानी देकर हाथ-पैर धुना देता था। इसके पश्चात् वह व्यक्ति वही पर सबके बूते रहे रहते थे वही पर आकर बैठ जाता था। मस्जिद में आन्दर आकर उसने कभी भी नमाज नहीं पढ़ी थी।

मुसलमानों को यह सब कुछ देखकर बहुत आश्चर्य हुआ और उन्होंने सोचा कि यह कैसा फकीर है जो नमाज भी नहीं पढ़ता ? वह तो मुष्ट-जैय में कोई धर्म व्यक्ति वही जाता है। नमाज न पढ़ने और बाहर जाड़े रहने के कारण से स्पष्ट प्रतीत होता है कि यह कोई मुष्टधर है।

ऐसा विचार करने के पश्चात् सबने उसको बदमाश-बमकाया और बर्न भ्रष्ट बतलाते हुए उसे वहाँ से निकल जाने की आज्ञा

दी। इसके पश्चात् उससे यहाँ तक भी कह दिया गया कि—
“खबरदार, यदि फिर इस मस्जिद में आया तो तेरी खैर नहीं।”

अन्त में डराते-धमकाते उसको मुहम्मद पैगम्बर के पास ले गये। सभी मुसलमानों की बात प्रेम पूर्वक सुन कर मुहम्मद साहब ने उस व्यक्ति से पूछा—“भाई, तू नमाज क्यों नहीं पढ़ता है?”

वह व्यक्ति बोला—“पैगम्बर साहब, मैं दीन-हीन हूँ। जो खुदा की बन्दगी करते हैं, उनके हाथ-पैर धुलाकर और उनके जूतों में बैठकर मैं अपनी जिन्दगी को कामयाब समझता हूँ। मेरे जैसे जाहिल और गरीब इन्सान के मुँह से अल्लाह की बन्दगी क्या अच्छी लगती है?”

ईश्वर के प्रति उस दीन आदमी की इतनी गहरी श्रद्धा व उसकी नम्र वाणी को सुनकर हजरत मुहम्मद गद्गद् हो गये और प्रेम-पूर्वक उसे गले लगा लिया।

इसके पश्चात् मुहम्मद साहब ने सबसे कहा—“यह इन्सान हकीकत में खुदा का सच्चा बन्दा है। इसकी इतनी नम्रता ही दरअसल में एक बहुत बड़ी बन्दगी है। तुम लोगों में ऐसे कितने इन्सान हैं, जिन्होंने दूसरों की विदमत करने का नेक इरादा बिना गृहेज-धमड से किया है? मुबारकबाद है, ऐसे इन्सान को जो खुदा पर इतना यकीन रखता है।” और ऐसा कहते-कहते हजरत मुहम्मद साहब की आँखों में आँसू आ गये।

देखिये, शायर का भी इस सम्बन्ध में कितना अच्छा कथन है—

“गुजरने को गुजर जाती हैं,
उमरें शाद मानो में।
ये मोके कम मिला करते हैं,
लेकिन जिन्दगानी में—॥

माता के प्रमाथु



एक कुँची घोर बहरी माता अपने मन्त्रालय
 सिंगु के पास बैठी हुई बहरे रिबार में निमग्न थी। वह जानती
 थी कि ऐसी बार्ड खलि है या कि अन्य व्यक्तियों के पास तो
 है वरन् विपत्ति में मुझे नहीं दी है। परन्तु वह यह नहीं समझ
 बार्ड की कि वह ऐसी कौन-सी खलि है।

जब वह अन्य व्यक्तियों को गीट करवाने तथा अन्य बार्ड
 प्राप्त करने देवती की तो सोचती कि इन व्यक्तियों में सोमने
 घोर मुने की खलि है। इसी कारण ने वे नाम नाम्नाती हैं।

माता मन्त्रालय सिंगु इन व्यक्तियों की खलि है। यह तो
 नहीं है यह बार्ड रिबार उसके मन में दुःख उत्पन्न कर
 रहा था।

जब उनका बच्चा अन्य गीमा पर पहुँच गया तो उसे एक
 दुर्गम कुँची घोर अपने एक बड़ा पन्धर हाथ में निरा। अपने
 बच्चा पन्धर कुँची पर पटक दिया। पन्धर की धाट्ट में बच्चा डर
 घरा घोर उसी रात गन गया।

अब माता को पूर्ण विश्वास हो गया कि मेरा पुत्र मेरे जैसा अभागा नहीं है। उसकी आँखों में प्रेम के आँसू आ गये और नीचे पृथ्वी पर टपक गये। माता को अपने नवजात बच्चे की इस श्रवण-शक्ति से अति प्रसन्नता हुई और वह पृथ्वी पर घुटने टेक कर प्रभु से प्रार्थना करने लगी कि—“मैं स्वयं तो गूँगी और बहरी हूँ परन्तु मेरे बच्चे को तो दयालु भगवान् ने श्रवण-शक्ति प्रदान कर दी है।



माता क प्रमाथ



एक नुकी धीर बहरी माता अपने नवजात बाल के पास बैठी हुई बहरे विचार में निमग्न थी। वह जानती थी कि ऐसी कोई रास्ता है जो कि अन्य व्यक्तियों के पास तो है परन्तु बिपत्ति ने मुझे नहीं दी है। परन्तु वह यह नहीं समझ पाई थी कि वह ऐसी बीमारी से ग्रस्त है।

जब वह अन्य व्यक्तियों का लौट करवाते तथा अन्य बर्तन लाने करने देगती थी तो सोचती कि इन व्यक्तियों में बीमारी धीरे धीरे की रास्ता है, इसी कारण से वे लाने भाग्यशाली हैं।

माता नवजात बाल इन दृष्टियों की रास्ता से रहित तो नहीं है यह गम्भीर विचार उसके मन में कुछ उगम कर रहा था।

जब उसका बाल बरस गीसा पर बैठे लया तो उसे एक दुर्लभ नुकी धीर उगने एक बड़ा बन्धन हाथ में लिया। उगने का बन्धन नुकी पर पटक दिया। बाहर की सड़क में बड़ा डर गया धीरे उसी लाने लाने लया।

अब माता को पूर्ण विश्वास हो गया कि मेरा पुत्र मेरे जैसा अभागा नहीं है। उसकी आँखों में प्रेम के आँसू आ गये और नीचे पृथ्वी पर टपक गये। माता को अपने नवजात बच्चे की इस श्रवण-शक्ति में अति प्रसन्नता हुई और वह पृथ्वी पर घुटने टेक कर प्रभु में प्रार्थना करने लगी कि—“मैं स्वयं तो गूँगी और बहरी हूँ परन्तु मेरे बच्चे को तो दयालु भगवान् ने श्रवण-शक्ति प्रदान कर दी है।



परिधम और विनोद



चीन के प्रसिद्ध धर्माचार्य कन्फुसिअस एक दिन अपने मित्रों व शिष्यों सहित एक गाँव में गये। किसानों का धान गेहूँ से खानेदान में था गया था और इसी कारण से किसान बड़े ही प्रसन्न-चित्त से सामान्योत्सव मना रहे थे और अपने परिधम व उचित वस्त्र धारण कर ईश्वर को धन्यवाद दे रहे थे।

कन्फुसिअस किसानों के इस सामान्योत्सव से बहुत ही प्रसन्न हुए परन्तु उनके मित्रों एवं शिष्यों को यह सब कुछ अच्छा नहीं लगा और वे बोले — लोगों को इस प्रकार निरामी नहीं होना चाहिये। इनको तो यथोचित धीर धान्य रहना चाहिये और ऐसे समय पर मंदिर में जाकर ही प्रभु की धन्यवाद देना चाहिये।”

कन्फुसिअस बोला—”माइयो यह उपयोग भी एक प्रकार के प्रभु का धन्यवाद ही है। धन्यवाद देने का वैधानिक एक ही प्रकार नहीं है। धन्यवाद देने का हमारा यह तरीका सीधा और सरल है।

उन्होंने आगे कहा—“दिन भर गभीर वनकर बैठे रहना भी उचित नहीं है। निर्दोष गाना-बजाना खेल-कूद मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए श्रेयस्कर है और विविध प्रकार के उत्सव इसी उद्देश्य को लेकर मनाये जाते हैं।

“वसन्तोत्सव, दीपावली और होली आदि त्यौहार, जो कि अपने यहाँ मनाये जाते हैं, प्रकृति के साथ हिल-मिलकर व्यक्ति अपनी थकान को कम करके फिर से नये उत्साह के साथ कार्य करने की क्षमता प्राप्त करने के लिए ही मनाता है। परन्तु इतना ध्यान रखना चाहिए कि हास्य विनोद अपनी सीमा से बाहर न जाने पाए।”



रानाडे का भाषा प्रेम



एक बार महादेव गोविन्द रानाडे को सरकारी कार्यवाह कमकता में रहना पड़ा। वहाँ पर रुककर उन्होंने बंगाली सीखना प्रारम्भ किया।

एक दिन नाई की दुकान पर हजामत बनवाने के लिये गये। बंगाली सीखने की उम्रय भी इसलिये पुस्तक हो साथ रखते ही थे। इसलिये उन्होंने नाई की दुकान पर ही पढ़ना प्रारम्भ कर दिया और वहाँ पर उनको बटिश्राई मानसुम पड़ी बड़ी पर नाई से पुछ-पुछ कर पढ़ने लगे।

रानाडे की पत्नी निरुद के ही एक यकान की सिकुची में बैठी यह सब पुछ देन रही थी कि पतिदेव एक नाई से हजामत बनवाने समय भी पढ़ रहे हैं और नाई लच्छों का धर्म समझा रहा है। जब वह नाई हजामत बनाकर बाहर बठ गया तो पत्नी धाई धीर होन कर बहन लगी—“बबामो यास्टर हो घरछा इना है। ओ रत न २४ गुरघी से गिरा पाई थी उसी प्रकार

क्या आप भी अनेक गुरु बना रहे हों ? फिर तो आपको गुरुओं की सूची बना लेनी चाहिये ।”

पत्नी ने आगे कहा—“पुराने समय में शिष्य गुरुओं की सेवा स्वयं करते थे, परन्तु अब तो शिक्षा भी ग्रहण करते हैं और सेवा भी कराते हैं ।”

रानाडे ने अपनी पत्नी को सब कुछ समझाया और उसे भी बंगाली सिखलाने में सहायता दी और कहा—“भारतीयों को अपनी प्रादेशिक भाषा या मातृ-भाषा के अतिरिक्त जहाँ तक हो सके, देश की अन्य भाषाओं का भी ज्ञान प्राप्त करना चाहिये ।”

विद्या-ग्रहण के सम्बन्ध में यह लोकोक्ति कितनी सार्थक है—

“विद्या कबहूँ न छाँड़िए,
यद्यपि नीच पै होय ।
परौ अपावन ठौर में,
सोना तजै न कोय ॥”



नोकरों की स्वामि भक्ति



बारनाह बुनियात सीमर के राज्य-काम में जैनराम नामक एक धनवान् व्यक्ति था। उम समय मुसामपीरी का बोल-बाला था। बाजार में मुसाम व्यक्ति पशुओं के समान बिकते थे और यहाँ तक कि कभी-कभी तो बिड़ी और लरीद के समय उनके साथ पशुओं से भी घुणित व्यवहार किया जाता था। मुसाम-पशु को सुधारने की डींग मारते बाने दूगोव के मालिक घर में कमरू का टीका था।

जैनराम में अनेक धनपुजों के होने हुए भी वह मुग्न विद्यमान था कि वह अपने नोकरों व मुसामों के साथ बहुत ही पशुता व्यवहार करता था।

एक बार जैनराम को सिंगी घमियोम में बिरफ्तार करने की रागाज्ञा हुई। वह पुनित उसको पशुद्वे के लिए उसके घर पर गई तो उनके बख्शार नोकरों ने पता लगते ही उनको दिया निवा।

पुलिस आई और पूछ ताछ करने लगी, परन्तु जब कोई पता न लगा, तो पुलिस ने नौकरो को ही पीटना प्रारम्भ कर दिया। नौकरो को बहुत पीटा गया व अनेक प्रकार के कष्ट दिये गये, परन्तु उन्होंने अपने स्वामी के वहाँ होने की सूचना नहीं दी।

प्लेनकस छिपा हुआ यह सब कुछ देख रहा था। उससे नौकरो का निर्दोष पीटना नहीं देखा गया और वह स्वयं बाहर निकल कर आ गया और पुलिस से कहा—“आप लोग इन निर्दोष नौकरो को छोड़ दो, मैं मृत्यु-दंड तक सहने को तैयार हूँ।”

जब यह बात राजा को ज्ञात हुई, तो राजा का हृदय दया से भर गया और उन्होंने यह सोचकर कि जिस मालिक के प्रति नौकरो का इतना प्रेम है, उसका जीवन नष्ट करना एक प्रकार का अत्याचार है, और इस प्रकार नौकरो के प्रेम के कारण प्लेनकस का मृत्यु-दंड भी माफ कर दिया गया।



काजी सिराजुद्दीन और बादशाह



हिस्सी का बादशाह श्यामुद्दीन बनुविद्या में बड़ा ही निपुण था। एक दिन जब वह बनुविद्या का सम्भास कर रहा था तो एकस्मान् और छूट गया और एक लकड़े के खरीर में जा गया। वह लकड़ा खरीर लकड़े ही तुरन्त मृत्यु को प्राप्त हो गया।

लकड़े की माँ बहुत गरीब थी। उसने काजी सिराजुद्दीन से इस सम्बन्ध में परित्याग की। कर्तव्य-परायण काजी ने बादशाह को इस परित्याग की सूचना दी और कचहरी में उपस्थित होने की आज्ञा दी।

निश्चित समय पर बादशाह एक छोटी ससवार को कपड़े में छिपाकर कचहरी आया। काजी ने घरातठ का सम्पूर्ण सम्मान कायम रखा और अभिमुख रूप में बादशाह को किसी भी प्रकार का सम्मान नहीं दिया। बादशाह को सामारण अभिमुख की भाँति कचहरी में लड़ा किया गया और उसके बिछड़ केमका दिया गया।

बादशाह ने भी स्वयं अपराध स्वीकार कर लिया और उस गरीब विधवा से क्षमा माँगी। यहाँ तक कि बादशाह ने बुढ़िया को प्रसन्न करने के लिये कुछ धन भी दिया। बादशाह को अभियोग से मुक्त कर दिया गया।

इसके पश्चात् काजी अपनी कुर्सी से उठकर नीचे आये और बादशाह को सम्मान पूर्वक सलाम किया।

बादशाह ने कपड़े में गुप्त रखी हुई तलवार को निकाला और कहा—“काजी साहब, तुम्हारी आज्ञा का पालन करने के लिये और कुरान शरीफ के कायदे को इज्जत देने के लिये ही मैं यहाँ इस अदालत में हाजिर हुआ हूँ। मैंने अपनी आँखों से यह अच्छी प्रकार देख लिया है कि तुम अपने न्याय के मार्ग से विचलित नहीं हुए। वास्तव में यदि तुम न्याय-मार्ग से विचलित हो जाते, तो मैं इस तलवार से तुम्हारा सर उड़ा देता। मेरे राज्य में ऐसे ही न्यायाधीशों (काजी) की आवश्यकता है।”

काजी ने अपने हाथ में बेंत लेकर कहा—“मैं भी खुदा को हाजिर-नाजिर करके कहता हूँ कि अगर आप अदालत के अन्दर मेरे हुक्म को स्वीकार न करते, तो आपकी इस बेंत से ही खबर लेता।”

वहाँ उपस्थित जन-समुदाय इस वार्त्तालाप को सुनकर दंग रह गया। जनता की दृष्टि में बादशाह व काजी दोनों ही अपनी परीक्षा में सफल रहे।

प्रिंस एल्बर्ट का मित्र प्रेम



एक शहर प्रिंस एल्बर्ट में समझे एक मछीब मित्र को भोजन के लिये आमंत्रित किया। वह गरीब मित्र वास्तविकता में प्रिंस से बहुत ही प्रेम करता था। प्रिंस भी अपने इस बेजब के समय में उस मित्र को भूल नहीं थे।

प्रिंस का मित्र गाँव का निवासी था। इसलिए वह गाँव की मछियाँ ले समझता था। विमायल में सभी गिरिष्ठ व्यक्ति गाँव लुरे या कछि छबवा बीनों के हाथ गाँव है। परन्तु प्रिंस के मित्र का केवल लुरे के ही गाँव गाँव का व्यवसाय था।

प्रिंस एल्बर्ट ने मित्र को अपनी मेज पर ही गाँव के लिये बेंद्राया। समझे उसी शामील वजुति में भोजन करना प्रारम्भ किया। प्रिंस ने भी मित्र का एक प्रकार गाँव गाँव देन लिया। परन्तु कुछ भी नहीं कहा और स्वयं भी शामील मित्र को तरह ही गाँव खाने लगे।

पास में बैठे अन्य व्यक्तियों को प्रिंस के इस कार्य से बहुत आश्चर्य हुआ और वे हँसने लगे। प्रिंस ने कुछ गभीर मुद्रा में सकेत द्वारा सब को शान्त कर दिया।

मित्र के चले जाने के पश्चात् जब अन्य व्यक्तियों ने इसका कारण पूछा तो प्रिंस ने उत्तर दिया—“यदि मैं अपने मित्र को ठीक प्रकार से खाने की शिक्षा देता, तो वह सकोच करता और उसके मन में हीन-भावना प्रवेश कर जाती। घर आये मित्र को मैं किसी प्रकार की शिक्षा देकर अपमान नहीं करना चाहता था, जिससे कि वह मुझे देखकर सकोच न करने लगे, इसलिए मैं भी उसी की तरह से भोजन करने लगा। इस कार्य से उसे भी कोई कष्ट न हुआ और मेरी भी कोई हानि नहीं हुई।

प्रिंस के इस सच्चे मित्र-प्रेम से वहाँ उपस्थित सभी व्यक्ति बहुत ही प्रसन्न और प्रभावित हुए।



राजा जनक और विदेह



एक बार मंत्री ने राजा जनक से पूछा—“महाराज आप बेहूषापी होठे हुए भी बिदेह क्यों कहलाते हैं ?”

महाराज ने उत्तर दिया—“आपके प्रश्न का उत्तर मैं कुछ समय पश्चात् दूँगा।”

कुछ दिन के पश्चात् राजा ने मंत्री को भोजन के लिये आमंत्रित किया और भोजन के समय से पहले नगर में हिडोरा गिटगिट्या कि धात्र मंत्री को पत्नी पर चढ़ाया जायेगा। हिडोरा पीटने बाने से यह भी कह दिया गया था कि मंत्री के मकान के सामन पार मोर से बिस्लाकर हिडोरा पीटगा जिससे कि मंत्री बच्छी प्रकार मृत हो।

मंत्री ने राजा के हिडोरा की मुना पीर राजा के घर पर दर के बाएण से भाजन करने भी गया। राजा ने यही जितने भी प्रकार के भाज्य-पदार्थ बने थे उनमें से किसी मंत्री भोजन बिचुम नहीं खाता गया था।

भोजन करने के पश्चात् राजा ने मंत्री से पूछा—“मंत्री जी, यह बतलाओ कि आज शाक-भाजी में नमक आदि की तो कमी नहीं थी ? यदि इस प्रश्न उत्तर तुम ठीक और सही दोगे, तो तुमको मृत्यु-दण्ड से मुक्त कर दिया जायेगा ।”

मंत्री ने कहा—“महाराज, मुझे मृत्यु-दण्ड के भय से कुछ भी पता नहीं चला कि भोजन में नमक कम था या अधिक ।”

महाराज बोले—“तुमने दो घंटे भोजन किया और चार घंटे शाम को मृत्यु-दण्ड का समय निकट था । दो घंटे का समय था और तुमको कम से कम इतना तो पूर्ण विश्वास था ही कि दो घंटे के लिये जीवन शेष है । मृत्यु से दो घंटे पूर्व तुम्हारे पास यही शरीर, बुद्धि, जिह्वा, स्मरण-शक्ति आदि उपकरण विद्यमान थे, फिर भी तुमको यह पता नहीं लग सका कि भोजन में नमक कम है या अधिक ?”

राजा ने आगे कहा—“बस, तुम्हारे प्रश्न का उत्तर देने के लिये ही मैंने तुमको मृत्यु-दण्ड का भय दिखलाया था । जिस प्रकार मृत्यु के समय से दो घंटे पूर्व तुम्हारी यह मन स्थिति हो गई कि तुम्हें अपने देह का भी ध्यान न रहा, इसी प्रकार मेरे मन में सदा यह भय रहता है कि न जाने कब मृत्यु की घड़ी आ जाए । और इसी भय के कारण से कि न जाने कब इस ससार से विदा हो जाऊँ, मैं सदा विदेह रहता हूँ ।”

किसान और जन-सेवा



स्थान में एक गरीब किसान रहता था। उसका नाम इमिन्द्रा था। धन-बैभव से रहित होने हुए भी उनका हृदय बहुत ही उदार था। धनवान् भी धन के बल से इनको सचा नहीं कर सकता। जितनी कि वह धन के बावजूद प्र. स. से जन-सेवा किया करता था।

वह गरीब किसान दीन-दुनियाँ की सहायता के लिये पूर्ण प्रयत्न करना था और प्रत्येक क लिये हर सम्भव साधन जुटाने में कोई कमी नहीं रहता था। धन के प्रयत्न से बहुत से माइनों के लिये उनसे कुछ भी सुरवाये थे।

वह मर्यादा ही लोगों में जाता और पत्तियों को दाना गिराया करता था। एकमात्र में वह प्रभु का गुण-गान भी किया करता था।

वह धन के बल पर सम्भव और सहृदयता के कारण बहुत ही प्रसिद्ध हो गया था। धन भी वह स्थान में धन के साथ गुना जाता है ही। उनसे सम्भव है बहुत-सी वस्तु प्रचलित है।

दान, परोपकार, दया, सज्जनता आदि गुणों के कारण से आज भी स्पेन के घर-घर में उसका नाम गर्व के साथ लिया जाता है।



किमान और जन-सेवा



स्वयं से लग करीब बिमान
रहा था। समस्त नाम इकित्थो था। धन-सौख्य से रहित होने
हो मो उगता हृदय बहुत हो उठार था। धनवान् भी धन
धन के इन में इनको नष्ट मदी कर लाना बिजनी कि वह
धन के बाग्यबिहारी प्रेम में जन-सेवा दिया करता था।

बह करीब बिमान दीन-गुणियों की सहायता के निवेदनों
प्रदान करना था और प्रत्येक व निवेद हर सम्भव साधन गुणों
में कोई कमी नहीं लगाता था। इनमें प्रत्येक में बहुत से भाइयों
के निवेदनों में भी गुण-साधन थे।

बह मठा हो केनों में जाता और पछिरी को काम निभाया
करता था। लडाया के बह प्रभु का पुत्र-मान भी दिया
करता था।

बह धन के दानु सहाय और गुरुदत्त के कारण बहुत
ही धनवान् होता था। धन भी वह इन में धन के नाम
गुण जाता है जो उनके लक्ष्य के दृष्ट-नी करता प्रेम करने हैं।

स्वामी जी के अभिप्राय को समझ कर एक दूसरा विद्यार्थी उठा और बोर्ड के पास पहुँच कर अपने स्वामी जी की रेखा के ऊपर एक दूसरी रेखा पहली से भी लम्बी खींच दी।

इस विद्यार्थी के सामान्य-ज्ञान को देखकर स्वामी जी बहुत प्रसन्न हुए और उसको तीव्र-बुद्धि की प्रशंसा करने लगे।

स्वामी जी ने कहा—“यह दोनों रेखाएँ यह संकेत कर रही हैं कि जीवन में महान् बनने के लिये दूसरों को मिटाने का प्रयत्न मत करो, बल्कि दूसरों के महत्व की रक्षा करते हुए स्वयं उससे भी अधिक महत्वशाली बनने का प्रयत्न करो।”



महान् बनने की कला



स्वामी रामतीर्थ एक कालेज में प्रोफेसर थे। एक दिन कक्षा में उन्होंने ब्लैक-बोर्ड पर एक लम्बी रेखा लीनी और विद्यार्थियों को लम्बी रेखा को छोटी करने के लिये कहा।

स्वामी जी की बात को सुनकर एक विद्यार्थी उठ खड़ा और ब्लैक-बोर्ड के पास पहुँच कर उस रेखा को छोटी करने के लिये एक छार से मिटाने लगा।

स्वामी जी ने उस विद्यार्थी को ऐसा करने से मना कर दिया और बोले—“मैंने इस रेखा को मिटाने के लिये नहीं कहा है, केवल छोटी करने के लिये कहा है।”

स्वामी जी की इस बात से सभी छात्र आश्चर्य में पड़ गये। किसी की भी समझ में नहीं आ रहा था कि बिना मिटाए रेखा किस प्रकार छोटी हो पाएगी ?

स्वामी जी के अभिप्राय को समझ कर एक दूसरा विद्यार्थी उठा और बोर्ड के पास पहुँच कर उसने स्वामी जी की रेखा के ऊपर एक दूसरी रेखा पहली से भी लम्बी खींच दी।

इस विद्यार्थी के सामान्य-ज्ञान को देखकर स्वामी जी बहुत प्रसन्न हुए और उसको तीव्र-बुद्धि की प्रशंसा करने लगे।

स्वामी जी ने कहा—“यह दोनों रेखाएँ यह संकेत कर रही हैं कि जीवन में महान् वनने के लिये दूसरों को मिटाने का प्रयत्न मत करो, बल्कि दूसरों के महत्व की रक्षा करते हुए स्वयं उससे भी अधिक महत्वशाली वनने का प्रयत्न करो।”



महारीनी मेरी ओर प्रामोण



महाराणी मेरी रोयियों के प्रति बहुत ही सहानुभूति रखती थी। वह अस्पताल में भी राग-वीकित व्यक्तियों से स्वयं मिलने जाती थीं और उनके साथ प्रेम-पूर्वक बातचीत कर उनको सात्वता देती थीं।

एक बार कोई प्रामोण भयंकर जोमारी से ग्रसित अस्पताल में पड़ा हुआ था। वह पड़ा-सिका भी नहीं था और नागरिक अस्पताल से भी अनभिज्ञ था। जब और रानी की उसमें रुचि में कहाँ-तियाँ तो बहुत मुनी थी परन्तु कभी दर्शन नहीं किये थे।

प्रामोण यह जानकर बहुत प्रसन्न हुआ कि प्रायः महाराणी अस्पताल में मरीजों को देखने के लिये स्वयं जा रही हैं। उसे इस समाचार से बहुत ही प्रसन्नता हुई परन्तु कुछ ही दिनों में वह सोच विचार में पड़ गया और इस बात से बचना मया कि किस प्रकार महाराणी से बातचीत करेगा ?

पशु के प्रति भी प्रेम



एक बालिका अपने गाँव के पादरी के साथ घोड़े पर बैठकर घूमने जाया करती थी। पादरी के मन में अनाथ और बीमार व्यक्तियों के प्रति बहुत ही दया थी। वह पादरी उस बालिका की मनावृत्ति को दयालु बनाने के लिए इसी प्रकार की शिक्षाएँ दिया करता था।

एक दिन पादरी और बालिका घूमने जा रहे थे, तो एक गडरिया अपने कुत्ते के लिये रो रहा था, क्योंकि किसी व्यक्ति ने उसके कुत्ते का एक पैर डढ़ा में तोड़ दिया था।

बालिका ने जब उस गडरिये से रोने का कारण पूछा, तो उसने सब स्पष्ट बतला दिया।

बालिका उच्च स्वर से बोली—“अरे, रोता क्यों है? इस कुत्ते का तो केवल पैर ही टूटा है। प्रयत्न करने से ठीक हो सकता है।”

गडरिया, जो कि बहुत ही निराश हो चुका था, ने कहा—
“बहिन, इस कुत्ते का अब ठीक होना असम्भव है और इसके दर्द

स मुझे बहुत अधिक बेचना हो रही है। क्योंकि मैं इसके कष्ट से उत्पन्न दुःख का सहन करने में सर्वथा असमर्थ हूँ। यही तक कि धाम तो मैंने निश्चय कर लिया है कि स्वयं अपने हाथ से इसे मार बाधूँ जिससे कि इसका कष्ट दूर हो पाय।

बालिका स्वयं उस कुत्ते के पास गई और बहुत ही प्रेम-पूर्वक उसके शरीर पर हाथ फेरा। कुछ ही क्षणों में प्रतीत हुआ कि जैसे कुत्ता का घावा साम तो हो गया। कुत्ता उस बालिका को घोर धाँस करके देखने लगा जैसे कि वह उसके इस व्यवहार से प्रसन्न होकर झुक सम्प्रदाय से रहा है।

बालिका दिन भर कुत्ते के पास ही रही और उसके पैर को गरम पानी से धोकर कुछ सिकाई कर ही घोर कटी बाँध दी। इस प्रकार कुत्ता का सब दर्द नष्ट हो गया और वह मानस-पूर्वक मौखिक वन्द्य करके सा गया।

धाम तक कुत्ता का सब दर्द दूर हो गया और वह स्वयं सदा होकर अपने स्वामी का देखकर पूँछ हिलाने लगा। अपने कुत्ते को इस समस्या में देखकर गड़रिया को बहुत ही प्रसन्नता हुई और वह बालिका के पैर पकड़ कर उपकार के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए खमा माँघने लगा।

इस कथानक से हमें यह शिक्षा मिलती है कि आपत्ति के समय हम को धैर्य और विवेक से काम लेना चाहिए और आपत्ति निवारण के लिए उचित उपाय करने चाहिए। आपत्ति घाने पर जो लोग धैर्य और विवेक-बुद्धि को को बैठते हैं और रोने-पीटने को ही एक मात्र उपाय मान लेते हैं, वे आपत्ति के सबसे पहले सिकार बनते हैं।

भक्ति और रोग :



भारतवर्ष में प्रार्थना द्वारा दुःख को दूर करने की बहुत पुरानी प्रथा है। यहाँ तक कि विदेशों में भी हम प्रथा को पहुँचने का सुश्रवस प्राप्त हो चुका है।

हमें अनेक व्यक्ति मिलेंगे जो कि बीमार व्यक्ति को ईश्वर के भरोसे पर छाड़कर, स्वयं विश्वास-पूर्वक उसकी उपामना करते हैं। डाँन आदि भी करते हैं।

मर थॉमस भी ईश्वर के प्रति ऐसा ही दृढ़ विश्वास रखते थे। एक बार उनकी प्यारी पुत्री बहुत ही भयंकर बीमारी की शिकार हो गई। बहुत से बड़े-बड़े डाक्टरों की चिकित्सा की गई, परन्तु कोई सफलता नहीं मिली। लूया का स्वास्थ्य दिन-प्रतिदिन गिरता ही गया और अन्त में डाक्टरों ने भी उसकी आशा छोड़ कर जवाब दे दिया।

मर थॉमस का पुत्री के प्रति बहुत प्रेम था। बड़े ही लाट-प्यार से उसकी पाला-पोसा था। पुत्री को हम कल्प दशा को देखकर उनका हृदय र आया, उन्होंने पुत्री को ईश्वर के भरोसे पर ही छोड़ दिया और स्वयं प्रभु-स्मरण में लगे गए।

वे मुझे बहुत अधिक बेचना हा रही है क्योंकि मैं इसके बट्ट स
उत्पन्न दुःख का सहन करने में सर्वथा असमर्थ हूँ। यहाँ तक कि
मात्र हाँ मैंने निरपेक्ष कर लिया है कि स्वयं अपने हाथ से इसे
मार डालूँ जिससे कि इसका बट्ट दूर हो जाय।

बालिका स्वयं उन कुत्ते के पास गई थीर बहुत ही प्रेम-युक्त
उसके सरोर पर हाथ फेरा। कुछ ही क्षणों में प्रतीत हुआ कि
जैसे कुत्ता को घावा लागता हो गया। कुत्ता उस बालिका की
घोर आँख करके देखने लगा जैसे कि वह उसके इस व्यवहार से
प्रसन्न होकर बूढ़ बन्धुवार से रहा है।

बालिका दिन भर कुत्ते के पास ही रही थीर उसके पैर
को गरम पानी से धोकर कुछ सिकाई कर बी घोर पट्टी
बाँध दी। इस प्रकार कुत्ता का सब रस मट्ट हो गया और वह
आनन्द-युक्त घोष बन्द करके सो गया।

गाम तक कुत्ता का सब रस दूर हो गया और वह स्वयं
छटा होकर अपने स्वामी को देखकर पूरा हिसाने लगा। अपने
कुत्ता को इस अवस्था में देखकर गड़रिया का बहुत हाँ प्रसन्नता
हुँ और वह बालिका के पैर पकड़ कर उपहार के प्रति कृतज्ञता
प्रकट करने हुए लम्बा भाँगने लगा।

इस कथानक से हमें यह शिक्षा मिलती है कि धारण के
समय हम का पैर और विशेष में काम लना चाहिए और
धारण निवारण के लिए उचित उपाय करने चाहिए। धारण
पाने का जो लोग पैर और विशेष-कुछ को ला बैठते हैं और
गने-नीटने को ही एक मात्र उपाय मान लेते हैं वे धारण के
सबसे पहले गिनार बनते हैं।

के लिए समाधि लगा कर बैठ गया। प्रभु-स्मरण में बाबर ने ईश्वर से यही प्रार्थना की कि—“हे परवर-दिगार, मेरे प्यारे बेटे हुमायूँ की जिन्दगी को बख्श दे, और अपनी खिदमत में मुझे बुला ले।”

शुद्ध हृदय से की गई बाबर की प्रार्थना का ऐसा चमत्कारी प्रभाव हुआ कि हुमायूँ के स्वास्थ्य में उत्तरोत्तर सुधार प्रारम्भ हो गया और दूसरी ओर बाबर के स्वास्थ्य में दिनों दिन गिरावट शुरू हो गई, और इस दैविक उपचार का अन्तिम परिणाम यह निकला कि हुमायूँ पूर्णतः स्वस्थ हो गया और उसका पिता बाबर समार में विदा हो गया।



के नियम प्रति उपासना-गृह में जाते घोर घुटने टेक कर झुठ हृदय से प्रभु की प्रार्थना करते थे। कुछ दिन की सच्ची भक्ति घोर उपासना के पश्चात् उनके मन में ऐसा विचार आया कि समुक्त वस्तु के प्रयोग से कल्या स्वस्थ हो सकती है।

सर यॉमस ने उसी समय डाक्टर को अपना विचार बताना घोर डाक्टर ने उसी धीपधि का प्रयोग किया। परिणाम सुन्दर निकला घोर कल्या के स्वास्थ्य में सुधार होने लगा।

डाक्टर ने कहा—“सर यॉमस इसका धर्म यह नहीं है कि बीमार व्यक्ति की चिकित्सा ही नहीं करनी चाहिए बल्कि मनुष्य यदि प्रारम्भ से ही अपने मन की अच्छे कार्यों में लगन रखे तो उसे सामाजिक कष्ट कम होने हैं घोर अच्छे कर्मों के द्वारा वह मनुष्य में भी अपने जीवन का कल्याण करने में सफल हो जाता है।

ईश्वरोपासना के द्वारा रोग-निवारण सम्बन्ध में एक ऐतिहासिक वक्ता हमारे देश में भुगत शासन-काल में पढ़ी है। जिस समय हुमायूँ किसी कठिन रोग में ग्रसित होकर कल्या अवस्था में रोग-ग्रन्था पर पड़ा था घोर देश-विदेश के सभी चिकित्सकों की चिकित्सा से कोई लाभ नहीं होता दिखाई दे रहा था उस संकट काल में हुमायूँ के पिता बाबर के चिन्ता-ग्रन्थ मन में यह प्रत्यक्ष ऐसा वक्ता हुई कि—“जिस ईश्वर को सर्व भविष्यमान घोर सर्वमङ्गल-निवारक कहा जाता है उसी का प्राप्ति सहाय मेना चाहिए।

प्रत्यक्ष रक्षा के अनुसार बाबर ने पुत्र की आशेयता के लिए ईश्वरोपासना का इस संकल्प किया घोर मान-मदिरा का पूर्ण परित्याग कर पुत्र की रोग-ग्रन्था ने वास्तव में प्रभु-स्मरण

राजा ने मुझे जेल में रखा और मैंने एकान्त स्थान का सुअवसर समझ कर उससे लाभ उठाया। एकान्तवास में रहकर मैं सामारिक जजालों से मुक्त रहा और अपना अधिक समय प्रभु उपासना में लगाया। इससे मुझे सहज ही चिन्तन एवं मनन का सुअवसर प्राप्त हो गया और राजा ने जो यह शुभ अवसर दिया है, उसके लिये मैं उनका बहुत ही आभारी हूँ।”

सर थॉमस के पास कुछ रुपये बचे हुए थे, उनसे एक सुन्दर प्रतिमा खरीद कर अपने ही हाथों से फाँसी पर चढ़ाने वाले जल्लादों को भेंट रूप में बहुत ही प्रेम पूर्वक प्रदान की।

इसके पश्चात् वह वीर, शान्त और प्रभु का उपासक अपूर्व बलिदान का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करके इस ससार से चला गया।



संकट में भी धैर्य



सर चॉमस ने कहीं तक बेस-यावता में घपने जीवन के निम व्यतीत किए परन्तु राजा को इससे भी मनोरंज नहीं हुआ और उसने सर चॉमस की फौजा का हुजम सुना दिया ।

सर चॉमस का एक मित्र इस समाचार को लेकर उनके पास गया कि कम उन्हें फौजी भी चायेगी । इस समाचार से वह किंचित भाव भी बिचलित नहीं हुए । यही तब कि मुल्तु-बड्ढ देने वाल राजा पर भी कोई भ्रान्ति नहीं लगाया ।

सर चॉमस ने सूझा भावने वाले को इस समाचार के सिधे बन्धबाद दिया और राजा को उत्तर में कहा—“घापने मेरे ऊपर जो समय-मसय का उपकार किया है उज्ज पर व सम्मान दिया है तथा घनेक प्रकार से हुपा-दृष्टि रखी है उसके सिधे मैं घापका कुतल हूँ और घापको इस हुपा को इस लाल और परलोक में भी भुन नहीं छोड़ूँगा ।”

राजा ने मुझे जेल में रखा और मैंने एकान्त स्थान का सुअवसर समझ कर उससे लाभ उठाया। एकान्तवास में रहकर मैं सामारिक जजालों से मुक्त रहा और अपना अधिक समय प्रभु उपासना में लगाया। इससे मुझे सहज ही चिन्तन एवं मनन का सुअवसर प्राप्त हो गया और राजा ने जो यह शुभ अवसर दिया है, उसके लिये मैं उनका बहुत ही आभारी हूँ।”

सर थॉमस के पास कुछ रुपये बचे हुए थे, उनसे एक सुन्दर प्रतिमा खरीद कर अपने ही हाथों से फाँसी पर चढ़ाने वाले जल्लादों को भेट रूप में बहुत ही प्रेम पूर्वक प्रदान की।

इसके पश्चात् वह वीर, शान्त और प्रभु का उपासक अपूर्व बलिदान का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करके इस ससार से चला गया।



स्वामी विवेकानन्द की दयालुता



एक बार स्वामी विवेकानन्द को यह दुःखद समाचार मिला कि बहुत व्यक्ति सन्तान रहित हैं और अस्वस्थता के कारण बहुत ही कम उठा रहा है। यहाँ तक कि उसके पास चिकित्सा कराने के सिधे भी ऐसे नहीं हैं। पूज की पीड़ा और संघर्षों को बीमारी से दुःखी व्यक्ति जीवन और मृत्यु के मूजे में मूल रहा है।

इन समाचार के मिलते ही स्वामी जी ने १) व एकत्र किये और सीधे उस बीम व्यक्ति के घर पर पहुँच। वह तीन व्यक्ति स्वामी जी को देखकर बहुत ही प्रसन्न हुआ और उनका आभार प्रदर्शित करने लगा।

स्वामी विवेकानन्द ने कहा— 'तुम किसी प्रकार की चिन्ता न करना। तुम्हारे पास मेरे मित्र जो कि एक डाक्टर हैं, माएँ और बिना फीस सिधे ही देख लेंगे। घोषण भी तुमको उपर ही प्राप्त हो जायेगी।

रोगी का आघात रोग तो स्वामी जी की बातों से ही दूर हो गया था और शेष कुछ ही दिनों के इलाज से दूर हो गया ।



नेहरू जी ने जब यह गदगी देखी तो चुपचाप अपनी पुर्नी ने उठ चढ़े हुए और पृथ्वी पर बैठकर सब झिलके झटठे करने लगे। वहाँ उपस्थित सभी लोग घबरा उठे और सभी अपने-अपने झिलके चुनने में लग गये।

लोग सम्मान लेने गये थे, परन्तु असम्मान हाथ लगा और “कथनी में करनी भली” का सुन्दर आदर्श ग्रहण किया।

वहाँ उपस्थित सभी व्यक्तियों को पंडित नेहरू ने बिना कुछ कहे-सुने यह समझने का सुअवसर दिया कि अब गुलामी की आदतों को त्याग कर सभ्य नागरिक बनो क्योंकि भारत के ४० करोड़ लोगों को विश्व-मंडल में सम्मान सहित बैठने का सुअवसर प्राप्त हुआ है।



मेहरू जी का स्वच्छता-भेम



बहुत से व्यक्ति कुछ बड़ी-छोटी बातों की ओर कोई ध्यान नहीं देते हैं जब कि पंडित मेहरू जैसे विद्वत् विख्यात व्यक्ति ऐसी बातों का बहुत ध्यान रखते हैं। मेहरू जी स्वच्छता प्रिय है और प्रत्येक स्थान पर इसकी ओर विशेष ध्यान देते हैं।

कुछ ही दिन पूर्व मेहरू जी नागपुर गये। रात्रिपाल ने प्रधान मंत्री के सम्मान में एक भोज दिया जिसमें मंत्र के सम्मानित व्यक्तियों ने जी साथ लिया।

भोज के बखतर पर अन्य मन्त्रियों ने प्रतिनिध नागपुर की प्रतिष्ठित नारंगियों की भी व्यवस्था की गई थी।

सभी व्यक्ति भोजन के बखतर पर एकत्र हुए और मेहरू जी भी वहाँ पहुँचे। सभी व्यक्ति नारंगियाँ गले के परचासु हिमके पृष्ठी पर डालने लगे। किसी को इसका लनिक भी ध्यान नहीं था कि पंडित मेहरू इस गर्वगो को सहन नहीं कर सकते।

परन्तु उस सुकुमारी ने दृढ़ता और सयम का पूर्ण परिचय दिया।

पत्नी ने उत्तर मे लिखा—“मैं आपकी सहधर्मिणी हूँ। सत्य मार्ग और जीवन की उच्चता की ओर अग्रसर होने मे जिस मार्ग का आपने अनुसरण किया है, उसी मार्ग पर निरन्तर आगे बढ़ते चलना। मैं भी जितना सहयोग दे सकूँगी—अवश्य दूँगी और कभी भी आपके मार्ग मे विघ्न उत्पन्न नहीं करूँगी।”

पत्नी के इस उत्तर को पाकर अश्विनीकुमार का सकल्प और भी दृढ़ हो गया और उसने पत्नी होते हुए भी सम्पूर्ण जीवन अखंड ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हुए व्यतीत किया। पति-पत्नी दोनों ने अखंड ब्रह्मचर्य रखकर जो आत्म-सयम और चारित्र-बल का आदर्श परिचय दिया, वह आजकल के व्यक्तियों के लिए फल्पना से परे की वस्तु प्रतीत होती है।



आदर्श दाम्पत्य जीवन



गृहस्थाश्रम में रहते हुए भी ब्रह्म-वर्ष पालन करने के दृष्टान्त प्राचीन-काल में बहुत से परमपूज्य आचार्य नहीं के बराबर हैं।

रामकृष्ण परमहंस ने भी ऐसा ही जीवन व्यतीत किया था। इसका नम्बर दोम अक्षर भस्मिनीकुमार दत्त का है।

विवाह के दो वर्ष पश्चात् भस्मिनीकुमार दत्त ने सटोर-मुठि का उपदेश पढ़ा और उनके मन पर इसका बहुत ही प्रभाव पड़ा।

भस्मिनीकुमार को ध्याना आया कि जब तक मेरी पत्नी हो गई है इसलिए वैदिक पवित्रता कुछ प्रकार सुरक्षित रखने में समर्थ हो सकती है। इस प्रकार के विचार आने के पश्चात् उन्होंने मन की धर्मसाया को पत्नी को निज भेजा।

पत्नी पति के विचारों को जान कर बहुत प्रसन्न हुई और अपने को बगल समझने लगी कि रत्न का संयोग रत्न के साथ हो हुआ है। यद्यपि पत्नी की व्यवस्था केवल १२ वर्ष की थी

परन्तु उस सुकुमारी ने दृढ़ता और समय का पूर्ण परिचय दिया ।

पत्नी ने उत्तर मे लिखा—“मैं आपकी सहधर्मिणी हूँ । सत्य मार्ग और जीवन की उच्चता की ओर अग्रसर होने मे जिस मार्ग का आपने अनुमरण किया है, उसी मार्ग पर निरन्तर आगे बढ़ते चलना । मैं भी जितना सहयोग दे सकूँगी—अवश्य दूँगी और कभी भी आपके मार्ग मे विघ्न उत्पन्न नही करूँगी ।”

पत्नी के इस उत्तर को पाकर अश्विनीकुमार का सकल्प और भी दृढ़ हो गया और उसने पत्नी होते हुए भी सम्पूर्ण जीवन अखंड ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हुए व्यतीत किया । पति-पत्नी दोनों ने अखंड ब्रह्मचर्य रखकर जो आत्म-समय और चारित्र्य-बल का आदर्श परिचय दिया, वह आजकल के व्यक्तियों के लिए फलपना से परे की वस्तु प्रतीत होती है ।



हंसन की प्रामाणिकता



गंगू नामक एक ब्राह्मण को ज्योतिष का बहुत सम्मान था। उसके यहाँ हंसन नामक एक पठान रहता था जो कि बहुत ही प्रामाणिक और सच्चा आदमी था। गंगू उस पठान पर बहुत ही विश्वास करता था।

बंदू ने प्रसन्न होकर हंसन को एक बेठ प्रदान किया और साथ ही एक जोड़ी बैल भी दिए।

एक दिन हंसन बेठ में हल चला रहा था तो हुन एक बगल फँस गया और बैलों की पूरी ताकत लगावे पर भी धाये नहीं बढ़ा। हंसन ने जब उस स्थान को जोखा तो वहाँ से एक ठाम पान निकला जिसमें कि बहुत-सा नम भरा हुआ था।

हंसन सब नम को लेकर गंगू के पास गया और सब बट्ठा कह सुनाई। उसने सब नम गंगू के सामने रख दिया।

गंगू ने कहा—“यह नम कैसा नहीं है तुमको प्राप्त हुआ है इसलिये यह तुम्हारा ही है।

हंसन बोला —“ खेत मे परिश्रम के पश्चात् जो उत्पन्न होगा उस पर तो मेरा अधिकार है, किन्तु बिना परिश्रम के धन पर मैं कैसे अधिकार कर लूँ ? आप खेत के मालिक हैं, इसलिये आप ही इसको रखिये ।”

वादशाह को जब यह समाचार मालूम पडा, तो उसने दोनो को बुलाया । वादशाह के आग्रह करने पर भी दोनो मे से कोई धन को लेने के लिए तैयार नही हुआ और अन्त मे वह धन राज्य-कोष मे पहुँच गया ।

वादशाह दोनो की प्रामाणिकता और सत्यता से बहुत ही प्रभावित हुआ और गजू को अपना राज्य-ज्योतिषी और हंसन को प्रधान सेनापति बना दिया । भविष्य मे भी उन्होने अपनी प्रामाणिकता एवं सत्यनिष्ठा का पूर्ण परिचय दिया ।



हजरत मोहम्मद का अन्तिम उपदेश



हजरत मोहम्मद का जब अन्तिम समय निकट था गया तो उन्होंने अपने उत्तराधिकारी हजरत अली को निकट बुला कर निम्नलिखित शिक्षाप्रद उपदेश दिये :—

‘तुम एक बहादुर, विचारशील और संजीव व्यक्ति हो इन्होंने कमी भी अपनी नीरता और पराक्रम का प्रतिमान मत करना। सदा ही नम्र-भाव से रहना और अपने जीवन को उन्नति के मार्ग पर बढ़ाना। सदा-सर्वदा निष्कपण और धर्म-स्वाध्यायी की ही संघट में रहने का ध्यान रखना !

‘सम्पादक और सेवा-समागम द्वारा कुदा के पास पहुँचने का बिश्वास मन में रखना और मन को सदा ही बल में रखने का प्रयत्न करना। जब भी मम धनुषित मार्ग पर चलने का प्रयत्न करे, तो तबसे समार्थ पर समामे का ध्यान रखना ।

‘बुद्ध-जनों और माता-पिता की आज्ञा को सदा ही सुनना और अपने हृदय से पालन करना। प्रत्येक प्राणी के साथ प्रेम

का व्यवहार करना और कोई भी जीव तुम्हारे द्वारा किसी प्रकार का कष्ट न भोगने पाए—इस बात का सदैव ध्यान रखना ।”

“यदि तुमने मेरी इन बातों पर ध्यान दिया, तो तुम्हारा जीवन यहाँ भी सुखमय रहेगा और मृत्यु के समय भी तुम्हें शुभ कर्म करने की खुशी रहेगी और आगे भी तुम्हारे मन को सुख और शान्ति प्राप्त होगी ।”



सुलतान बनने की योग्यता



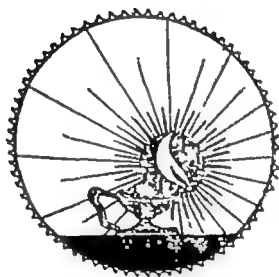
जब बाबसाह हसन पही पर बैठा तो किसी व्यक्ति ने उससे पूछा—“बिना इम्र और खलिक-खामदानी के तुम बाबसाह कैसे बने ?

हसन ने उत्तर दिया—“मिर्जों का कुछ प्रेम सन्तुष्टों के प्रति उदात्ता प्रत्येक व्यक्ति के प्रति सदुपायना आदि इतनी खामदानी मेरे पास इस समय है और इसे भविष्य में सुरक्षित रखने का इह संकल्प भी रहता है । मेरे विचार से सुलतान बनने के लिये यह खामदानी पर्याप्त है ।”

हसन के उत्तर से प्रत्येककर्ता को पूर्ण संतोष प्राप्त हुआ और उसने मन में विचार किया कि हसन का उत्तर वास्तव में ठीक है ।

“वास्तव में यदि व्यक्ति उपरोक्त बातों का पालन करे, तो वह सुलतान से भी कहीं बड़ा सम्मानित व्यक्ति है और उन्म से उन्म पर पर पहुँच सकता है । भाग्य की विपरीतता से मनुष्य मने ही सामारिक वैभव प्राप्त न कर सके परन्तु

बादशाहत से भी अधिक मूल्यवान् आत्म-शान्ति तो अवश्य ही प्राप्त हो जाती है ।”



सुलतान बनने की योग्यता



जब बादशाह हुसैन यही पर बैठा तो किसी व्यक्ति ने उससे पूछा—“बिना इम्य और सैनिक-सामग्री के तुम बादशाह कैसे बने ?

हुसैन ने उत्तर दिया—“मित्रों का कुछ प्रेम सन्तुष्टों के प्रति उदारता प्रत्येक व्यक्ति के प्रति सम्मानना आदि इतनी सामग्री मेरे पास इस समय है और इसे मविष्य में सुरक्षित रखने का इहं संकल्प भी रखता हूँ। मेरे विचार हैं सुलतान बनने के लिये यह सामग्री पर्याप्त है।”

हुसैन ने उत्तर से प्रश्नकर्ता को पूर्ण संतोष प्राप्त हुआ और उसके मन में विचार आया कि हुसैन का उत्तर वास्तव में ठीक है।

‘वास्तव में यदि व्यक्ति उपरोक्त बातों का पालन करे तो वह सुलतान से भी कहीं बड़ा सम्मानित व्यक्ति है और उच्च से उच्च पर पर पहुँच सकता है। भाग्य की विपरीतता से मनुष्य मने ही सांसारिक जीवन प्राप्त न कर सके परन्तु

जब गाँव के व्यक्तियों को उसकी बीमारी के कारणों का पता लगा, तो उनको बहुत ही पश्चात्ताप हुआ और वे समझ गये यदि हम उस गरीब बुढ़िया की देख-रेख करते और बीमारी की दशा में उसकी चिकित्सा की व्यवस्था करते, तो इतना भयकर विनाश हमें न देखना पड़ता।

“समाज के निस्सहाय और गरीब व्यक्तियों के प्रति प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है कि मनुष्यता के नाते यथाशक्ति सहायता करें और यदि ऐसा नहीं होता है, तो एक-न-एक दिन सम्पूर्ण समाज ही हीन दशा को प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार की मानवीय भावना रखने से ही समाज उन्नति करता है और जब समाज उन्नति की ओर-अग्रसर होता है, तभी देश की बहुमुखी प्रगति होती है।”



सत्त समागम से लाभ



कभीर बुम्नामी जब हज-बाग को जाने तो पैस व्यक्तियों की शोख करने लगे जो कि हज मजार से विरक्त हो और जिसका मन सांसारिक विषयों से विरक्त होकर गुरा के प्रति लगा हो ।

हज को जाने हुए मार्ग में उनकी एक संत विज्ञा और उनकी सम्मति का सुझाव भी । धर्म-सम्बन्धी गुरा-मा बानी-बाप हुआ ।

मन ने पूछा—“बुम्नामी जी, कहाँ जा रहे हो ?

बुम्नामी बोला—“हज करने के लिये जा रहा हूँ ।”

मन ने कहा—“वास्तविक हज क्यों नहीं करते हो ?

बुम्नामी ने पुछा—“वास्तविक हज क्यों नहीं है और क्यों करना चाहिये ?”

मन ने कहा—“जीना आगना हज क्यों । उस वह स्वयं मरना है क्या लगा है । पैसम स्वयं बाबा की ओर क्यों नहीं जाने हो ?

बुस्तामी की सत की बात पर विश्वास हो गया और उसने उमी दिन से अपने हृदय को शुद्ध बनने का प्रयत्न किया। इसके पश्चात् उसने सच्चा हज 'सत समागम' को ही समझा और अपने जीवन की सफल बनाया।



१५०

मन समागम स लाय

०३
४
१

करीर बुलायी यह इन्द्र-
का श्री ॥ तैने ध्वनिसे की भोज करके लड़े आरि त्रि-
मदाल ने विनाश होर विरवा मन सोनारि विरवा
विनाश होर नुन के जैन मल्ल हो ।

इस श्री आगे हुए बर्ष के इसको लव मन दिला हो
इसको लवर्ष का लवर्ष हो । बर्ष मल्लर्ष का लव
का लव हो ।

मन के गुण—बर्ष के बर्ष का श्री हो ।

बर्ष के गुण—इन्द्र का श्री हो ।

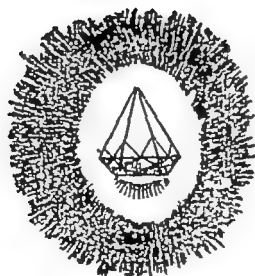
मन के गुण—बर्ष के इन्द्र का श्री हो ।

इन्द्र के गुण—बर्ष के इन्द्र का श्री हो ।
बर्ष के श्री हो ।

मन के गुण—बर्ष के इन्द्र का श्री हो ।
इन्द्र के गुण—बर्ष के इन्द्र का श्री हो ।
बर्ष के श्री हो ।

वचन में जो विद्याभ्यास का कार्य अधूरा रह गया था, उसको पूरा किया ।

सन् १८८७ में ७५ वर्ष की आयु होते हुए भी डॉक्टरेट की सम्मानित उपाधि प्राप्त की और अपना सकल्प साकार किया ।



ज्ञान पिरामा



पीपेण्ड में बोधनिष्ठ नाम का एक व्यक्ति हुआ है। उसने ब्रह्मान में आनन्दार्जन किया था परन्तु घर की धार्मिक स्थिति घरवालों से होने के कारण वह छोटी उम्र में ही बुढ़ापे का नामक-वीरगम में लग गया और ब्रह्मसम्पन्न वह इच्छानुसार विद्याध्ययन न कर सका।

सन् १८६३ में उसका देश-बन्धु बोधमातो ने मृत्यु के विषय कावे किया। मार्कमिा ने भी उस कार्यवाही में सक्रिय भाग लिया और इसके ब्रह्मसम्पन्न वह बचका गया।

माहुरारिया के बर्तमान प्रवेश में उनकी नैदानिक में रखा गया और घनेछ बन्ध दिया गये। दण्ड विधान के अनुसार निर्दोष पाये जाने पर सन् १८८३ में उनकी बिना शर्त छुड़ा कर दिया गया।

बौद्धिक क्षेत्र में रिहा होकर सीधा अपने नगर चामा और अपने विचारों को पुरा करने के लिये विद्याध्ययन में लग गया।

वचन में जो विद्याभ्यास का कार्य अधूरा रह गया था, उसको पूरा किया ।

सन् १८८७ में ७५ वर्ष की आयु होते हुए भी डॉक्टरेट की सम्मानित उपाधि प्राप्त की और अपना सकल्प साकार किया ।



अस्तंय व्रत का उच्च आदर्श



संघ और निश्चित नामक हो भाई थे। मसी के किनारे ही दोनों अपने-अपने आश्रमों में रहते थे। उनके आश्रम में अनेक प्रकार के फल-फूल सुलभ हुए थे।

एक दिन निश्चित अपने बड़े भाई संघ के आश्रम में गया। उस समय सब कार्यवस्तु बाहर रखा हुआ था। जब निश्चित को उसका भाई वहाँ उपस्थित नहीं मिला तो वह बगैर में इधर-उधर घूमने लगा।

बगैर में सुम्बर पड़े हुए फल लगे हुए थे। उसने सोचा कि भाई का ही तो गीना है इसलिये फल तोड़ने में कोई चोरी नहीं है।

वह भाई की अनुपस्थिति में ही फल तोड़ने लगा। उसी समय उसका भाई संघ बाहर से आ गया। उसने भाई को फल तोड़कर खाते हुए देखा तो बहुत शोचित हुआ।

लिखित बोला--“ये आश्रम के फल मैंने अपने ही समझ कर तोड़ लिये हैं। सुन्दर और मीठे फल देखकर मेरा मन ललचा उठा और मैंने इनको तोड़ लिया।”

शख ने क्रोध-पूर्वक कहा—“मेरी अनुपस्थिति में, विना मेरी अनुमति के फल तोड़कर खाये हैं, इसलिये तुमने चोरी का कार्य किया है। अब तुम शीघ्र से शीघ्र राजा के सम्मुख उपस्थित होकर अपना अपराध स्वीकार करो और दण्ड भोगकर प्रायश्चित्त करो।”

बड़े भाई की आज्ञा सुनकर लिखित राजा के पास गया और अपना अपराध कह सुनाया।

राजा ने कहा—“जितना अधिकार मुझे दण्ड देने का है, उतना ही क्षमा करने का भी है, इसलिये मैं तुम्हारे इस अपराध को क्षमा करता हूँ।”

राजा की बात से लिखित को सतोष नहीं हुआ और उसने राजा से उचित दण्ड देने की प्रार्थना की।

राजा ने उसे बहुत समझाया, परन्तु जब लिखित नहीं माना तो मजबूर होकर उसके हाथ की दो अंगुलियों को काट देने की आज्ञा देनी पड़ी। उस समय चोरो को ऐसा ही शारीरिक दण्ड दिया जाता था।

लिखित राज्य दण्ड पाकर भाई के पास पहुँचा और कहा—“भाई, मैंने राज-दण्ड तो भोग लिया है, अब आप मुझे क्षमा कीजिये।”

शख बोला—“भाई, तू मुझे प्राणों से भी प्यारा है। तू ने नीति के विरुद्ध आचरण किया था, इसलिये तुमको राज्य की

घोर से भयभीत हो दण्ड मियमा चाहिये था। इससे तुम को मोठि के मार्ग में हठ होने की प्रेरणा मिलेगी और मरिच्य में ऐसा प्रयत्न न हो इसकी शिक्षा भी।

“जर्म-विरुद्ध कृत्य के प्रायश्चित्त हेतु ही मैं तुमको राजा के पास भेजा था। राजा ने जो दण्ड दिया है यह ठीक ही दिया।

“अब तुम नदी के किनारे पहुँच कर तप करो। ऐसा करने से तुम पाप से मुक्त हो जाओगे। मरिच्य ने ऐसा कार्य मत करना और मन में सदा इस बात को स्मरण रखना कि बिना अनुमति के कोई भी वस्तु लेना महान् पाप है।



शत्रु की दया पर क्या जीना ?



जापान में कुमागे नाम का एक बहादुर फकीर हो गया है। वह फकीर तो था ही, परन्तु साथ ही दृढ-प्रतिज्ञ देश-भक्त भी था। वह एक अच्छा योद्धा भी था और समय पड़ने पर हाथ में तलवार लेकर मरने-मारने को भी तत्पर रहता था। उसका नाम सुनकर बड़े-बड़े योद्धा भी काँप उठते थे।

एक बार जापान में सुनानीरा नामक मैदान पर भयकर लड़ाई हुई। देश-भक्त कुमागे भी तलवार लेकर लड़ाई के मैदान में पहुँचा।

कुमागे ने शत्रु-पक्ष के एक वीर युवक शत्रु को पकड़ लिया और उसके हाथ-पैर बाँध दिये।

कुमागे ने उससे पूछा—“तुम्हारा क्या नाम है ?”

युवक ने उत्तर दिया—“तुम चाहो, तो मेरा सर काट सकते हो, लेकिन अपना नाम नहीं बतलाऊँगा।”

युवक का हड़ता-पूर्वक उत्तर सुनकर व उसकी मुवावत्ता को देखकर कुमारे को क्या था गई। उसने युवक को मुक्त करते हुए कहा—“मुझे तुम्हारे ऊपर क्या था गई है। इसलिए अब तुम्हारा सब नहीं करूँगा। अब तुम निर्भय अपने घर जा सकते हो। क्योंकि तुम्हारे माता-पिता तुम्हारे विधोय में व्याकुल होये इसलिए धीमे घर पहुँचो जिससे उनको संतोष की लस मिले।

कुमारे को बात सुनकर युवक हड़ता-पूर्वक ने उत्तर दिया—“मैं आपका शत्रु हूँ, इसलिए मुझे आपकी क्या मही चाहिये। आपको क्या पर जीवन व्यतीत करने से तो आपके हाथों से मृत्यु को प्राप्त होना कहीं अधिक अच्छा है। मैं युद्ध-क्षेत्र से परावृत्त होकर अपने माता-पिता को अपना दुःख नहीं दिखाना चाहता हूँ। मेरे साथी भी मुझे कायर समझ कर बिकारेंगे।”

युवक ने आगे कहा—“यदि मुझे आपने बन्दी नहीं बनाया होता तो मैं अन्तिम दम तक युद्ध-क्षेत्र में लड़ता और कभी भी रक्त-शुद्धि से पीठ दिखा कर नहीं माफता। अब आप विलम्ब मत कीजिये और तुरन्त ही मेरी गर्दन उड़ा दीजिये।

कुमारे को सबबुर होकर उसका घर काटना पड़ा और वह युवक सदा के लिये इस असार ससार से बिछा हो गया।

“धर्म है—ऐसे धातम-रक्षापी वेश-सेवकों को जिनको अपनी मानु-शुद्धि की भाग-भर्यावा और धातम-मौरव की इतनी चिन्ता होती है और जो वेश वर्म और भाति पर अपना जीवन सूर्य बलिदान करने के परनाम्न वैलवाधियों के मन में सदा के लिये अमर बन जाते हैं।”



महात्मा गांधी की असाधारण क्षमा :



जिस समय गांधी जी अफ्रीका में थे, उस समय बहुत से भारतीय सरकार के साथ अपने अधिकारों की सुरक्षा के लिये लड़ रहे थे। वहाँ की सरकार प्रवासी भारतवासियों पर मनमाने अत्याचार कर रही थी, इसलिये अनेक भारतवासियों इन अत्याचारों का विरोध करके अपने अधिकारों की माँग कर रहे थे। गांधी जी के नेतृत्व में ही यह सब कुछ कार्यवाही हो रही थी।

संघर्ष के फलस्वरूप अफ्रीका की गोरी सरकार कुछ हुई और गांधी जी भी स्थायी समाधान को तैयार हो गये। उस समय सभी हिन्दू और मुसलमान महात्मा जी के झंडे के नीचे थे।

एक दिन एक पठान को कुछ भ्रम हुआ कि गांधी जी सरकार के सम्मुख झुक गये हैं। पठान इस बात को सहन न कर सका और वह इतने आवेश में आ गया कि उसने गांधी जी को बहुत बुरा-भला कहा और पीटा भी।

गांधी जी पर इतनी मार पड़ी थी कि महीनों तक वे चारपाई पर पड़े रहे। लोगो ने बहुत कहा कि पठान के विरुद्ध कानूनी कार्रवाई करनी चाहिए, परन्तु गांधी जी ने सब की बात अनुसूची कर दी और पठान के विरुद्ध कोई भी कार्रवाई करने को तैयार न हुए।

एक दिन वह पठान साफर मांजी जी के चरणों में बिर पड़ा और रोने लगा। उस समय उसको विश्वास हो गया कि मांजी जी जो कुंछ भी कर रहे थे वह सब कुछ हमारे हित में ही था।

गांधी जी भी सभी मांति समझते थे कि पठान ने जो भी प्रविष्ट व्यवहार किया है वह किसी बुरे मान से नहीं किया बल्कि समझ की कमी के कारण ही किया है।

गांधी जी ने पठान को उठाकर पसे लगा लिया और उसे सुईय क्षमा प्रदान की। इस क्षमा भाव का उस पठान पर ऐसा अद्भुत प्रभाव पड़ा कि वह उसी क्षण ही गांधी की मन-मन-मन बन गया और उनके मन-सेवा कार्यक्रम में उन मन-मन में योग देने लगा।



भारतीय नरेशों को गांधी जी का उपदेश :



बनारस
हिन्दू विश्व-विद्यालय की आधार-शिला का शुभ महोत्सव होने वाला था। पंडित मदनमोहन मालवीय ने बहुत बड़े आयोजन की तैयारी की थी।

देश के प्रसिद्ध विद्वान्, साहित्यकार, पत्रकार, अधिकारी, नेता व भारतीय नरेश भी इस अवसर पर एकत्रित हुए थे।

राजा-महाराजा इस पुण्य अवसर पर अपनी शाही पोशाक में आये थे। हीरे-मोती और जवाहिरात आदि बहुमूल्य अलंकार भी राजाओं ने धारण किए हुए थे।

उस अवसर पर जो भी विदेशी वहाँ पर विद्यमान थे, उनको ऐसा आभास हो रहा था कि भारतवर्ष के दरिद्र होने की जो बात कही जाती है, वह असत्य है।

महात्मा गांधी पर राजा-महाराजाओं की इस तडक-भडक और शान-शौकत का बहुत असर पड़ा। इसलिए महात्मा जी ने

राजा-महाराजाओं को सम्बोधित करते हुए जो कुछ कहा वह निम्न प्रकार है—

‘माइयो ये जो बहुमुख्य हीरे-जवाहिरात के धामूपरण धारण किए हुए हैं, ये हमारे बरोबर देश में सोमा नहीं देते हैं। इसलिये धाप इनको उतार दीजिए और गरीबों की सेवा में लगा दीजिए। इस देश में हम प्रतिशत व्यक्ति दीन और गरीब हैं इसलिये धाप लोगों को जन-साधारण के बीच ऐसे धामूपरणों को बरण-करके नहीं बैठना चाहिए। इस प्रकार के धामूपरणों से धापका सम्मान नहीं है बल्कि अपमान है।

‘धाप लोगों के पास जो भी धन है वह धापका नहीं बल्कि भारत की पवित्र जनता की बरोहर है इसलिये किसी कार्य में उसे नहीं लगाना चाहिए। राजा-महाराजाओं की सम्पत्ति यदि जन-साधारण के संकट के बखस पर उपयोग में लाई जाय तो उत्तम है।



उत्तर में मेरो ने कहा— मैं अपने कमरे में केवल आवश्यक वस्तुएँ ही रखती हूँ इसलिए मुझे कमरे की सफाई-व्यवस्था में अधिक समय नहीं मराना पड़ता है। इसके अतिरिक्त मुझे जो भी समय जब-तब मिलता है उसका सदुपयोग कपड़ों की सिलाई में करती हूँ और उससे जो लाभ होती है उसका उपयोग परीशों की सहायता में करती हूँ। इस प्रकार के कार्य से मेरे मन को खान्ति मिलती है। समय का भी सदुपयोग हो जाता है।

महारानी मैरी की इस धार्ष्ट्यमय जीवन-वर्षा को सुनकर प्रसन्नकर्ता तथा अन्य भावियों को बहुत ही आश्चर्य हुआ और वे यह अनुमन करने लगे कि यदि धार का व्यक्ति भी इस धार्ष्ट्य के प्रति ठनिक भी ध्यान दे और इसका एक सताँस भी पूरा करने का प्रयत्न करे तो सर्वत्र सुख-खान्ति का साम्राज्य स्थापित हो जाए।



